RNI No. MPHIN/2008/25073 डाक प्रेषण : प्रतिमाह की 7 तारीख डाक पंजीयन क्रमांक मालवा डिवीजन/324/2019-2021

प्रेषक : मुकेश वर्मा (प्रधान संपादक)
'समावर्तन' (हिन्दी मासिक)
माधवी, 129, दशहरा मैदान
उज्जैन (म.प्र.) 456 010

पुस्त–प्रेष्य

यहां पते चिपकाएं

स्वामी, प्रकाशक और मुद्रक अजय भट्टाचार्य द्वारा आकृति ऑफसेट, 5 नईपेठ, उज्जैन से मुद्रित एवं माधवी 129, दशहरा मैदान, उज्जैन से प्रकाशित। सम्पादक : श्रीराम दवे।

11 वर्षों से अनवरत प्रकाशित 132 वाँ अंक

ISSN - 2348-8638

समावर्तन

मासिक पत्रिका

वर्ष 11 ■ अंक 12 ■ पूर्णांक 132 ■ मार्च 2019 ■ ₹ 60/– (व्यक्ति) ₹50/– (संस्था)

रंगशीर्ष

अनगढ़ वस्तु को सुन्दर आकार केवल कलाकार ही दे सकता है।
– शिवकुमारी जोशी

लोकराग-37

(लोक संस्कृति को समर्पित अर्द्धवार्षिक स्तम्भ)

लोकभूमि : श्रीराम दवे
लोक परम्पराएं-लोक मान्यताएं : निर्मला डोसी
खेती किसानी का महापर्व गणगोर : सुमन चौरे
छत्तीसगढ़ की लोक संस्कृति में -
लोक नाट्य माचा : श्रीमती भगवती साहू
बुंदेली वसन्त गीत : रमेश तिवारी
श्रद्धांजली स्व.मदनमोहन व्यास : डॉ.शिव चौरसिया

सरोकार

हिन्दी बाल साहित्य को लंबे समय तक दूसरे दर्जे का साहित्य समझा गया...।
– परशुराम शुक्ल

अभिमुख : रमेश दवे
अनन्तिम : मुकेश वर्मा
मेरा नमन : अजय भट्टाचार्य
रेखांकित : अनामिका चक्रवर्ती की कविताएँ
चयन : निरंजन श्रोत्रिय

समकाल-कथाकाल
मनोज कुमार पांडेय की कहानी : पुरोहित जिसने मछलियाँ पालीं
चयन : मुकेश वर्मा

कविताएँ : रश्मि रमानी, धर्मपाल महेन्द्र जैन, अशोक गीते
कहानियाँ : नया साल: देवांशु पाल, चिल्ड्रन पार्क : राजेश सक्सेना
लघुकथाएँ : सरस निर्मोही, कमल चौपड़ा

विशेष आलेख : राग दरबारी के पचास वर्ष
जीवनसिंह ठाकुर
प्रथम पृष्ठ, वीक्षा, साहित्यिक हलचल, नई किताबें

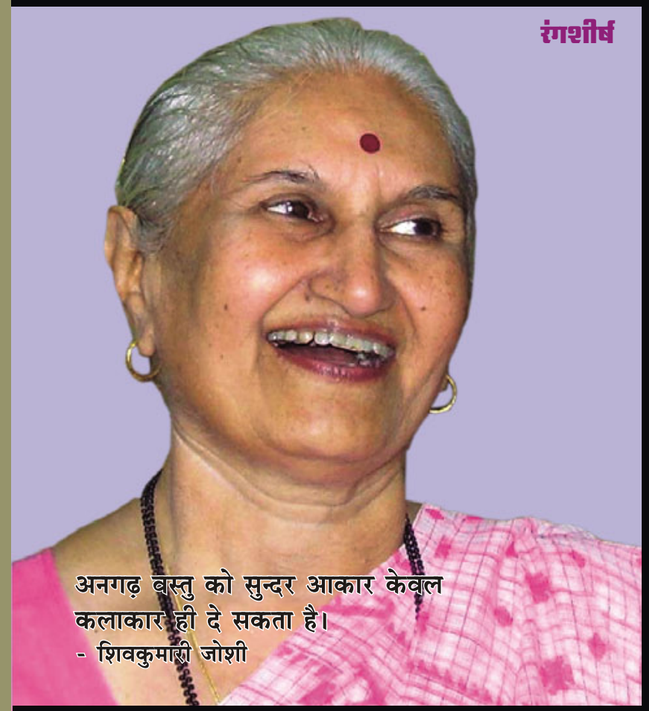

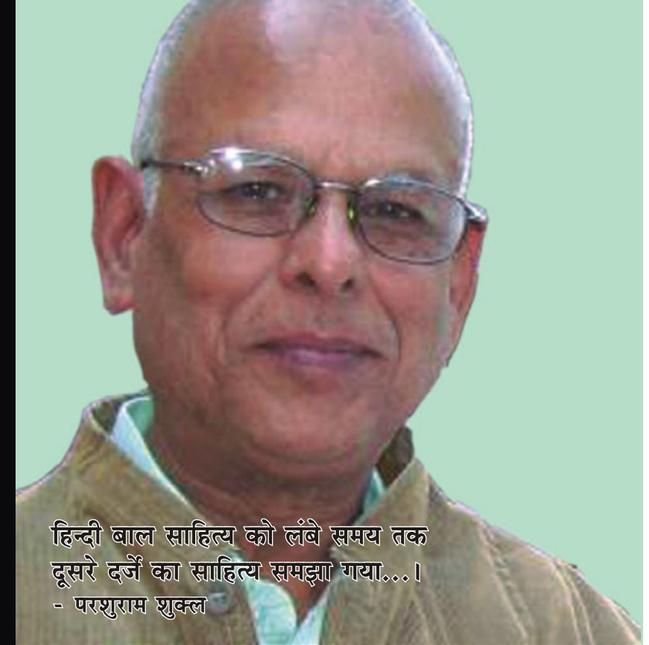

ISSN - 2348-8638

वर्ष 11 ■ अंक 12 ■ पूर्णांक 132 ■ मार्च 2019 ■ रू. 60/- (व्यक्ति) रू. 150/- (संस्था)

समावर्तन

मासिक पत्रिका

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नयीदिल्ली द्वारा मान्यता प्राप्त
दुष्यंत कुमार स्मारक पाण्डुलिपि संग्रहालय भोपाल द्वारा कमलेश्वर पुरस्कार वर्ष -2010
महाराष्ट्र राज्य हिन्दी साहित्य अकादमी द्वारा मान्यता प्राप्त

सम्पादक मण्डल

संस्थापक : सम्पादन समन्वयक
प्रभातकुमार भट्टाचार्य, उज्जैन

अध्यक्ष : सम्पादक मण्डल
रमेश दवे, भोपाल
मो. 94065 23071

निदेशक प्रबन्धन
रमेश सोनी, इन्दौर
मो. 99264 97611

प्रधान सम्पादक
मुकेश वर्मा, भोपाल
मो. 94250 14166

मुख्य सम्पादक
निरंजन श्रोत्रिय, गुना
मो. 98270 07736

सम्पादक
श्रीराम दवे, उज्जैन
मो. 94259 15010

कार्यकारी सम्पादक
हरीशकुमार सिंह, उज्जैन
मो. 94254 81195

प्रबन्ध सम्पादक
सदाशिव कौतुक, इन्दौर
मो. 98930 34149

कला सम्पादक
अक्षय आमेरिया, उज्जैन
फो. 0734 2561120

जनसम्पर्क अधिकारी
प्रकाश बांठिया, उज्जैन
मो.98260 69558

सह सम्पादक
राजीव शुक्ला (संस्कृति), इन्दौर
निवेदिता वर्मा (सरोकार), उज्जैन
राधेश्याम मिश्र (प्रबन्ध), उज्जैन

सहायक सम्पादक
वाणी दवे शर्मा, हरदीप दायले, उज्जैन

कार्यालय सहायक
संजय मालवीय,उज्जैन

सम्पादक मण्डल के सभी पद अवैतनिक है।

सम्पादकीय : प्रकाशकीय कार्यालय
''माधवी'', 129, दशहरा मैदान,
उज्जैन (म.प्र.) 456010
फोन : 0734 2524457
(समय प्रातः 10 से 2 बजे तक)
ईमेल : samavartan@yahoo.com
वेबसाइट : www.samavartan.com

सह संस्थापक : सम्पादन परामर्शी
अभिलाष भट्टाचार्य, मुम्बई

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक
डॉ. अजय भट्टाचार्य, सूरत

मुख्य संरक्षक
संतोष चौबे, भोपाल

संरक्षकद्वय
ओम अमरनाथ, उज्जैन
राजू पटेल, मुम्बई

परामर्श मण्डल
गिरिराज किशोर (कानपुर), रश्मि वाजपेयी (दिल्ली), नन्दकिशोर नौटियाल (मुम्बई), विश्वनाथ सचदेव (मुम्बई), सादिक (दिल्ली), मंजु तिवारी (भोपाल), उर्मिला शिरीष (भोपाल), महेन्द्र गगन (भोपाल), सत्यमोहन वर्मा (दमोह)

समावर्तन का मूल्य
व्यक्तिगत सदस्यता प्रति अंक : 60 रु. वार्षिक : 600/- संस्थागत प्रति अंक 150/- वार्षिक 1500/-
विदेश के लिए प्रति अंक : 10 $ वार्षिक : 100/- $

चेक पर केवल 'समावर्तन' लिखें तथा चेक अथवा मनिआर्डर निम्नलिखित पते पर भेजें
डॉ.प्रभातकुमार भट्टाचार्य
''माधवी'', 129, दशहरा मैदान, उज्जैन (म.प्र.) 456010

समावर्तन का संचालक मण्डल
प्रनति भट्टाचार्य - अध्यक्ष, उज्जैन
कृष्णा बैनर्जी - संचालक, मुम्बई
तुहिन भट्टाचार्य - प्रबंध संचालक,सूरत

विशेष सम्पादक- वक्रोक्ति
सूर्यकान्त नागर, इन्दौर मो. 98938 10050

विशेष सम्पादक- नाट्यराग
भारतरत्न भार्गव - नयीदिल्ली, मो.98116 21626

विशेष परामर्शी - घरोंदे
प्रतापसिंह सोढ़ी, इन्दौर, मो.94795 60623

विशेष परामर्शी -लोकराग
शिव चौरसिया, उज्जैन, मो. 97700 78000

निदेशक - समावर्तन संकुल (प्रतिनिधि मण्डल)
प्रकाश रघुवंशी, उज्जैन, मो. 94250 91114

विशेष सम्पादक- साहित्य विचार
शैलेन्द्रकुमार शर्मा, उज्जैन मो. 98260 47765

दिल्ली ब्यूरो चीफ
परवेज़ अहमद
219, समाचार अपार्टमेन्ट मयूर विहार फेज़-1
दिल्ली-110054, मो. 098111 -54371

मुद्रणालय : आकृति ऑफसेट, 5 नईपेठ, उज्जैन (म.प्र.)

© सर्वाधिकार सुरक्षित
प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए लेखक एवं प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है।
प्रकाशित रचनाओं के विचार से 'समावर्तन' का सहमत होना आवश्यक नहीं।
समस्त विवाद उज्जैन न्यायालय के अन्तर्गत विचारणीय।

समावर्तन

मार्च -2019

इस अंक में

प्रथम पृष्ठ : हे विराट! तुम्हारी जय हो : मुरलीधर चाँदनीवाला 05

अभिमुख : नामवरसिंह : एक आलोचना पुरुष का इतिहास हो जाना : रमेश दवे 06

मेरा नमन : इनसे मिलिये : अजय भट्टाचार्य 07

रंगशीर्ष

श्रीमती शिवकुमारी जोशी

परिचय : श्रीमती शिवकुमारी जोशी : 08

कला और कलाकार : श्रीमती शिवकुमारी जोशी : 09

परिजनों की दृष्टि में : 11

उनमें कलाकार और कलागुरु का

समन्वित रूप था : जगदीशचन्द्र पण्ड्या : 13

सुधिजनों की दृष्टि में शिवकुमारी जी का कृतित्व : 15

साक्षात्कार : शिवकुमारी जोशी से श्रीराम दवे की बातचीत : 16

सरोकार

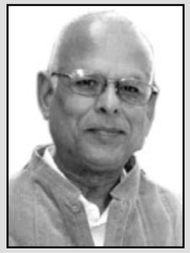

परशुराम शुक्ल

परिचय : परशुराम शुक्ल : 23

आत्मकथ्य : आज का बालक....परशुराम शुक्ल : 24

बाल कहानी : कम्प्यूटर मानव : 25

बाल-साहित्य के प्रति.....: शिवकुमार मिश्र : 28

सुधीजनों की दृष्टि में शुक्लजी : 29

साक्षात्कार : परशुराम शुक्ल से श्यामबिहारी श्रीवास्तव से बातचीत : 30

रेखांकित : अनामिका चक्रवर्ती की कविताएँ : चयन : निरंजन श्रोत्रिय :18 लघुकथाएँ : सरस निर्मोही, कमल चौपड़ा : 21

विशेष आलेख : 'राग दरबारी' के पचास वर्ष : जीवनसिंह ठाकुर : 22

कहानियाँ : नया साल : देवांशु पाल 39, चिल्ड्रन पार्क : राजेश सक्सेना : 40 चिट्ठी-पत्री : 41

कविताएँ : रश्मि रमानी, धर्मपाल महेंद्र जैन, अशोक गीते : 42

लोकराग- 37

(समावर्तन के अधबीच लोक संस्कृति केन्द्रित अर्द्धवार्षिक स्तंभ) 44-53

समकाल-कथाकाल : मनोज कुमार पांडेय की कहानी : 'पुरोहित जिसने मछलियाँ पालीं' : चयन : मुकेश वर्मा : 54

वीक्षा : रमेश दवे, सूर्यकांत नागर, देवेन्द्र जोशी : 63, नई किताबें : श्रीराम दवे : 67

साहित्यिक हलचल : 68, अनंतिम : मुकेश वर्मा : 70

अक्षर विन्यास : विवेक शर्मा * मुद्रण संशोधक : गरिमा दवे * रेखांकन : संदीप राशिनकर

प्रथम पृष्ठ

हे विराट! तुम्हारी जय हो

ऋग्वेद के दशम मंडल का हिरण्यगर्भ सूक्त मनुष्य की अन्तर्यात्रा के अभियान का घोषणापत्र है। यहीं पर हमें वह बीज मिलता है, जो उपनिषदों की उर्वर भूमि में गिरकर उस विशाल वटवृक्ष में अभिव्यक्त हुआ,जिसकी छाया में महान् संस्कृति पोषित हुई, और भारतवर्ष का स्वाभिमान चरितार्थ हुआ। हिरण्यगर्भ सूक्त में कुल दस ऋचाएँ हैं, और वे सभी त्रिष्टुप् छंद में। इस सूक्त की महिमा अब भी वही है, जो वैदिककाल में रही होगी। यही है वह सूक्त,जिसने विराट सत्य को सबसे पहले सर्वोच्च घोषित किया ।

हिरण्यगर्भः समवर्ततााग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

ऋग्वेद,10.121.1

ज्योति को गर्भ में रख कर
सबसे पहले तुम आये,
भौतिक सत्ताओं के स्वामी !
पृथ्वी का भार तुमने उठाया,
तुमने ही उठा रखा यह द्युमान।
हे विराट ! तुम्हारी जय हो।।1।।

आत्मा दी तुमने,
तुमने ही दिया अमित बल,
विश्व तुम्हारी चर्या में अहोरात्र,
देव तुम्हारे अनुशासन में,
तुम्हारी छाया है अमृत,
तुम्हारी छाया है मृत्यु।
हे विराट ! तुम्हारी जय हो।।2।।

जगत के प्राण तुम्हारे अधीन,
पलकों का झपकना तुम्हारी इच्छा,
तुम एक ही राजा ; एक जगदीश्वर
द्विपदों,चतुष्पदों के।
हे विराट ! तुम्हारी जय हो।।3।।

हिमालय तुम्हारी महिमा का स्मारक है,
पृथ्वी को आँचल में समेटे हुए समुद्र
तुम्हारी विशालता का महाघोष,
तुम्हारे दिव्य अस्त्रों को उठाये खड़ी हैं
दसों दिशाएँ ।
हे विराट ! तुम्हारी जय हो।।4।।

तुमसे है ज्योतिर्मय दिव्यलोक,
तुमसे ही सुदृढ़यह मातृभूमि,
तुमने ही थामा सूर्य,
तुमने ही रची स्वर्ग की रंगशाला,
यह अंतरिक्ष तुम्हारा ही शिल्प,
बरसती सघन वाष्पधाराएँ तुम्हारी ही।
हे विराट ! तुम्हारी जय हो।।5।।

टकटकी लगाये खड़ी हुई है
द्यावा पृथिवी अनंत में,
मन के निर्मल पृष्ठ पर खड़े तुम
और तुम्हारे भीतर से उग आता सूरज।
हे विराट ! तुम्हारी जय हो।।6।।

तुम महिमाशाली
अपने भीतर विश्व को समेटे हुए
अग्नि -पुरूषोत्तम हो,
तुम ही सब देवों के महाप्राण।
हे विराट ! तुम्हारी जय हो।।7।।

तुम्हारी महिमा से
यज्ञ ने जन्म लिया,
तुम सब देवों में हो एक अद्वितीय।
हे विराट ! तुम्हारी जय हो।।8।।

तुमने ही पार्थिवता को जन्म दिया,
हे सत्यधर्म ! इसे कभी नष्ट न करना,
तुमसे ही प्रगट हुईं जो दिव्यताएँ
उनकी रक्षा करना।
तुमसे ही आनंदब्रह्म,
तुमसे ही उपजी महाज्योति।
हे विराट ! तुम्हारी जय हो।।9।।

तुमसे भिन्न नहीं कोई ,हे प्रजापते !
सब लोकों में तुम ही रमे हो।
हमारी अभीप्सा पूर्ण हो,
जो समर्पण है, सदा सम्पूर्ण हो,
हम सुपात्र बनें
तुम्हारे वरदानों को पाने के लिये ।

डॉ.मुरलीधर चाँदनीवाला
मधुपर्क, 7, प्रियदर्शिनीनगर, रतलाम

नामवरसिंह : एक आलोचना-पुरुष का इतिहास हो जाना

रमेश दवे

वर्ष 2019 ने दो महान व्यक्तित्वों को हमसे छीन लिया। एक कथाकार कृष्णा सोबती और दूसरा कथा-आलोचना के संभवतया प्रथम प्रामाणिक आलोचक नामवरसिंह। मंगलवार 19 फरवरी 2019 की आधी रात बीतने से पहले नामवरसिंह की श्वास छीन गई। 20 फरवरी 2019 बुधवार को एक महान समीक्षक की प्रबुद्ध बेटी समीक्षा ने नामवर जी के न रहने की सूचना क्या दी, शब्द सिहर उठे और साहित्यकार मनही मन रो पड़े।

नामवरसिंह अब केवल एक नाम नहीं, बल्कि उनका एक इतिहास हो जाना है। वे नहीं रहे, इस पर विश्वास ही नहीं होता। उनका जाना, ऐसा लगता जैसे हिन्दी की साहित्यिक-आलोचना अनाथ हो गई है। क्या विवेक था, क्या ही प्रत्युत्पनन मति थी, कितने मुखर एवं स्पष्टतवादिता थी, क्या ऐसे व्यक्तित्व को पुनः पाना अब संभव है? प्रगाढ़, अध्ययन, प्रखर वाणी और परम-प्रतापी वर्चस्व से उन्होंने हिन्दी आलोचना को भी बड़ा व्यक्तित्व और अस्तित्व प्रदान किया था। वे जब बोलते, विमर्श करते या विषय-बद्ध व्याख्यान देते थे तो जहाँ एक और हमारा वाङ्मय उनके शब्दों में सार्थक हो जाता था और न केवल हिन्दी बल्कि भारतीय एवं विश्व-साहित्य उनकी मौलिक स्थापनाओं के साथ संदर्भवान हो उठता था।

नामवर जी प्रतिबद्ध आस्था के साथ प्रगतिशील और जनवादी विचारवादा को अपनी समीक्षा-संवेदना से आज़माते तो अवश्य थे लेकिन उनके लिए समाजवादी या साम्यवादी विचार अगर महत्त्वपूर्ण था तो मार्क्स का विकल्प वे महात्मा गांधी में भी देखते थे। गांधी के बारे में तो यह कहा ही जाता है कि वे 'हिंसा-विहीन मार्क्सवादी' थे। नामवरसिंह ने इन दोनों हस्तियों से भी अपनी हस्ती हासिल न करके, उनकी सम्यक-समालोचना से अपने प्रथक चिन्तन से हौसला हासिल किया था जिसका परिणाम था उनके द्वारा कविता के प्रतिमान जैसी मौलिक समालोचना कृति का सृजन, हिन्दी को उसकी ऐतिहासिकता में देखने का विवेक और कथा-आलोचना को काव्य-शास्त्रीय आलोचना के प्रतिमानों से मुक्त कर कथा-गद्य को आंकने की नई दृष्टि। भले ही यह कहा जाता हो कि कथा-आलोचना के प्रथम-प्रस्थान-पुरुष स्व.देवीशंकर अवस्थी माने जाते रहे, लेकिन यह भी माना जाता है कि कथा-आलोचना की प्रथम वस्तुनिष्ठ समालोचना की सार्थक जमीन नामवरसिंह ने ही रची थी। उन्होंने जब निर्मल वर्मा की 'परिन्दे' कहानी से नई कहानी का शुभारंभ माना तो असहमति तो हुई लेकिन यह नामवरसिंह का ऐसा ईमानदार आंकलन था जो विचारधारा की कट्टरता से मुक्त था।

एक सादगी भरे लिबास में चलता-फिरता ग्रामीण व्यक्ति साहित्य की भूमि पर अपने कलम का हल चलाकर उसे हरा-भरा, समृद्ध और उपजाऊ कैसे बनाता है, यह जानकर आलोचना को अपना लेखन बनाने वाली समकालीन पाढ़ी प्रेरणा ले सकती है। देशज-चेतना, लोक-चेतना और वैचारिक आधुनिक चेतना के जिस समन्वय को नामवर अपने भीतर जीते थे उससे उनके व्यक्तित्व की उदारता का विस्तार और प्रभाव हुआ था। वे ऐसे समय में थे जब उनके प्रारंभिक प्रस्थान समय में एक ओर रामचन्द्र शुक्ल का दबदबा था और समकाल में उनके समक्ष डॉ.रामविलास शर्मा, डॉ.रामस्वरूप चतुर्वेदी एवं निर्मला जैन जैसे दिग्गज आलोचक थे तो दूसरी ओर साहित्य-सर्जक जैनेन्द्र कुमार, रेणु, अज्ञेय, मुक्तिबोध, नागार्जुन भी उनकी समीक्षा के समक्ष खड़े थे सिर्फ इसलिए कि नामवर उनको लेकर क्या सोचते और बोलते या लिखते हैं। छायावाद की छाया पूरी तरह विलुप्त नहीं हुई थी और छायावाद के चारों स्तंभों को भी नामवर देख और पढ़चुके थे, पढ़ा चुके थे। प्रगतिशील आंदोलन उनके जीवनकाल में ही आया, परिमल उनके सामने सर्जक-समूह बना और हिन्दी साहित्य मार्क्सवादी और गैर-मार्क्सवादी धाराओं में भी उनके सामने ही दो फांको में मौजूद थे मगर नामवर उनके अनेक बार प्रगतिशील एवं मार्क्सवादी धारा के प्रबल प्रेरक होते हुए भी, जब भी निरपेक्ष-निष्पक्ष मन से विचार करते थे तो अपने ही पक्ष का प्रतिपक्ष बन जाते थे, प्रतिबद्धों की जड़ता खंडित कर उन्हें डाँट भी देते थे और साहित्यिक-पाखण्डों से मुक्त उदारता से सर्जक को चेताते थे। वे शब्दों के संदर्भ, अर्थ, प्रसंग और औचित्य में इतने कसे हुए थे कि अधिकतर में संज्ञाओं में ही बोलते थे और विशेषणों से कभी कभी भटकने के बावजूद शीघ्र ही संज्ञापदों व क्रियापदों पर लौट आते थे। शायद वे गांधी के इस विचार को मानते रहे हों कि 'विशेषणों' ने हमारी संज्ञाओं को खराब कर दिया है। इसी वजह से कभी कभी विशेषणों का प्रयोग वे व्यंग्य-मुद्रा में करते थे।

एक ऐसे प्रतापी प्रगल्भ व्यक्तित्व का जाना, एक नाम और उनसे जुड़े 'वर' शब्द में श्रेष्ठता के प्रतीक का जाना, उनका भौतिक व्यक्तित्व सें मुक्त होकर स्मृति-व्यक्तित्व बनना, हिन्दी ही नहीं भारतीय भाषाओं के लिए भी एक संजीदा सदमा है लेकिन नामवर अपने पढ़े जाने में जीवित रहेंगे, इतिहास की स्वर्ण-भूमि पर चमकते रहेंगे और पीढ़ियों तक प्रेरणा पुरुष बने रहेंगे। उन्हें समावर्तन का सलाम, समस्त समावर्तन सहयोगियों का प्रणाम और सारे हिन्दी समाज की सादर श्रद्धांजली।

यह अंक अपने प्रारंभिक पृष्ठ अभिमुख में जहाँ नामवरसिंह की स्मृति को समर्पित है वहीं कृष्णा सोबती का भी पुनः स्मरण करता है। दोनों महान विभूतियों का जाना अपूरणीय क्षति तो है लेकिन शब्दजीवियों के पास शब्दों के अलावा है ही क्या? हम नामवरजी को अपनी भाषा में सदैव जीवित रखेंगे।

इस अंक में बाल साहित्य के लिए समर्पित रहने वाले कवि कथाकार श्री परशुराम शुक्ल के कृतित्व को 'सरोकार' से संयोजित किया गया है तो रंगशीर्ष में ख्यात चित्रकार और कलागुरु स्व.शिवकुमारी जोशी के कृतित्व पर महत्त्वपूर्ण सामग्री दी जा रही है। लोक साहित्य को समर्पित अर्द्धवार्षिक स्तंभ 'लोकराग' भी इस अंक को समृद्ध कर रहा है।

(अध्यक्ष, सम्पादक-मण्डल)
मो.94065-23071

इनसे मिलिये ....

डॉ.अजय भट्टाचार्य
स्वामी-प्रकाशक-मुद्रक 'समावर्तन'

राजेश सक्सेना

समावर्तन का अनवरत प्रकाशित होते रहना तथा ग्यारह वर्षों की यात्रा कर बारहवें वर्ष में प्रवेश की तैयारी करना हमारे बाबा (डॉ.प्रभातकुमार भट्टाचार्य) के स्वप्न के चरितार्थ होने तथा एक साहित्यिक संकल्प के पूर्ण होने की पराकाष्ठा है। बिना किसी शासकीय सहयोग के एक साहित्यिक पत्रिका का यों प्रकाशित होते रहना बाबा के सहयोगियों, शुभचिंतकों और सृजनधर्मियों के सहयोग का ही प्रतिफल है।

समावर्तन के नियमित रचनाकारों में श्री राजेश सक्सेना जी है जिनकी रचनाधर्मिता और समावर्तन को उनके सहयोग के बारे में समावर्तन के संपादक भाई साहब श्रीराम दवे जी कुछ इस तरह बता रहे हैं-

''आईटीआई (विद्युत), विद्युत अभियांत्रिकी में पत्रोपाधि तथा हिन्दी साहित्य में परास्नातक श्री राजेश सक्सेना एक सतर्क और मुखर कवि हैं। गलत को गलत कहने का माद्दा और साहस होने के कारण भीड़ में अलग नज़र आने वाला यह युवा कवि कई वर्षों तक म.प्र. साहित्य अकादमी द्वारा संचालित पाठक मंच का संयोजक तथा प्रगतिशील लेखक संघ उज्जैन के महासचिव के रूप में अपनी साहित्यिक समझ और श्रेष्ठता को द्विगुणित करता रहा है। देश-प्रदेश की कई लब्ध प्रतिष्ठित पत्रिकाओं और दैनिक अखबारों में उनकी कई कविताएं प्रकाशित तथा आकाशवाणी और दूरदर्शन से प्रसारित होती रही है। इधर गद्य लेखन विशेषकर पुस्तक समीक्षा में भी उनकी नीर-क्षीण दृष्टि देखी जा सकती है। हाल ही में उन्होंने कहानी लेखन की ओर भी कदम बढ़ाये हैं।

वर्ष 2006 में मध्यप्रदेश साहित्य अकादमी द्वारा चयनित पांडुलिपि के अंतर्गत उनका एक कविता संग्रह 'उनके जीवन का मालकौंस' अत्यन्त चर्चित और प्रशंसित रहा है। अपने अनूठे शब्द बिम्बों, स्मृतियों, जीवन के छोटे-छोटे लमहों, वस्तुओं/घटनाओं को जिस तरह वे काव्यशिल्प में ढालते हैं वह अद्भुत हैं। म.प्र.पॉवर ट्रांसमिशन कंपनी में वरिष्ठ परीक्षण सहायक जैसे उत्तर दायित्व से परिपूर्ण तकनीकी कार्य करते हुए भी साहित्य के प्रति उनका रूझान सृजन, चिन्तन और समर्पण प्रशंसनीय है।

समावर्तन को लेखकीय अवदान के साथ-साथ इसके कुछ स्तम्भों के लिए आवश्यक सामग्री जुटाने में सहयोग करने वाले भाई राजेश सक्सेना सदैव निर्विकार और सक्रिय बने रहें। उनके उज्ज्वल भविष्य के प्रति मंगलकामनाएँ।''

श्रीमती शिवकुमारी जोशी

जन्म - 15 नवम्बर 1935

पिता - स्व. डॉ. गिरिराजसिंह जी जवासिया (जि. देवास)

माता - स्व. श्रीमती भीष्मकुमारी जी

उच्च शिक्षा - एम.ए. स्वर्ण पदक अलीगढ़, आगरा विश्वविद्यालय आगरा 1962, बी.एड्. वि.वि. उज्जैन 1963, फ्रेंस्को म्यूरल वनस्थली- (राजस्थान) 1960, डिप्लोमा महाराष्ट्र जे.जे. स्कूल ऑफ आर्ट 1966

गायन - तृतीय वर्ष उत्तीर्ण शिक्षा विभाग मध्यभारत 1954

एकल प्रदर्शनी - (1) माधव महाविद्यालय उज्जैन 1965 उद्घाटन राजमाता सिन्धिया, (2) सीता कला दीर्घा वाकणकर शोध संस्थान 1998 (3) नव संवत् - नव विचार 2013, कला वीथिका कलिदास अकादमी उज्जैन

समूह प्रदर्शनी - अ.भा. कालिदास चित्र एवं मूर्तिकला प्रदर्शनी 1958-1967 * रिद्म आई सोसायटी भोपाल 1966 काठमाण्डू नेपाल 1967 * प्रतिकल्पा प्रदर्शनी 1968 * उज्जैन माधव महाविद्यालय 1968 * 2002 जय बांगला प्रदर्शनी इन्दौर 1971

कार्यशाला एवं कला-शिविर * अ.भा. समर स्कूल जबलपुर 1972, फ्रेस्को तकनीक कैम्प खैरागढ़* कलावर्त न्यास 1997, 1998 * मानव संकेत अकादमी उज्जैन * 2002, 2004 कालिदास अकादमी शिविर 2003

सम्मान - श्रेष्ठ महिला कलाकार सम्मान श्रीमती राजमाता सिन्धिया जन्म अर्ध शताब्दी 1968 ग्वालियर, जगदीश भसीन-मेमोरियल लायब्रेरी उज्जैन 1990-91, संस्कार भारती उज्जैन 2006, अष्टम राज्य स्तरीय कालिदास समारोह 2007

पुरस्कार - अ.भा. कालिदास चित्रकला प्रदर्शनी विशेष पुरस्कार 1958 * सिंहस्थ मेला प्रदर्शनी समिति प्रशस्ति पत्र 1957 * सहकारी औद्योगिक प्रदर्शनी प्रमाण पत्र 1949 * अन्य अवैतनिक प्राचार्य ''कला-निलय'' उज्जैन चित्रकला म.वि.1968-1971, संयोजक लोककला चित्रकला प्रदर्शनी, भारतीय हिन्दी परिषद् 22 वाँ वार्षिक अधिवेशन 1996, माधव महाविद्यालय उज्जैन (विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन), आकाशवाणी इन्दौर 1990

चित्र-संग्रह - अमेरिका, फ्रांस, स्विटजरलैण्ड, बम्बई, इन्दौर, उज्जैन, वनस्थली (राज.) खैरागढ़(छत्तीसगढ़), काठमाण्डू - (नेपाल), भोपाल आदि।

यात्रा - बद्रीनाथ, केदारनाथ, शिमला, मसूरी, अजन्ता-एलोरा, कान्टेरी, एलीफेन्टा, कन्याकुमारी, जयपुर, उदयपुर, कोटा, बूँदी, बीकानेर, जोधपुर, दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता, द्वारका आदि।

निधन - 9 नवम्बर, 2014

परिजन संपर्क : श्री श्रीकृष्ण जोशी
17 एमआयजी, मुनिनगर
सांवेर रोड, उज्जैन (म.प्र.)

कला और कलाकार

श्रीमती शिवकुमारी जोशी

ईश्वर की सर्वोत्तम कृति मानव है। संसार में सबसे अधिक बुद्धिमान प्राणी मनुष्य है। मनुष्यों में सर्वश्रेष्ठ कवि और कलाकार है। प्रसिद्ध चिन्तक भर्तृहरि ने साहित्य, संगीत और कला से रहित मनुष्य को बिना पूँछ का प्राणी माना है-

साहित्यसंगीतकलाविहीन साक्षात्पशुः पुच्छविषाणहीनः।
तृणं न खादन्नापि जीवमानस्तद् भागधेयं परमं पशुनाम ।।
(11, नीतिशतक)

प्रसिद्ध कला इतिहास लेखक स्व. डॉ. भगवतशरण उपाध्याय ने कलाकार की प्रशंसा में अपने उद्गार इन शब्दों में व्यक्त किए हैं- प्रकृति जो देती है वह कलाकार नहीं देता। न ही कलाकार प्रकृति का यथातथ्य रूपायन करता है। यह कार्य छाया-शिल्पी या छायाकार का है। कला प्रकृति को अपनी दृष्टि से देखती है। कलाकार दृश्य में पैठकर, प्रायः उससे एकीभाव होकर उसे देखता और सिरजता है। वह प्रकृति को अपनी तूलिका, छेनी अथवा कुर्च से सँवार देता है। नंगी स्थिति में कलावर्त जो अपने माध्यम से अंतर डाल देता है, वही कला है। प्रकृति काली रात बनाती है, कलावंत दीप जलाता है। *(भारतीय कला और संस्कृति की भूमिका, पृष्ठ 4)*

आज जितना संस्कृति का महत्त्व है, उतना ही कलाकार का भी है। सम्पूर्ण विश्व में कला स्मारक विद्यमान हैं। ये स्मारक कलाकार की रचना-सामर्थ्य के ही प्रतिपल हैं। रचना या निर्माण करना मनुष्य की सहजवृत्ति है। कलाकार की इसी रचना प्रवृत्ति को रेखांकित करते हुए डॉ. हरद्वारीलाल शर्मा लिखते हैं- ''अपनी सभ्यता-संस्कृति की यात्रा में मनुष्य ने जबसे होश सम्भाला है, वह अपनी रचनाओं में उपयोगिता का ध्यान तो रखता ही है, साथ ही वह रचना-कौशल के उत्तरोत्तर विकास के सहारे, उनमें रूप के सौन्दर्य को सँजाने में सफल हुआ है। वह अपने निर्माणों से अद्भुत संतोष पाता है, रस और रंगों का अनुभव करता है, चकित होता है, गर्व से भर उठता हैं इतना ही नहीं अपने मन के भावों, विचारों, उमंग-तरंगों, उड़ान और संकल्पनाओं को अभिव्यक्त करके वह ऐसे आनन्द को भोगता है जो न सुख है, न दुःख है और जिसका वर्णन और व्याख्या करना भी उसके लिए कठिन होता है। इसीलिए कला की आनन्दानुभूति को विवेचक अनिर्वचनीय कहते आए हैं।''

सभ्यता के सूर्योदय से लेकर आज तक कलाकार ने इतना कुछ रचा है कि जो वर्णनातीत है। जो ज्ञात है वह तो परिचय में आता है, किन्तु अभी भी भूगर्भ में कितना दबा है, कहना कठिन है। विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ने भी कलाकार की स्तुति में लिखा है- ''विश्वात्मा सदैव रंगों और रेखाओं में बोलती है।'' कला लेखिका शचीरानी गुर्टू ने भी कलाकार की सिद्धहस्तता की चर्चा की है- ''सच्चा कलाकार अन्तःप्रेरणा के क्षणों में अपनी सूक्ष्मतम अनुभूति एवं आनन्द की चरम अभिव्यक्ति को कला में मूर्त करता है। अपने चतुर्दिक के वातावरण की चकाचौंध से प्रभावित होकर वह प्रकृति के विराट् सौन्दर्य को अपने दृष्टि बिन्दु में बंदी बना लेता है और इस क्षणभंगुर विश्व की नश्वर वस्तुओं को अपने प्राणों का अमरत्व प्रादान कर अनश्वर बना देता है। यही उसकी कला की सिद्धी है।''

प्रसिद्ध छायावादी कवि स्व. सुमित्रानंदन पन्त भी कलाकार की रचना को पूर्णता का लक्ष्य मानते हैं और कहते हैं कि असुन्दर को सुन्दर भी कलाकार ही बनाता है-

कला के कल्पित भाव मान
बन गए स्थूल
जन-जीवन से हो एक प्राण।
मानव स्वभाव ही
बना मानव आदर्श
करता अपूर्ण को पूर्ण
असुन्दर को सुन्दर।

कलाकार में ही वह क्षमता होती है कि वह अनगढ़वस्तु को सुन्दर आकार प्रदान करता है और सुन्दर कृति क्या है, इस सम्बन्ध में डॉ. नगेन्द्र लिखते हैं- ''रूपाकृति का अर्थ है, सौन्दर्य का गोचर रूप जिसके अनेक दृष्टिग्राह्य तथा कल्पनाग्राह्य तत्त्वों का उल्लेख पाश्चात्य कलाविदों ने किया है। ये गुण हैं आकार, समानेति, अनुपात, वैचित्र्य-वैविध्य, वर्णदीप्त और इन सबमें अंतर्व्याप्त अन्विति।'' (भारतीय सौन्दर्य शास्त्र की भूमिका, पृ. 20)

इतिहास लेखन से पूर्व तथा सभ्यता के शैशवकाल से ही कलाकार ने अपनी अभिव्यक्ति का श्री गणेश गुफाओं की कठोर भित्ति के चित्रांकन से प्रारंभ किया। लगभग एक सौ पचास वर्ष पूर्व प्रागैतिहासिककालीन चित्रों को खोजा गया-"In 1868 A Hunter in the open country near Santillana not far from the charming little town of Toppelavega in the Northen Spanish province of Santader, discovered the blocked entrance to a cave, which was later given the name of Altamira." *(The picture Encyclopaedia of Art, London Page 101)*

प्रसिद्ध साहित्यकार एवं कला लेखक रायकृष्णदास भी लिखते हैं- ''चित्रण की प्रवृत्ति मनुष्य में उस समय से है जब वह वनौकस था। अपना सांस्कृतिक विकास करने के लिए उसने संस्कृति के जिन अंगों से श्री गणेश किया था, उनमें चित्रकला भी एक थी।'' *(भारत की चित्रकला, पृ. 1)*

स्पेन की अल्टामीरा, फ्रांस की फॉण्ट-डी गाम, लास्को, ली- कम्बारेली, त्रायफ्रेयर्स आदि, भारत में मिर्जापुर, पचमढ़ी, होशंगाबाद, रामगढ़, चम्बल आदि क्षेत्रों के अतिरिक्त विश्व के अनेक देशों में उक्त चित्रों की खोज की जा रही है। उक्त चित्रों को बनाने का उद्देश्य क्या था, विवाद का विषय है। प्रसिद्ध कला लेखक हर्बर्ट रीड लिखते हैं-"Any other form of explanation of paleolithic art, as for example, decoreative or expressive form is untenable." (Art and Society, P.5)

उक्त गुण चित्रों के चितेरे कौन थे, क्या परिचय था, यह अज्ञात है, किन्तु

उनकी अभिव्यक्ति शेष है। जैसे-जैसे सभ्यता का विकास होता गया, कलाकृतियों में भी निखार आता गया। तीन-चार सहस्र वर्ष पूर्व की मृतक संस्कारों की कला अर्थात् मिश्र की कला वर्तमान में भी आश्चर्य का विषय है। मिश्र की मजारों, मन्दिरों, प्रतिमाओं, चित्रों, पिरामिडो और कलामय स्मारकों में कलाकारों की साधना आज भी जीवन्त है। गीजा के उच्च पिरामिड और नरसिंह की प्रतिमा विश्व के आश्चर्य हैं। जब नेपोलियन ने इन पिरामिडों को देखा तो आश्चर्यचकित हो गया।

मिश्र की सभ्यता के लगभग समानान्तर एक दूसरी सभ्यता विकसित हो रही थी जिसने सम्पूर्ण यूरोप को प्रभावित किया। वह सभ्यता यूनानी सभ्यता थी। इस संस्कृति की कलात्मक रचनाओं को देखकर प्रसिद्ध कला इतिहास लेखक हीगल को कहना पड़ा- ''उससे और अधिक सुन्दर कभी कुछ हो नहीं सकता।''

ग्रीक कला सौन्दर्य का मूर्तिमान रूप है। प्राचीन यूनान के कलाकारों की सौन्दर्यात्मक प्रतिभा का परिचय मूर्ति शिल्प एवं वास्तु कला में ही सबसे अधिक मिलता है। सम्राट पेरीक्लीज के शासनकाल में प्रत्येक तीसरा व्यक्ति मूर्तिकार था। अपोलो की मूर्ति पुरुष आकृति के लिए और एफ्रोडिटी की मूर्ति नारी आकृति के लिए आदर्श मानी जाती है। अथेन्स नगर की पहाड़ी एक्रोपोलिस पर बनाया गया देवी एथना का श्वेत संगमरमर का भव्य मंदिर 'पार्थेनन' विश्व का पूर्णतम भवन कहलाता है और उसकी फ्रीज पर कीडियास द्वारा बनाए गए उभरे चित्र यूनानियों के जुलूस का दृश्य तत्कालीन ग्रीक समाज का सच्चा दिग्दर्शन कराता है। महान् कलाकार 'पॉली क्लीट्स' 'मायरन' स्कोपाज, प्रैग्जाइटिलीज और लिसीजस ने जो रचा उसे अमरत्व प्रदान कर दिया।

चित्र शीघ्र नष्ट होते हैं मूर्ति और वास्तु की तुलना में। महान् कवि होमर ने अपनी काव्यकृतियाँ 'इलियट' और 'ओडिसी' में तत्कालीन कला और कलाकारों का बहुत ही सुन्दर चित्रण किया है। ज्यूजिग्स और फरैसियस की कहानी विश्वविख्यात है। ज्यूजिग्स द्वारा चित्रित अंगूर के गुच्छे असली जान पड़ते थे और फरैसियस द्वारा चित्रित पर्दे ने स्वयं ज्यूजिग्स को धोखा दे दिया था। पॉली नाट्स, एगाथर्कस, अपोलोडरस, अपीलीज आदि उस काल के शास्त्रीय महान् कलाकार थे।

फिर दौर आया रोमन कला का। इस युग में मूर्तिशीर्ष और शास्त्रीय कला की अनुकृतियाँ अधिक हुईं। रोमन काल के बाद ईसाई युग में बाईजेण्टाईन शैली एक मौलिक शैली के रूप में विकसित हुई। गौथिक शैली और बाईजेन्टाईन शैली के मध्य सेतु के रूप में रोमनस्क शैली का उद्भव हुआ। ईसा पश्चात् बारहवीं शताब्दी तक किसी कलाकार का उल्लेख नहीं हुआ। तेरहवीं शताब्दी में सिमाबू (1240-1320 ईसवी) इटली के फलोरेण्टाईन स्कूल का कलाकार था। इसी का शिष्य जियोत्तो (1276-1337) था। इन दोनों को आधुनिक कला का जन्मदाता माना जाता है। कला लेखक रस्किन ने जियोत्तो को 'आदर्शवाद, परम्परा तथा औपचारिकता के विरुद्ध साहसपूर्ण प्राकृतिकतावादी कहा है। कला-समीक्षक जियोत्तो को पुनर्जागरण का जन्मदाता भी मानते हैं। श्री राबर्ट गोल्ड वाटर का कथन है- "Giotto truned the art of painting from Greek in to Latin and rendered it modern. He mastered art most completly than any one else ever did."

पन्द्रहवी शती में इटली में पुनरुत्थान का युग प्रारंभ होता है। मैसेचियो प्रयोगवादी कलाकार था, किन्तु पुनरुत्थान के शीर्ष कलाकारों में लियोनार्दो दाविन्ची, माइकेल एन्जिलो और राफेल विश्वविख्यात कलाकार थे। लियोनार्दो के मत से कला में ही शाश्वतता है। उसने लिखा है- "All that is beautiful, 'He said- Even humanly beautiful, dies save in art (Thomas Craven- famous Artists and their models, P. 7)

माइकेल एंजिलो (1474-1564) ने रोम स्थित सिस्लाइन चौपल की छत में जो फ्रेस्को बनाए, इनके कारण वह विश्वविख्यात हो गया। पिएस और डेविड की प्रतिमाएँ भी उसकी विश्वविख्यात कृतियाँ हैं। उक्त दोनों कलाकारों में सबसे छोटा राफेल (1483-1520) कलाचार्यों में अधिक समन्वयवादी था।

यह सुन्दर स्त्री, बच्चों और समूह चित्रों का आचार्य था। स्कूल ऑफ एथेन्स उसकी सर्वाधिक प्रसिद्ध कृति है। पश्चिम के महान् कलाकारों में टिशियन, रूबेन्स, रेम्ब्रा, वर्मिचर, वेलास्केज, एलग्रेको, ड्यूटर, जानवान आइक, निकोलस पूंसा कैरेवेज्जियो, गोमा आदि कलाकारों ने अपनी कृतियों के माध्यम से विश्व को चकित किया है।

भारत का आर्यावर्त जम्बूद्वीप इण्डिया हिन्दुस्तान आदि नामों से प्रसिद्ध इस देश की संस्कृति अत्यन्त प्राचीन है। वेद, रामायण, महाभारत और गीता जैसे ग्रन्थों ने विश्व को ज्ञान का संदेश दिया है। रामायण और महाभारतकालीन कला के कोई भी नमूने आज उपलब्ध नहीं हैं। उत्तररामचरित (भवभूति) में चित्रकला का उल्लेख है एवं महाभारत के बाणासुर की पुत्री उषा की सखी चित्रलेखा गुणी एवं सिद्धहस्त कलाकार थी। विष्णुधर्मोत्तर पुराण के तृतीय खण्ड में चित्रकला को धर्म,अर्थ, काम और मोक्ष को देने वाली माना गया है-

कलानां प्रवरं चित्रं धर्म-कामार्थ-मोक्षदम् ।
माङ्गल्यं प्रथमं हयेतद् गृहे यत्र प्रतिष्ठितम् ।

समरांगणसूत्रधार में चित्रकल्पा को सर्वोत्तम माना गया है।

चित्रं हि सर्व शिल्पानां मुखं लोकस्य च प्रियम् ।

वात्स्यायन कृत कामसूत्र की यशोधर पंडित लिखित टीका में एक श्रेष्ठ चित्र के लिये षडंग का ज्ञान आवश्यक बताया गया है-

रूपभेदाः प्रमाणानि भाव-लावण्य योजनम् ।
सादृश्यं वर्णिका भंग इति चित्रं षडंगकम् ।।

संस्कृत-साहित्य में चित्रकला के अनेक संदर्भ हैं, किन्तु वर्तमान जोगीमारा, अजन्ता, बाघ, बादामी, सित्तनवासल, सिगरिया (श्रीलंका) के भित्ति चित्र आज भी शेष हैं। अजन्ता के चित्र विश्वविख्यात हैं। यहाँ के भित्ति चित्रों की तकनीक, रेखा, रंग, विधान, नारी-चित्रण, सम्पूर्ण त्रिभुवन-संपुंजन, भाव मुद्राएँ, संयोजन, आलेखन आदि विशेषताओं ने इन्हें विश्व की समस्त कलाओं में श्रेष्ठ सम्मान दिलाया है और बौद्ध धर्म की शिक्षाओं से विश्व को ज्ञानोपदेश दिया है। इसी प्रकार बाघ गुफा के चित्र भी अतिसुन्दर हैं।

पाल और जैन शैली के चित्र अपनी मौलिक पहचान रखते हैं। राजस्थानी शैली में इतनी विषयों की विविधता है, जितनी कि विश्व की किसी भी शैली में नहीं है। 16वीं से 18वीं शती तक इस शैली का राजस्थान की भिन्न-भिन्न रियासतों में विकास होता रहा है। राजस्थानी शैली की मूल पहचान राजा से रंक तक का चित्रण, बारहमासा, रागमाला, ऋतु चित्रण, भक्ति सम्बन्धी चित्रण, व्यक्तिचित्र, ऐतिहासिक चित्र, आलेख चित्र, विचित्र रचनाएँ, हास्य व्यंग्य के चित्र आदि इन सबके कारण यह शैली सबसे अलग जान पड़ती है। काँगड़ा के चित्र विश्वविख्यात हैं। भोलाराम नामक चित्रकार का आदर के साथ उल्लेख है। मुगल शैली में अनेक उस्तादों का उल्लेख है। इन उस्तादों के नेतृत्व में अनेक कलाकार अपनी-अपनी विशेषताओं तथा रियाज के चित्र बनाते थे जैसे कोई पशु-पक्षी, कोई आकृति तो कोई वास्तु एवं पेड़-पौधे, हाशिये आदि।

15वीं, 16वीं शती ईरानी चित्रकार 'बिहजाद' ने ईरानी चित्रकला को नई दिशा दी, वहीं महमूद मुजहिब, अब्दुल्ला मुजहिब (मीर-मुसव्विर), मुहम्मद मुराद, मीर सैयद अली, ख्वाजा अब्दुस्समद शीराजी आदि उल्लेखनीय चित्रकार थे। सुल्तान मुहम्मद अत्यधिक परिश्रमी कलाकार था।

चीनी संस्कृति भी विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है। चीनी चित्रकला का विशेष महत्त्व है। शांग इन वंश से प्रारंभ होता है। चाऊ वंश, चंड्न व हानवंश, तीन राज्य वंश और छः वंश से चीनी कला अपनी दिशा का निर्धारण करती है।

चीनी चित्रकला की सर्वाधिक विशेषता चीनी हास्य चित्रण में है। चीन में एक से बढ़कर एक दृश्य चित्रकार हुए, जिन्होंने चीनी संस्कृति के गौरव को बढ़ाया है।

वास्तव में चित्रकला कोई सरल विधा नहीं है। चित्रण के लिए कठिन परिश्रम, साधना और एकाग्रता की आवश्यकता है। अर्थात् कलाकार को योगी के समान होना चाहिए। दाँते ने लिखा है-"Who paints a figure it he can not be it, can not draw it."

डॉ. आनन्दकुमार स्वामी ने कलाकार को योगी ही माना है- "Hindu view treats the practice of art as a form of Yoga and identifies aesthetic emotion with that felt when self perceives the.....

स्वयं कालिदास भी चित्रकला के अच्छे ज्ञाता थे। उनके पात्र भी चित्रकला में निष्णात थे। मेघदूत का यक्ष अपनी प्रिया का चित्र तो बनाना चाहता है, किन्तु आँसुओं के कारण चित्र नहीं बना रहा था-

त्वामालिख्य प्रणयकुपितां धातुरागैः शिलाया-
मात्मानं ते चरणपतितं यावदिच्छामि कर्तुम् ।
अस्रैस्तावन्मुहुरूप चितैर्दृष्टिरालुप्यते मे
क्रूरस्तास्मेन्नापि न सहते संगमं नौ कृतान्तः।।
(47) उत्तरमेघ

ईश्वर के पश्चात् कलाकार का ही स्थान है, जिसने अपने सृजन द्वारा संस्कृति के भण्डार को समृद्ध किया है। कलाकार के कारण ही कला का अस्तित्व रहा है और रहेगा। ऋषि, मुनियों की भाँति कलाकार की पूर्णता की खोज प्रारंभ से लेकर आज तक कर रहा है और करता रहेगा-

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।

परिजनों की दृष्टि में डॉ.शिवकुमारी जी

उनके विश्वास पर आज भी कायम हूँ

राजीव पाहवा

बचपन की दीदी कब निःस्वार्थ भाव से माँ बन गयी या कब ईश्वर ने उन्हें मेरे जीवन में माँ बना दिया, हाथ थाम लिया, व्यवसाय में, व्यापार में या एक ग्राहक के रूप में नियमित खरीदारी हो। जब तक वह रहीं, उनका वह निःस्वार्थ प्रेम और अटूट विश्वास बना रहा। इतना विश्वास की उन्होंने कह सकते हैं कि अपने जीवन भर की सारी जमा पूँजी का मैनेजर तक बना दिया। सारा कुछ सौंप दिया और समय-समय पर जब उन्हें वापिस लौटाने का प्रयास भी किया तो बोली की तुमको ही संभालना है सब, तुम्हें ही देखना है। तब से लेकर उनकी अंतिम श्वास तक का जो कालखण्ड था, उसमें सेवा करने का मौका भी उन्होंने अपने इस बेटे को दिया।

जीवन के अंतिम 4-5 वर्ष वह हमारे साथ ही रहीं। साथ रहकर प्रेम भी दिया, उनसे बहुत कुछ सीखने का मौका भी मिला और बहुत सारा सम्मान भी दिया। सम्मान इसलिए क्योंकि वर्षों से उन्होंने अपने चित्रकला के कार्य और उसमें रुचि से वनवास जैसे ले लिया था। उस कार्य को उन्होंने उन 4-5 वर्ष की अवधि में पुनः प्रारंभ किया। उनके इस कार्य को पुनः प्रारंभ करने से मेरे ससुरजी ने मुझे कहा कि राजीव तुमने तो चमत्कार कर दिया। कई वर्षों का वनवास समाप्त हुआ। उन्होंने कई वर्षों से ब्रश तक नहीं उठाया था अब वह अगिनत चित्र बना रही हैं। एक योगी की तरह, एक तपस्विनी की तरह, एक साधक के रूप में, उम्र के इस पड़ाव में वह जिस तरह से निरंतर कैनवास के समक्ष बैठ जाती थी और जितना उनसे बन सके, प्रतिदिन उतना कार्य करतीं। उन्होंने पेंटिंग प्रारंभ कर जितना सुकून खुद पाया, उतना ही सुकून हम लोगों को भी दिया। एक साधक को ऐसी तपस्या करते देखना ही अपने आपमें अद्भुत अनुभूति होती है।उन्होंने सबसे बड़ी चीज जो मुझे दी वह है उनका विश्वास, उनका भरोसा। वह जानती हैं और मैं जानता हूँ कि उन्होंने जो विश्वास मुझ पर किया मेरा हमेशा यही प्रयास रहा और हमेशा यही प्रयास रहेगा कि मैं उस विश्वास पर कायम रहूँ, कोई समझ पाए या न समझ पाए। मैंने एक मैनेजर की तरह अपना कर्म किया, कर रहा हूँ और उस माँ को यह विश्वास दिलाता हूँ कि वह जहाँ भी हैं, मैं आपके विश्वास पर खरा उतरने का पूरा प्रयास करूँगा, यही मेरी सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

(लेखक श्रीमती जोशी के दामाद हैं)

27, मोतीलाल नेहरू नगर, दशहरा मैदान, उज्जैन

''माँ, जो बड़ी कलाकार भी थी''

सखा (डॉली) पाहवा

मेरी माँ श्रीमती शिवकुमारी जोशी एक ऐसी संपूर्ण शख्सियत की मालकिन थीं, जिन पर हर लिहाज से गर्व किया जा सके। वे एक राजपरिवार से थीं। आगरा यूनिवर्सिटी से गोल्ड मेडलिस्ट थीं एवं बाद में प्रोफेसर बनीं। इतनी खूबियों के बावजूद उनमें जो सहृदयता, प्रेम एवं विनम्रता थी वो बहुत दुर्लभ थी। उनके संपर्क में जो भी शिष्य आते उन्हें मातृवत् प्रेम देतीं एवं अनुशासनबद्ध चित्रकला की शिक्षा भी प्रदान करतीं। सरल हृदय होने से मैंने उनके भीतर कभी किसी के लिए भी द्वेष नहीं देखा, वे सिर्फ अनुचित कार्य करने पर ही क्रोधित होती थीं। वो एक बड़ी दृढ़निश्चयी महिला थीं जो ठान लिया सो पूरा किया चाहे कोई कार्य हो या वायदा। आज भी न जाने कितने लोग घर जाने पर उनके द्वारा बिना खिलाए-पिलाये ना जाने देने को एवं सुस्वादु व्यंजनों को याद करते हैं। हर बच्चे के लिए उसकी माँ विशेष ही होती है, लेकिन मेरे लिए वह इसलिए भी विशेष हैं,

क्योंकि मुझे इस दुनिया में लाने के लिए उन्होंने डॉक्टर्स के चेतावनी देने के बावजूद अपनी जान दाँव पर लगा दी और मेरे जन्म होने के पश्चात् भी उनकी तपस्या जारी रही, कई मेडिकल समस्याओं के चलते 25 वर्ष उज्जैन से बम्बई चक्कर लगते रहे, उनका स्वास्थ्य भी ठीक नहीं रहता था। माँ के करीबी लोग मुझे किस्से सुनाते हैं कि कैसे बड़े जतन से मेरी माँ ने मुझे पाला-पोसा। मेरे माता-पिता दोनों ने दो साधना की कला साधना एवं दूसरी मुझे बड़ा करने की साधना। मेरे पिता श्रीकृष्ण जोशी मेरी माँ का जो उनकी कला गुरु भी थीं का ताउम्र सम्मान करते रहे। अपने माता-पिता के बीच में एक-दूसरे के लिए इतना प्रेम और सम्मान देखना यह मेरे एक बच्चे के रूप में बहुत सुखद अहसास है। मैं खुद को सौभाग्यशाली मानती हूँ कि इस जीवन में मुझे ऐसी प्यारी माँ मिलीं।मेरे जीवनसाथी श्री राजीव पाहवा को उन्होंने बहुत प्रेम दिया, बिल्कुल एक बेटे की तरह। उन्होंने भी उनकी सेवा में कोई कसर नहीं छोड़ी, वो आज भी माँ को खूब याद करते हैं।

एक कलाकार के रूप में वो अद्भुत थीं उनके द्वारा लगाया गया सिर्फ एक बिंदु मात्र भी चित्र में जान भर देता था। उनके चित्र संयोजन में आकृतियों के चेहरों पर कोमलता, लावण्य, भावप्रवणता, सौन्दर्य सभी का अद्भुत सम्मिश्रण देखने को मिलता है। इस मामले में उनके जैसा दूसरा सिद्धहस्त कलाकार मुझे दूसरा नहीं देखने को मिला। कई चित्रों में नायक एवं नायिकाएँ सजीव प्रतीत होते हैं। दृश्य चित्रण भी इतने सटीक होते की बरबस वाह निकल पड़ती है। अपने आखिरी के वर्षों में उन्होंने कई चित्र मुख्यतः पुष्प चित्रण व लैंडस्केप बनाये उनका चित्रण का कार्य कंधे में फ्रेक्चर की वजह से अनायास रूक गया। न केवल मेरे हृदय में बल्कि उनको प्रेम करने वाले सभी के हृदय और मानसपटल पर उनकी अमिट छाप सदैव रहेगी।

(लेखिका श्रीमती जोशी की पुत्री है)

27, मोतीलाल नेहरू नगर, दशहरा मैदान, उज्जैन

''कला को समर्पित काकी सा.''

राजेन्द्र जोशी

कला एवं कलाकार के प्रति समर्पण भाव ने ही प्रो. मैडम शिवकुमारी रावत को शिवकुमारी जोशी बनाया। मैडम (काकी सा.) की गणना समूह चित्रण (कम्पोजिशन) एवं वॉश पेंटिंग के क्षेत्र में देश के प्रख्यात चित्रकारों में की जाती है। उन्हीं दिनों नगर के प्रख्यात चित्रकार के रूप में श्रीकृष्ण जोशी (काका सा.) का नाम दृश्य चित्रण (लैण्डस्केप) के क्षेत्र में राष्ट्रीय स्तर पर गिना जाने लगा था। चित्रकला के प्रचार एवं प्रसार के लिये मैडम ने डॉ. मोहनलाल झाला के सान्निध्य में योगेश्वर टेकरी (गुजराती समाज नईसड़क) पर ''कला निलय'' कला महाविद्यालय की स्थापना की थी तथा इस संस्था के संपूर्ण संचालन का उत्तरदायित्व काकाश्री श्रीकृष्ण जोशी को सौंपा गया तथा वे स्वयं भी छात्र-छात्राओं को चित्रकला का निःशुल्क मार्गदर्शन देने प्रतिदिन विद्यालय में आती थीं, समय-समय पर देश के जाने-माने चित्रकारों ने भी इस विद्यालय में आकर कला का (डिमास्ट्रेशन) प्रस्तुतीकरण कर छात्रों को प्रोत्साहित किया।

काकी सा. को रांगोली एव माँडने की कला में भी रुचि थी। एक बार श्रीकृष्ण जन्माष्टमी पर्व पर हमारे पैतृक निवास के मंदिर में रांगोली का प्रदर्शन कर उन्होंने दादाजी (पं. गजाधर त्रंबक जोशी) को भाव-विभोर कर दिया था।

पारिवारिक कार्यक्रमों में वे मीठी मालवी बोली में चर्चा करती थीं, इस प्रकार मालवी भाषा का भी उन्हें पूर्ण ज्ञान था, मुझे ऐसा ज्ञात है कि उन्हें कुछ विदेशी भाषाओं की भी जानकारी थी।

मैडम जोशी ने निश्चित ही अपना संपूर्ण जीवन कला के प्रति समर्पित कर दिया था। जीवन के अंतिम क्षणों तक वे कला से जुड़ी रहीं। उनका कोई छात्र उनसे मार्गदर्शन लेने आता था तो वे स्वयं ब्रश कलर लेकर सुधारकर मार्गदर्शन देती थीं। कला की पुजारी काकी सा. मैडम जोशी को मैं जोशी परिवार की ओर से श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

119, बक्षी बाजार, उज्जैन
मो.96692-519191

कला गुरु भी और भाभी भी

ज्ञानेश्वर दुबे

चित्रकला को समर्पित जीवन एवं चित्रकला के अनेक साधकों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर निखारने वाली हस्ति जो अपने जीवन में बड़ी सरल व सहजता में कला की बारीकियों को समझाने में माहिर रही, ऐसी मैडम शिवकुमारी जी रावत से मेरे दो रिश्ते रहे हैं - पहले तो वे मेरी कला गुरु रहीं तथा बाद में भाभीजी के रूप में आदरणीय बनी रही। वैसे कई छात्र उनके रहन-सहन से उनको बड़ी कठोर व गुस्से वाली मैडम समझते थे, परन्तु जब उनके सान्निध्य में बैठकर कला का अभ्यास करते तो चमत्कृत हुए बिना नहीं रहते थे। वे अपने विद्यार्थियों को स्वयं चित्र बनाने को कहती थीं- ''जैसा बने खुद बनाओ उसमें जो भी गलती होगी मैं सुधार दूँगी।'' और वे फिर अपने अनुभव व साधना से चित्र को सुधारकर कुछ ही क्षणों में सहजता से चित्र में जीवन डाल देती थी।उन्हें रंगों की अच्छी समझ थी। चाहे वह व्यक्ति चित्रण हो दृश्य चित्रण हो या समूह चित्रण हो, गहरे रंगों से लेकर साधारण रंगों के प्रयोग द्वारा चित्रों को सजीव कर देती थी। उनके द्वारा बारीकी से लगाये गये छोटे से छोटे ड्राप भी चित्र में नया जीवन दे देते थे।अपने जीवन में स्वयं अनुशासनप्रिय थीं इसलिये वे कठोरता तो रखती थी, लेकिन अतिथि सत्कार अपनत्व व स्नेह देने में कभी वे पीछे नहीं रहती थीं। मैंने स्वयं व मेरे मित्र प्रकाश लोंढ़े ने उनका अनुशासन व अपनापन निकट से देखा है। हर छोटी से छोटी बातों का ध्यान रखना, छोटी से छोटी वस्तुओं को सहेजकर रखना तथा समय-समय पर उनका उपयोग करने की वे अभ्यस्त थीं।

उनके द्वारा की गई यात्राओं के चित्र चाहे वे दृश्यचित्र हों या वहाँ के रहन-सहन चित्रांकन हों, स्वयं बोलते हैं। उच्च श्रेणी की चित्रकार होने के बाद भी संतोषी होने के कारण उन्होंने अपना जीवन सरलता से एक जगह रहकर कला साधना को समर्पित कर दिया। अपनी सेवानिवृत्ति के बाद व्यस्तता व परिस्थितिवश चित्रण कार्य बन्द कर दिया था। चित्रण के लिये कहने पर वह कहती बहुत हो गया। उनके द्वारा रचित चित्र कई स्थानों पर प्रदर्शित हैं। कुछ चित्र माधव कॉलेज, विक्रम विश्वविद्यालय, हरसिद्धी भक्त मण्डल के विक्रम सभागृह में नवरत्न चित्रमाला में तथा कालिदास अकादमी में सरस्वती का चित्र उनकी स्मृति दिलाते हैं।

अन्तिम समय में जब उनका स्वास्थ्य उम्र के अनुसार ठीक नहीं था तब उनके अन्तर्मन का कलाकार जागा और उन्होंने इस स्थिति में भी प्रकृति और कई फूलों का चित्रण किया जो एक सुन्दर बगिया का स्वरूप लगता है। जिसने सबको आश्चर्यचकित कर दिया तथा जो उनके जीवन के अन्तिम समय तक कला को समर्पित रहने की कहानी कहता है। ऐसी कला गुरु भाभीजी की प्रेरक स्मृतियों को मेरा नमन।

18/2, बाबा रामचन्द्र शेणवी मार्ग
कहारवाड़ी, रामघाट मार्ग, उज्जैन
मो.9424870679

उनमें कलाकार और कलागुरु का समन्वित रूप था...

जगदीशचन्द्र पण्ड्या

श्रीमती शिवकुमारी जोशी अनूठे व्यक्तित्व की धनी थीं। वे सम्पूर्ण जीवन कला को समर्पित थीं। कलाकार के साथ-साथ वे कला गुरु भी थीं। सदैव अपने आपमें सृजन चिंतन में डूबी हुई थीं। कहीं अधिक आना-जाना उन्हें पसन्द नहीं था। एकान्तवासी थीं। किन्तु उन्होंने जो कुछ रचा वह अद्भुत है, किन्तु प्रचार-प्रसार से दूर उनकी कृतियाँ आमजन तक नहीं पहुँच पाईं। विवाह

से पूर्व वे प्रो. शिवकुमारी रावत के रूप में जानी जाती थीं।

परिवार

प्रो. शिवकुमारी रावत के पिता स्व. ठाकुर गिरिराज सिंह जी ग्राम जवासिया देवास रियासत के जमींदार थे एवं स्टेट देवास सीनियर के दीवान जी थे। माता स्व. श्रीमती भीष्म कुमारी रावत थीं। उनका सम्बन्ध बीकानेर राज परिवार से था। बड़े भाई कु. भूपेन्द्र सिंह एवं छोटे भाई कु. नरेन्द्रसिंह थे। आपकी तीन बहनों में श्रीमती जसवन्त कुमारी खण्डवा में हैं और दो बहनें नन्दकुमारी एवं अशोक कुमारी स्वर्गवासी हो चुकी हैं। पति डॉ. श्रीकृष्ण जोशी (प्रख्यात चित्रकार), पुत्री डॉली, दामाद राजीव पाहवा हैं।

शिक्षा

श्रीमती शिवकुमारी जी की प्रारम्भिक शिक्षा ग्राम जवासिया, इन्दौर, बड़ौदा, दिल्ली और इलाहाबाद में हुई। माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक शिक्षा उज्जैन विजयाराजे स्कूल में हुई।

उच्च शिक्षा

माधव महाविद्यालय उज्जैन से बी.ए. उत्तीर्ण करने के पश्चात् स्नातकोत्तर चित्रकला की शिक्षा हेतु आप अलीगढ़ गईं। आगरा विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी में आपने 1962 में एम.ए. उत्तीर्ण किया एवं स्वर्ण पदक प्राप्त किया। सन् 1963 में शिक्षा महाविद्यालय, उज्जैन से बी.एड्. पास किया। सन् 1968 में महाराष्ट्र के सर जे.जे. स्कूल ऑफ आर्ट से चित्रकला में डिप्लोमा पास किया। राजस्थान वनस्थली से फ्रेस्को म्यूरल 1960 में पास किया। बचपन से ही आपको संगीत में रुचि थी। स्व. श्रीमती खाण्डेपारकर (संगीत शिक्षिका) से आपने संगीत सीखा और मेट्रिक की परीक्षा संगीत से उत्तीर्ण की एवं संगीत गुरु स्व. आर.एस. वाघ सर के निर्देशन में संगीत में थर्ड इयर पास किया।

कला अध्ययन

स्व. ब्रजकुमारी सक्सेना कला शिक्षिका ने आपको कला की प्रेरणा दी। माधव महाविद्यालय में बी.ए. की कक्षाओं में स्व. चिन्तामणि हरि खाडिलकर जी ने कला का प्रशिक्षण दिया। स्व. वि.श्री. वाकणकर जी द्वारा स्थापित भारती कला भवन फ्रीगंज में सन्ध्याकालीन कक्षाओं में सन् 1954 से 1960 तक कला का अध्ययन किया। भारती कला भवन में आपके साथियों में मुजफ्फर कुरेशी, सचिदा नागदेव, रामचन्द्र भावसार, आरेकर, रहीम गुट्टी, कमल चव्हाण आदि थे। स्व. वाकणकर जी कला भवन में बड़े-बड़े स्थापित कलाकारों को आमंत्रित करते थे एवं उनका डिमान्स्ट्रेशन भी करवाते थे। ऐसे कलाकारों में स्व. डी.जे. जोशी, स्व. एम.आर. आचरेकर, स्व. किरकिरे, स्व. चन्द्रेश सक्सेना आदि थे।

मैडम रावत के यहाँ (आवास पर) वाकणकरजी के साथ बड़े-बड़े कलाकार उनकी कला देखने आते थे, उनमें प्रमुख एन.एस. बेन्द्रे सा., कुमारिल स्वामी (दिल्ली), डी.जे.जोशी, राजपूत सा., प्रो. रणवीर सक्सेना, वी.पी. काम्बोज, रामचन्द्र शुक्ल (बनारस) आदि थे।

कला सृजन

कला की अनेक विधाओं में आपने कार्य किया जैसे संयोजन, व्यक्ति चित्रण, दृश्य चित्रण, अलंकरण, स्थिर-चित्रण, नेचर स्टडी, रेखांकन, कोलाज आदि, किन्तु आपकी सर्वाधिक रुचि संयोजन, दृश्य-चित्रण एवं नेचर स्टडी में रही है।

संयोजन अधिकांश वॉश और टेम्परा में बनाये। कालिदास साहित्य एवं ग्रामीण जीवन, लोकोत्सव आपके प्रिय विषय थे। वाश तकनीक सर्वाधिक कठिन तकनीक है। इस तकनीक का आविष्कार कला गुरु अवनीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा किया गया था। आधुनिक भारतीय कला जागृति काल में बंगाल शैली का महत्त्वपूर्ण योगदान है। वॉश तकनीक बंगाल शैली की प्रमुख विधा है। यह सम्पूर्ण देश में लोकप्रिय हुई। प्रो. शिवकुमारी जी वॉश तकनीक की सिद्धहस्त कलाकार थीं। कालिदास साहित्य की नायिकाओं का अति सुन्दर लावण्यपूर्ण चित्रण प्रो. शिवकुमारी जी द्वारा किया गया। मेघदूत काव्य की यक्षणियाँ अति सुन्दर कमनीय और भाव प्रधान जितनी आपने बनाई अन्य कलाकारों की रचनाओं में दिखाई नहीं देती विशेषकर मुखमुद्रा एवं केश-सज्जा एवं

अलंकरण अद्भुत है। वॉश पद्धति के अतिरिक्त टेम्परा तकनीक में भी आपने अनेक चित्र बनाये।

दृश्य-चित्रण भी आपका प्रिय विषय रहा है। इस हेतु आपने बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री, यमुनोत्री, शिमला, मसूरी, ऋषिकेश, राजस्थान के कोटा, बूँदी, जयपुर, उदयपुर जाकर चित्र बनाये। नेपाल, कन्याकुमारी, महाराष्ट्र, कलकत्ता आदि स्थानों पर कई-कई दिनों तक रहकर जलरंग में सुन्दर दृश्यचित्र बनाये। तेल माध्यम में भी आपने चित्र बनाये।

नेचर विशेषकर फूल-पत्तियों के तेल माध्यम में भी आपने अद्भुत यथार्थवादी चित्रों की रचना की है। कमल पुष्प चित्रण आपका प्रिय विषय रहा है। आलेखन के भी चित्र मानवाकृतियों के साथ अद्भुत बनाये। व्यक्ति चित्रण, कोलाज एवं स्थिर चित्रण के कुछ चित्र प्राप्त होते हैं।

छठे दशक की उनकी एक ड्राइंग कॉपी में नारी केश शृंगार के रेखाचित्र प्राप्त होते हैं। भाँति-भाँति की केश सज्जा, जूड़े प्राचीनकाल में महिलाएँ बनाकर अपने सौन्दर्य वृद्धि में चार चाँद लगाती थीं। ऐसे अनेक रेखाचित्र उपलब्ध हुए हैं। अजन्ता, बाघ, सिगरिया एवं मध्यकालीन यक्षिणी प्रतिमाओं की केश सज्जा में ऐसी ही विविधता है।

मानव आकृतियों के भी जीर्ण-शीर्ण कागज भी उनकी कला सामग्री में मिले हैं। जो आकृतियाँ उपलब्ध हैं उनमें गडरिया लोहार परिवार दृष्टिगोचर होता है। कुछ लघु आकार के संयोजन जो मालवा के तीज-त्योहार से सम्बन्धित हैं, अद्भुत हैं। जैसे- दीप दान,दीपावली, हरियाली अमावस, झूल-झूलती कन्याएँ, ज्वार (उगा हुआ धान) को विसर्जित करने जाती हुई महिलाएँ आदि।

पुरस्कार

सन् 1958 से शासकीय स्तर पर अखिल भारतीय कालिदास समारोह मनाया जाने लगा। इस प्रथम आयोजन का उद्घाटन भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद जी द्वारा किया गया। इसी समारोह में अखिल भारतीय कालिदास प्रदर्शनी स्व. डॉ. वि.श्री वाकणकर के प्रयास से प्रारंभ हुई। इस प्रर्दशनी में सुश्री शिवकुमारी रावत भी पुरस्कृत हुईं। सिंहस्थ मेला समिति ने भी आपको प्रशस्ति पत्र देकर सम्मानित किया था।

एकल प्रदर्शनी

मैडम शिवकुमारी की तीन एकल प्रदर्शनियों का आयोजन हुआ। प्रथम एकल प्रदर्शनी माधव महाविद्यालय के गाँधी हॉल में आयोजित हुई। सन् 1965 में स्व. राजमाता विजयाराजे सिन्धिया ने इस प्रदर्शनी का उद्घाटन किया था। दूसरी प्रदर्शनी सीता कला दीर्घा वाकणकर शोध संस्थान 1998 में हुई थी। इस प्रदर्शनी का अवलोकन तत्कालीन भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष स्व. कुशाभाऊ ठाकरे जी और श्री नरेन्द्र मोदी (वर्तमान प्रधानमंत्री) ने भी किया था। तीसरी प्रदर्शनी संस्था नव संवत् नव विचार के प्रयास से कालिदास अकादमी में आयोजित हुई। सन् 2013 में आयोजित इस प्रदर्शनी का अनेक विद्वानों ने अवलोकन किया।

समूह प्रदर्शनी

प्रो. शिवकुमारी जी एकान्त साधिका थीं। कुछ ही प्रदर्शनियों के प्रमाण उपलब्ध होते हैं। गुरु प्रेरणा से अखिल भारतीय कालिदास प्रदर्शनी में सन् 1956 से 1967 तक भाग लेती रहीं। रिद्म आई सोसायटी भोपाल की प्रदर्शनी में भाग लिया (1966)। प्रतिकल्पा प्रदर्शनी में भाग लिया (1968 उज्जैन)। काठमाण्डू नेपाल में चित्र प्रदर्शित हुए (1967)। माधव महाविद्यालय, उज्जैन के चित्रकला विभाग की प्रदर्शनी में आपके चित्र प्रदर्शित हुए (1968-72)। जय बांगला प्रदर्शनी इन्दौर 1971 और विश्व हिन्दू परिषद् ऑफ अमेरिका प्रदर्शनी 1984 में भी आपने भाग लिया।

कार्यशाला एवं कला शिविर

प्रो. शिवकुमारी अधिकांश समय स्वयं में मगन चित्रांकन करती रहती थीं या सोचती रहती थीं, किसी नई कृति के सृजन के लिए। अपवादस्वरूप कुछ कार्यशाला और कला शिविरों में उन्होंने भाग अवश्य लिया। अ.भा. समर स्कूल जबलपुर 1972, फ्रेस्कों तकनीक कैम्प इंदिरा कला एवं संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़1984, कलावर्त न्यास उज्जैन 1997, 98 मानव संकेत अकादमी उज्जैन 2002, 2004 कालिदास अकादमी शिविर उज्जैन 2003।

सम्मान

नाम, दाम, सम्मान, प्रचार आदि से वे सदैव दूर रहीं, किन्तु अति आत्मीय सम्मान के लिए वे सहमत हुईं। इस शर्त पर कि वे कोई उद्बोधन भाषण नहीं देंगी। जो सम्मान उन्होंने स्वीकार किये वे इस प्रकार हैं, श्रेष्ठ महिला कलाकार सम्मान श्रीमती राजमाता विजयाराजे सिन्धिया जन्म अर्धशताब्दी 1968 ग्वालियर, जगदीश भसीन मेमोरियल लायब्रेरी उज्जैन 1990-91, संस्कार भारती उज्जैन 2006, अष्टम राज्य स्तरीय कालिदास समारोह 2007।

उपर्युक्त के अतिरिक्त कुछ उल्लेखनीय कार्य भी उनके द्वारा दिये गये जैसे कलागुरु चित्रकार मास्टर मदनलालजी की स्मृति में प्रारंभ चित्रकला महाविद्यालय, उज्जैन की वे अवैतनिक प्राचार्य रहीं। संयोजक लोककला चित्र प्रदर्शनी भारतीय हिन्दी परिषद् 22वाँ वार्षिक अधिवेशन 1966। माधव महाविद्यालय उज्जैन, आकाशवाणी इन्दौर पर कला आलेख, स्व. पद्मभूषण कवि डॉ. शिवमंगल सुमन की काव्यकृति ''मिट्टी की बारात'' का आलेखन, संस्कृत के विद्वान् प्रो. व्ही. वेंकटाचलम् की पुस्तक के सुन्दर चित्र के लिए साहित्य अकादमी दिल्ली ने प्रो. शिवकुमारी जी को धन्यवाद प्रेषित किया था।

इस आलेख में जो कुछ भी संक्षिप्त वर्णन किया गया है वह बटलोई का एक चावल मात्र है। जितनी अच्छी वे चित्रकार थीं उतनी ही अच्छी सुयोग्य शालीन मृदुभाषी सहृदय महिला थीं। उन्हें स्व प्रचार का मोह नहीं था। अपने में मगन और सृजन बस यही उनकी दुनिया थी। वे सदैव स्मरणीय हैं।

112, संतनगर, इन्दौर रोड, उज्जैन
मो.नं.9977050269

सुधिजनों की दृष्टि में शिवकुमारी जी का कृतित्व

श्रीमती शिवकुमारी जोशी उज्जैन की प्रतिष्ठित चित्रकार एवं कुशल चित्रकला अध्यापिका हैं। कला अध्यापिका के रूप में वे अपने विद्यार्थियों के बीच में काफी लोकप्रिय रही हैं। उनका समुचित देखभाल करती रही हैं और प्रोत्साहन प्रदान करती रही हैं। उनके चित्र सामाजिक सद्भावना से ओत-प्रोत, दर्शकों में सराहना प्राप्त करते रहे हैं। उन्होंने बहुत सारे महत्त्वपूर्ण चित्र बनाये हैं उनमें रूप-रंग का बड़ा ही आकर्षक सुमेल रहा है। उनके चित्र बड़े ही मनोहारी एवं प्रेरणादायक होते हैं। निश्चित ही वे उज्जैन के चित्रकारों में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं। इसके अतिरिक्त वे मानवीय गुणों से परिपूर्ण महिला हैं और सदैव कलाकारों का आदर-सत्कार करती रही हैं। जीवन में आई कठिनाईयों के साथ उन्होंने बहादुरी के साथ संघर्ष किया है और दूसरों के लिये प्रेरणा का स्रोत रही हैं। मेरी उनके लिये बहुत-बहुत शुभकामनायें।

प्रो. रामचन्द्र शुक्ल,
भूतपूर्व अध्यक्ष, कला-विभाग,
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस उ.प्र.

श्रीमती जोशी बड़ी मृदुल व स्नेही स्वभाव की एक सुसंस्कृत एवं सम्भ्रांत संस्कारों वाली महिला हैं। श्रीमती जोशी एक परिपक्व कलाकार हैं और जो कार्य (चित्रण) वह करती थीं उसकी उन्हें पूरी समझ थी। वे एक कुशल व निष्ठावान अध्यापिका और प्रशासक थीं।

प्रो. बी.पी. काम्बोज,
भूतपूर्व निदेशक, ललित कला अकादमी, नई दिल्ली
भू.पू. अध्यक्ष चित्रकला विभाग आगरा कॉलेज आगरा यू.पी. कला अकादमी देहरादून उत्तराखण्ड के संस्थापक

मैडम शिवकुमारी जोशी से संपर्क हुए 40 वर्ष से अधिक हो गये हैं। वे परम्परागत काम अधिक करती थीं। श्रीमती जोशी एक परिपक्व कलाकार होकर जो चित्रण वह करती थीं उसकी उन्हें पूरी समझ होती थी। वे एक कुशल व निष्ठावान अध्यापिका थीं और प्रशासक थीं। महाविद्यालयीन कला शिक्षा प्रणाली के बारे में भी सदैव जागरूक रही। श्रीमती जोशी बड़ी मृदुल व स्नेही स्वभाव की एक सुसंस्कृत एवं सभ्रांत संस्कारों वाली महिला थीं।

श्रेणिक जैन,
वरिष्ठ चित्रकार, इन्दौर

श्रीमती जोशी से मेरा कई दशक पूर्व से पारिवारिक सम्बन्ध है। श्रीमती जोशी बहुत ही सुन्दर चित्र बनाती हैं। संस्कृत अध्ययनशाला के लिये उन्होंने बहुत ही सुन्दर सरस्वती का चित्र बनाया जिसका आकार 4'×6' फीट है। बाद में कालिदास अकादमी के लिये भी उन्होंने एक सुन्दर चित्र का निर्माण किया। महाकवि कालिदास की रचनाओं पर बहुत ही सुन्दर चित्र संयोजन आपके द्वारा बनाए गए। आपकी आकृतियों में नारी की सुंदरता उसकी कमनीयता और उसकी भाव प्रबलता का अद्भुत संयोग है। कलम की बारीकी, भाँति-भाँति की सज्जा, आभूषण तथा चित्र में प्राकृतिक एवं काल्पनिक आलेखन का सुन्दर समावेश होता है। वॉश तकनीक की वे सिद्धहस्त कलाकार हैं। यह तकनीक अत्यधिक कठिन और धैर्य के साथ इसका प्रयोग किया जाता है। समय भी बहुत लगता है। आपका दूसरा रूझान प्रकृति में बैठकर दृश्य चित्रण का रहा है और इस हेतु आपने देश के कई स्थानों की यात्राएँ की हैं। हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक आपने दृश्य चित्रण हेतु भ्रमण किया है। वे प्रदेश की शीर्ष महिला चित्रकार हैं, साथ ही कलागुरु भी हैं। उनके अनेक शिष्य हैं जो देश के विभिन्न भागों में कार्यरत हैं।

स्व. प्रो. श्रीनिवास रथ
पूर्व निदेशक - कालिदास अकादेमी, उज्जैन

शिवकुमारी रावत के चित्रों में पूर्ण भारतीयता के दर्शन होते थे। सच्ची लगन काम के प्रति ईमानदारी उनके चित्रों में स्पष्ट से दिखाई पड़ती थी। रंगों की ताजगी भारतीयता की छाप और रेखाओं का लचीलापन, लयात्मकता सबके सब इस बात को साबित करते थे कि यह चित्र पूर्णरूपेण भारतीय कलाकार द्वारा चित्रित हैं। व्यक्तित्व में भी शिवकुमारी का सरल स्वभाव एवं सादगीपूर्ण जीवन में विश्वास था। उनको चमक-दमक से हमेशा दूर ही पाया।

प्रो. हरि भटनागर
ख्यात कथाकार, भोपाल

माधव महाविद्यालय में चित्रकला में एम.ए. करने के लिये मैंने प्रवेश लिया था और पहले दिन ही मुझे गुरु के रूप में डॉ. श्रीमती शिवकुमारी जोशी के दर्शन हुए। उनके कलात्मक, शान्त, सुन्दर, सौम्य, मधु मुस्कान के साथ ही अनुशासित स्वरूप और व्यक्तित्व को देखकर मैं बहुत प्रभावित हुई। हर रोज कक्षा में चित्रकला का शिक्षण, प्रशिक्षण देते हुए बड़े ही एकाग्रचित्त से कला में लीन होकर बहुत ही सुन्दर उत्कृष्ट चित्र रचना बड़ी ही सरलता से पूर्ण कर देने के अद्वितीय गुणों का मुझ पर एवं विद्यार्थियों पर भी अत्यधिक प्रभाव सदा ही बना रहता था। उनकी चित्रकला में जलरंगों का (वॉश पद्धति) पारदर्शी एवं तैलीय रंगों का बहुत ही सुन्दर, अद्भुत, अतुलनीय प्रयोग उनकी चित्रकला कृति में दिखाई देता है। फिर चाहे वो मानवाकृति, फूल-पत्ती, पेड़, नदी, पहाड़, बादल, पशु-पक्षी या विभिन्न विषयों के संयोजन हों। गुरु माँ डॉ. शिवकुमारी जोशी जी की स्मृति को भावमय नमन।

डॉ. श्रीमती पूनम व्यास,
निदेशक-
मृदंगाचार्य पं. रामदास कला संगम कथक नृत्य कला केन्द्र, उज्जैन

हँसमुख, सहज, सरल एवं सौम्य प्रकृति की कलाकार प्रो. शिवकुमारी जोशी अपने शिष्यों एवं कलाकारों के मध्य विशेष लोकप्रिय हैं। भारतीय पारम्परिक, टेम्परा, जल व वॉश पद्धति रंग के चित्रों की निपुणता ने आपको विशेष प्रसिद्धि दिलाई। यही कारण था कि आपके शिष्यों ने भी इसका भरपूर लाभ उठाया और निपुणता प्राप्त की। आपके दृश्य चित्र व संयोजन की वृहद् शृंखला सदा कला जगत् व कला रसिकों को आकर्षित करती रहती हैं। चित्र संयोजन व दृश्य चित्र में आपके द्वारा किए नित नए प्रयोग शिक्षार्थियों व कलामर्मज्ञों को सदा प्रभावित करते रहे हैं।

प्रो. डॉ. भवानीशंकर शर्मा

''वे पूर्व थीं मैं पश्चिम''

कलागुरु एवं वरिष्ठ चित्रकार स्व. शिवकुमारी जोशी के पति ख्यात चित्रकार श्री श्रीकृष्ण जोशी से समावर्तन के संपादक श्रीराम दवे की बातचीत ।

उज्जैन के ऐतिहासिक माधव महाविद्यालय के चित्रकला विभाग की प्राध्यापक और विभागाध्यक्ष रही स्व. शिवकुमारी रावत अद्‌भुत चित्रकार थीं। यह संयोग ही कहा जा सकता है उन्होंने अपने ही कलाशिष्य श्री श्रीकृष्ण जोशी से विवाह किया। इस प्रकार उनकी एक प्रेरक और स्मरणीय कला यात्रा प्रारंभ हुई। यहाँ प्रस्तुत है स्व. शिवकुमारी जी की यादों को सहेज कर रखने वाले कलाचार्य डॉ. श्रीकृष्ण जोशी से लिया गया एक अंतरंग साक्षात्कार।

आपका शिवकुमारी जी से परिचय कब और कहाँ हुआ ?

मैं माधव महाविद्यालय से बी.ए. भाग दो में अध्ययन कर रहा था। चित्रकला मेरा एच्छिक विषय था। अगस्त 1964 से विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन ने दो नये विषय प्रारंभ किये। चित्रकला स्नातकोत्तर और पुरातत्त्व। दोनों विषय कविवर डॉ. शिवमंगलसिंह 'सुमन' के अथक् प्रयास से प्रारंभ हुए। चित्रकला विभाग में छोटा-सा आयोजन था। हमारे सर स्व. सी.एच. खाडिलकर जी ने मैडम रावत का और श्री वाकणकर जी का सभी छात्रों से परिचय कराया। उस समय मैडम सुश्री शिवकुमारी रावत के नाम से जानी जाती थी। इस प्रथम भेंट में विशेष कुछ परिचय नहीं हो पाया। चित्रकला का केवल एक पीरियड होता था। अन्य विषयों के लिए दूसरी कक्षाओं में जाना होता था। सन् 1966 में मैंने बी.ए. पास दिया। सहपाठी मित्र ईश्वरी रावल (प्रसिद्ध चित्रकार इन्दौर) ने एम.ए. चित्रकला में मुझे प्रवेश दिलाया। श्री रावल ने ही मैडम से मेरा परिचय कराया।

मैडम के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालिये।

मैडम के पिता स्व. ठा. गिरिराजसिंह जी रावत ग्राम जवासिया के जमींदार एवं देवास सीनियर रियासत के दीवान जी थे। माता स्व. श्रीमती भीष्मकुमारी जी बीकानेर राज परिवार से थीं। मैडम सौम्य, सलीका पसन्द और बेहद अनुशासित थीं। अनुशासन पसन्द थीं। शांत मनोयोग से अपना कर्म करती थीं। दयालु, मददगार और प्रोत्साहित करती थीं और अपने चित्रण कार्य में मगन रहती थीं।

उनकी कलात्मक विशेषताओं के सम्बन्ध में संक्षेप में बताइये।

सन् 1966-67 में मैं एम.ए. पूर्वार्द्ध में अध्ययन कर रहा था। तब वे हमें दृश्य-चित्रण, संयोजन विषय पढ़ाती थीं। संयोजन के नियम, शरीरशास्त्र तथा विभिन्न भारतीय शैलियों का ज्ञान हमें मैडम से प्राप्त हुआ। अजन्ता, राजपूत, मुगल एवं पहाड़ी शैली की विशेषताओं का गहन अध्ययन हमें कराया गया। मैडम वॉश शैली की सिद्धहस्त कलाकार थीं। यह सर्वाधिक कठिन प्रक्रिया, तकनीक की शैली थी। इस शैली में बनाये उनके चित्र अतिसुन्दर थे। टेम्परा में भी उनका कार्य अनुपम था। हमारे द्वारा भी उपर्युक्त शैलियों में कार्य किया गया जहाँ सुधार की आवश्यकता थी। मैडम ने सुधार किया। मैडम ने कालिदास साहित्य पर वॉश एवं टैम्परा में अनेक चित्र बनाये थे।

मैडम का दूसरा प्रिय विषय दृश्य-चित्रण था। हमने सर्वाधिक दृश्य चित्र रामघाट के बनाये। साथ ही सिद्धवट, कालभैरव, त्रिवेणी, कालियादेह महल, ओंकारेश्वर, माण्डव के भी दृश्य चित्र बनाये। जलरंगों में दृश्य चित्रण कठिन कार्य था, किन्तु मैडम छात्रों का आत्मविश्वास बढ़ाती थीं। धीरे-धीरे जलरंगों में हमने भी कुशलता प्राप्त की। इसी प्रकार आलेखन कला का मर्म भी हमने मैडम से जाना। उनकी कला के दर्शन हमें माधव महाविद्यालय में आयोजित उनकी एकल प्रदर्शनी में हुए। इस प्रदर्शनी का उद्‌घाटन ग्वालियर स्टेट की महारानी श्रीमती विजयाराजे सिन्धिया द्वारा दिया गया। सन् 1965 की इस प्रदर्शनी में उनकी कला की विविधताओं के दर्शन हम सभी छात्रों को हुए। मेरे जीवन का पहला अवसर था जब मैंने मैडम के नेतृत्व में अपने सहपाठियों के साथ शैक्षणिक यात्रा की। अजन्ता के चित्र वैभव को देखा लगभग डेढ़दो हजार वर्ष पूर्व के चित्र कितने सुन्दर और सजीव थे। वास्तव में अर्थ और प्रसिद्धी प्रचार से दूर मैडम की कला साधना अद्वितीय थी।

प्रथम कालिदास मारोह का उद्‌घाटन करने आये प्रथम राष्ट्रपति डॉ.राजेंद्र प्रसाद के साथ शिवकुमारीजी एवं अन्य संस्कृति संपन्न लोग

तैल-चित्रण में पेलेट नाईफ का प्रयोग पहली बार देखा। भिन्न-भिन्न प्रकार के नाईफ का प्रयोग और रंगों की शुद्धता, चमक सब कुछ अद्भुत था। मैडम अपने तैल-चित्रों में नाईफ का कुशल प्रयोग करती थी।

वे भावनगर की मिट्टी से छोटी-छोटी मूर्तियाँ भी बनाती थीं। इस कार्य के लिए एक स्टेण्ड भी उन्होंने बनवाया था।

इसके साथ वे रंगीन पत्थरों व अन्य वस्तुओं से बहुत सुन्दर सज्जात्मक डेकोरेशन का निर्माण करती रहती थी। संक्षेप में वे पूर्णतः कला को समर्पित थी। वस्त्रों पर फेब्रिक कलर से बहुत ही सुंदर आलेखन बनाती थी। बातिक प्रिंट में भी उनकी रुचि थी।

साथी चित्रकारों के साथ शिवकुमारी जी

श्रीमती जोशी की कला पर किसका प्रभाव था।

श्रीमती जोशी ने प्रारम्भिक ज्ञान कला शिक्षिका स्व. ब्रजकुमारी सक्सेना से विद्यालयीन अध्ययन के समय लिया था, पश्चात् महाविद्यालयीन अध्ययन के समय स्व. प्रो. सी.एच. खाडिलकर जी से लिया और सन्ध्याकालीन कक्षा भारती कला भवन में स्व-पद्मश्री वि.श्री. वाकणकर जी प्राप्त किया। स्वयं लगन और तपस्या से उन्होंने अपनी मौलिक शैली का निर्माण किया। वाकणकर जी के शिष्य स्व. सचिदा नागदेव, मुजफ्फर कुरेशी, रामचन्द्र भावसार, सुश्री कमल चव्हाण आदि गुणी कलाकारों में जाने जाते हैं। ये सभी मिलकर अपनी-अपनी कृतियों पर समीक्षा करते थे। इस प्रकार उत्तरोत्तर इनकी कला का विकास होता रहा। वाकणकरजी को अपनी शिष्या की कला पर गर्व था। श्रीमती जोशी की कलाकृतियाँ देखने वालों में स्व. पद्मश्री नाना बेन्द्रे, स्व. डी.जे. जोशी, स्व. एल.एस. राजपूत, कुमारिल स्वामी, रणवीर सक्सेना आदि अनेक वरिष्ठ कलाकार और गुरुजन थे। श्रीमती जोशी की कला के प्रशंसक स्व. पद्मभूषण कवि शिवमंगलसिंह सुमन जी, आचार्य व्ही. वेंकटाचलम् , आचार्य प्रभातकुमार भट्टाचार्य, आचार्य श्रीनिवास रथ आदि अनेक विद्वान् रहे हैं। डॉ. सुमन जी ने श्रीमती जोशी को माधव महाविद्यालय में बुलाकर व्याख्याता नियुक्त किया। वेंकटाचलम् जी ने संस्कृत अध्ययनशाला के लिये सरस्वती देवी का आदमकद चित्र बनवाया। प्रो. प्रभातकुमार भट्टाचार्य जी ने भी सरस्वती देवी का चित्र बनवाया। सरदार आंग्रे और स्व. राजमाता सिन्धिया भी श्रीमती जोशी की कला के प्रशंसक थे। श्रीमती राजमाता जी ने ग्वालियर में अपनी 50वीं जन्म वर्षगाँठ पर श्रीमती जोशी को सम्मानित किया।

कलागुरु के रूप में श्रीमती जोशी के बारे में संक्षिप्त विचार व्यक्त करें।

श्रीमती जोशी पूर्व और पश्चिम दोनों ही शैलियों की विद्वान् थीं। पढ़ाते समय समयसीमा से कहीं अधिक समय तक अध्यापन करती थीं। भारतीय कला शैलियों और पश्चिम की कला शैलियों का अन्तर बताती। कठिन श्रम अपने छात्रों से कराती थीं। दृश्य चित्रण हेतु स्वयं छात्रों के साथ दृश्यस्थल पर जाती थीं। उनके गुणी शिष्यों में ईश्वरी रावल, डॉ. एस.के. जोशी, राधेश्याम भारद्वाज, डॉ. लक्ष्मीनारायण भावसार, स्व. प्रो. भंवरलाल कुल्मी, प्रो. बी.एल. सिंहरोड़िया, लक्ष्मीनारायण सिंहरोडिया, सतयनारायण मौर्य 'बाबा', राजेश जोशी, राजेन्द्र जोशी, ज्ञानेश्वर दुबे, डॉ. रंजना वानखेड़े, स्व. डॉ. कुसुम भैय्या, डॉ. पुष्पा द्रविड़, डॉ. पूनम व्यास, डॉ. वाघ, डॉ. अल्पना उपाध्याय आदि अनेक रहे हैं। उनकी एक शिष्या डॉ. दीप्ति ओसवाल ने श्रीमती जोशी के व्यक्तित्व कृतित्व पर शोध-प्रबन्ध लिखा है। कुछ लघुशोध भी लिखे गये हैं।

आपने शिवकुमारी जी की कला दृष्टि, व्यक्तित्व, पसन्द ना-पसन्द आदि पक्षों पर महत्त्वपूर्ण बातें बताई हैं। एक पत्नी के रूप में उन्हें पाकर आपने अपने अनुभव अभी तक नहीं बताए हैं। कृपया बताने का कष्ट करें।

मैं इसे ईश्वरीय कृपा मानता हूँ। कहते हैं जोड़े ऊपर से बनकर आते हैं। यहाँ भी ऐसा ही हुआ है। वे अद्भुत थीं। मेरी कल्पना से बहुत ऊपर। हमेशा प्रेरणा देतीं। निराशा में आशा का दीप जलाती। सदैव कर्म करने को प्रेरित करतीं और सन्तोष धन को सबसे श्रेष्ठ मानती। नाम, दाम से दूर केवल साधना को महत्त्व देती। उनमें वणिक वृत्ति किंचित् भी नहीं थी। वे पूर्व थी मैं पश्चिम था। कला ने सेतु का कार्य किया। और क्या कहूँ वे महामानव थीं।

मैडम की स्मृतियों को आप किस तरह अक्षुण्ण रखते हैं। उनकी कोई खास बात या पसन्द स्मरण आ रही हो तो कृपया बताएँ।

मैंने पूर्व में कहा है कि कला साधना है, पूजा है। उनसे भी मुझे यही प्रेरणा मिली। उनकी स्मृतियों को सँजोने के लिए मैंने उन पर लघु शोध लिखाए हैं। उनके जीवनकाल में उनकी अनिच्छा होते हुए भी उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर शोध-प्रबन्ध लिखाया है। जब उन्हें शोध-प्रबन्ध की एक प्रति भेंट दी तो वे केवल मुस्कुरा दीं। उनकी खास बात सदैव कल्पना को आकार देना। मीठे-मीठे गीत गुनगुनाना। सबसे निःस्वार्थ मिलना, दुष्टों में भी संत के दर्शन करना। मेरे लिए यह सब अद्भुत था, आश्चर्यजनक था। अतिथि देवो भवः के अनुसार सभी का यथाशक्ति स्वागत सत्कार करना। अर्थात् ''कितनी भी तारीफ करूँ रूकती नहीं जुबाँ।''

मैडम का निधन कब हुआ, किन परिस्थितियों में हुआ ?

जीवन के उत्तरार्द्ध में उन्हें 'रेकी' विधा ने आकृष्ट किया। इस विधा को सीखकर वे आईं और उज्जैन में इसके कई शिविर आयोजित किये। वे प्रारंभ से ही शारीरिक रूप से अस्वस्थ थीं। नियमित घूमना-फिरना, व्यायाम आदि करना उनकी रुचि में नहीं था। एक बार वे खोई-खोई थीं, अचानक गिर गईं फ्रेक्चर हो गया जो जुड़ना मुश्किल था। सन् 2010 में इसी स्थिति में शैय्या पर लेटीं फिर नहीं उठीं। बेटी डॉली उन्हें अपने घर ले गईं। डॉली उनकी आत्मा थी। शय्या पर बैठकर उन्होंने अनेक चित्र बनाये, रेखांकन रचे। फूल-पौधों और बैलों के अतिसुन्दर चित्र बनाये। ये धरोहर मेरे पास संग्रहित हैं। 1 नवम्बर, 2014 की प्रथम ठण्ड वे सह न सकीं। प्रातः 5:45 पर अपनी प्रिय कन्या की गोद में उन्होंने प्राण त्यागे। वे आज भी हमारे साथ हैं और नित्य स्मरणीय हैं।

26, निर्माण नगर (रवीन्द्र नगर के पास)
उज्जैन - 456010 मोबाइल : 094259-15010

अनामिका चक्रवर्ती की कविताएँ

युवा कवयित्री अनामिका चक्रवर्ती की कविताओं में स्त्री और उसकी मनोदशा मुख्य भाव के रूप में प्रकट होती हैं। इसके अलावा अपने आसपास की चिन्ताएँ भी बहुत मासूमियत के साथ उनकी कविताओं में अवतरित होती हैं। कई बार काव्याभ्यास-सी लगती कविताओं की परत को उघाड़ कर देखने पर वहाँ पर एक मासूम स्पंदित मन दिखाई देता-एक बेहद बेचैन मन! कई बार लगता है कि वे अपने भीतर एक भाषा की अनवरत खोज में है। संवेदनों और रचना-प्रक्रिया की इस जद्दोजहद को अनामिका की कविताओं में देखना एक दिलचस्प अनुभव है। पहली कविता 'सहमे हुए लोग' में वे तमाम स्त्रियों को समय के साथ बीतते हुए देखती हैं। किस तरह कोई अस्तित्व छटपटाते हुए यादों के धुंधलके में छुप जाता है-'तारीखें बरसी बन गई/ वे बीते पल की खबरें बन गई।' 'सुख का थैला' हमारे पर्यावरण की चिन्ता करती हुई कविता है जिसमें कवयित्री ने अपने निजी अनुभवों को गूंथा है। यह एक डायरेक्ट कविता है जिसमें यथार्थ का बयां तो है ही साथ ही वैज्ञानिक तर्क भी। स्त्री की चिन्ता का दायरा व्यापक है और पर्यावरण संरक्षण भी उसकी सोच का अंग है, यह कविता इसी सजगता का पता देती है। 'शिकायतें' कविता में युवा कवयित्री शिकायतों से भरी दुनिया में घूमती है। वह शिकायत की हर बुनावट की पहचान करना चाहती है। 'शिकायतें अपनों से ही होती हैं' जैसे सूक्त को जहाँ एक ओर वह आत्मीय भाव से कविता में लाती है-'शिकायतों का अपनापन छोड़े नहीं छूटता/ न होने पर शिकायतें/ अपनेपन का अहसास छूटता-सा जाता है।' वहीं दूसरी ओर वह शिकायत की प्रतिरोधी ताकत को भी पहचानती है।-' वे वहाँ नहीं बनती कभी शिकायत/ जहाँ रहती है हमें चाह शिकायतों की।' 'कितनी भीड़ है' एक बहुत ही सघन कविता है जो अंडरटोन होने की रिस्क लेते हुए भी एक उजागर कविता बनती है। यहाँ कवयित्री ने भीड़तंत्र के समूचे मनोविज्ञान की थाह लेने की कोशिश की है-? बहुत लम्बे रास्ते से/ गुजरे कई सारे झूठ।' 'महानगर' जैसी छोटी कविता में अनामिका ने महानगर और कस्बे का विलोम बहुत मार्मिक और बारीकी से व्यक्त किया है-?मिट्टी के आँगन पर पड़ी दरारें/ नहीं भरी जा सकती कंक्रीट से।' 'रात का बचा हुआ खाना' जीवन में प्रचलित अंधविश्वासों को परम्परा मान लेने और फिर हकीकत जानकर उनसे मोहभंग की कविता है। यह कविता बताती है कि परम्पराओं की जकड़न से मुक्ति की कामना या एक तार्किक प्रतिरोध (भले वह पाप-पुण्य की भाषा में ही हो) एक आम भारतीय घरेलू स्त्री के भीतर मौजूद है। वह इनसे उबरने की लगातार कोशिशों में है। 'जूड़े में खट्टी गंध की तरह' एक आम घरेलू स्त्री की दिनचर्या का मार्मिक बयान है। कहने को तो यह एक स्त्री के काम, थकानऔर मनोदशा को व्यक्त करती है लेकिन इसके जरिये वह एक विमर्श भी रचती है। हमारे घर-संसार को संवारने वाली स्त्री के अंतर्मन की उथल-पुथल से हम कहाँ वाकिफ होते हैं! स्त्री की थकान और नींद के जरिये अनामिका उसके अंतर्मन की परतों का संसार उजागर करती हैं और उसमें आपको शामिल होने का आवाहन भी-? मैं फीकी-सी फिर करती हूँ कोशिश/ जिंदगी की हांडी में/ नमक स्वादानुसार डालने की।' यह पंक्ति अपने आप में स्त्रीमन के कई संस्तरों को उघाड़ती है। 'इश्तेहार' कविता हमारे घर-परिवार की कविता है जिसमें एक अर्धसाक्षर माँ अपनी बेटी के लिए सुयोग्य वर तलाशना चाहती है-अखबारी वैवाहिक विज्ञापन के जरिए! यहाँ हमारे समाज में बेटी को लेकर व्याप्त रूढ़सूक्ति 'पराया धन' के प्रति कवयित्री का हस्क्षेप रेखांकित करने योग्य है। 'अन्तिम यात्रा' कविता आत्महत्या को लेकर पसोपेश की कविता है। इसमें कटाक्ष है, एक 'विट' है। इसमें प्रकटत: आत्महत्या को जस्टिफाई करती कवयित्री व्यंजना के जरिए इस पसोपेश को व्यक्त करती है-? हाँ, बहुत सरल उपाय है आत्महत्या/ बिना खुद को हत्यारा बनाए/ अपनों की हत्या कर/ उन्हें जीवित छोड़ देना।' 'दीदी' कविता भी एक पारिवारिक मार्मिक काव्य-चित्र है जिसमें त्याग, समर्पण और उत्तरदायित्व जैसे भावों के दृश्य-बंधों को कविता में पिरोया गया है। यह एक सच है कि हमारे समाज में अभी भी ऐसे मूल्य बचे हुए हैं जिनके होने से परिवार बचा हुआ है। 'पृथ्वी और रोटी' कविता में कवयित्री ने अपनी स्थानीयता को मिट्टी के प्रतीक के रूप में तरजीह दी है। इसमें कई दृश्य-बिम्ब अत्याकर्षक हैं-? रोटी हर दिशा में गोल ही होती है/ भूख के नक्शे में भी/ जैसे पृथ्वी होती है गोल ब्रम्हाण्ड के नक्शे में।' युवा कवयित्री अनामिका चक्रवर्ती की कविताएँ उन वृहद चिन्ताओं का पता है जिन्हें आज की स्त्री अपने लेखन के केन्द्र में लाना चाहती है। अनामिका से कविताई के स्तर पर सघनता की उम्मीद उनकी अंदाजे बयां की मासूमियत से संवाद करती है- एक बेहतर रचना-संसार की खातिर!

निरंजन श्रोत्रिय

सहमे हुए लोग

वे घटनाओं की तरह घटती रहीं
हादसों की तरह अपने परिवारों पर गुजरती रहीं
इज्जत से सना हुआ खून
सड़कों, चौराहों, थानों पर
समाज के ठेकों पर बिखरकर सूखता रहा।

लोग राहगीरों से ठिठकते रहे
सहमते रहे
शर्म से जमीन पर गड़ते रहे
डर के टूटते रहे

आवाजें उठीं, मशालें भभकी
फिर हवाओं में सिर्फ धुआँ रह गया
रात आँखों में गुजरते गुजरते
भोर की थकी हुई गहरी नींद हो गई

शहर के तिगड्डों पर
रेहड़ी वाले फिर जिन्दगी की पटरी पर आ गए
सारा वीभत्स आज, कल हो गया
तारीखें बरसी बन गई
वे बीते कल की खबरें बन गईं।

सुख का थैला

सुख का थैला घर रखकर
बाजार से लौटते हैं लोग पन्नियाँ लेकर
जिस पर लिखे होते हैं
ब्रांडेड कंपनियों के विज्ञापन और
ऑनलाइन शॉपिंग के पते

विज्ञापन को पन्नियों सहित
सहेज कर रख दिया जाता है अलमारियों में
गद्दों के नीचे और दरवाजों के पीछे कीलों में

इन कीलों में टंगे होते हैं
रोजमर्रा काम आने वाले कपड़ों के थैले
जिन्हें बनाया गया था पुराने चादर और पर्दों से
घर पर ही सिल कर
जो महीनों वहीं टंगे रहते हैं
घर से बाहर जाने वाला हर शख्स
जल्दबाजी में होता
थैले ले जाने की याद विस्मित हो जाती है
घर से निकलते हुए।

सौदा लेते हुए याद आते हैं थैले
सब्जी वाला टोकता है फिर
'आज फिर भूल आए बाबू'
कहते हुए अलग-अलग पन्नियों में
भर देता है तरोताजा सब्जियाँ और फल
हम ले आते हैं साथ
जीवन में ऑक्सीजन रोकने का सामान।

शिकायतें

शिकायतें खत्म होने से पहले
अपना एक सिरा छोड़ देती है
शिकायतों की वजह के दरवाजे पर
यूँ तो शिकायतों के अपने धागे होते हैं
जो बुनते रहते हैं शिकायतों के जाले
जिसमें कई बार उलझ जाते हैं वे खुद भी

मगर उलझना ही उनका मकसद नहीं होता
बीच-बीच में वो टूट जाना भी पसंद करते हैं
बीच के टूटे हुए खाली हिस्सों में वो रखते हैं
शिकायत की वजह को मान लेने का समर्पण
निकल जाना चाहते हैं
किसी भी तरह की ग्लानि से
मगर शिकायत जाते जाते
पलट जाती है कई बार

वजहों के दरवाजे पर
छोड़े गए सिरे के पास
फिर वहीं से शुरू होने के लिए
जहाँ से शुरू हुई थी कभी
शिकायतों का अपनापन छोड़े नहीं छूटता
न होने पर शिकायतें
अपनेपन का अहसास छूटता-सा जाता है

और होने पर शिकायतें
कुछ अपने छूटते से जाते हैं
न जाने कितनी टीस, कितनी प्यास
छुपी होती हैं शिकायतों में
इन शिकायतों से बहुत शिकायत है
वे वहाँ नहीं बनती शिकायत
जहाँ रहती है हमें चाह शिकायतों की।

तुम्हारा आना

तुमसे दूरी नापने का जो यंत्र था
वह तुम्हारी देह की गंध थी
जिसने कभी भी दूरी को
विरह का संजोग होने नहीं दिया
मुझमें पूरी तरह भर गए थे तुम
उस गंध का अलौकिक लवण
कण कण बनकर मेरी शिराओं में
रक्त की तरह प्रवाहित हो रहा था
यही था लावण्य

तुम्हारी प्रतीक्षा पर मैंने
आसन को परिपाटी कर सजाया
जो तुम्हारे आने के
पूर्ण विश्वास के रेशे से बुना था

परंतु वहाँ
समय के चिन्हित तट पर मैंने
तुम्हारे नाम के संबोधन को गले में अटका लिया
कि तुम्हारा आना जग न जान पाए।

तुम्हारी गंध की मादकता
स्नेह में संबोधित हो जाए
आलिंगन का स्पर्श पाकर
ऐसा दृश्य समुद्र का विस्तार हो
जैसे हमारा प्रेम एक रहस्य हो
अदृश्य दर्पण के सत्य में।

कितनी भीड़ है

बहुत ही कड़कती धूप में
उड़ती हुई ढेर सारी धूल
बहुत लंबे रास्ते से
गुजरे हुए कई सारे झूठ
कई उल्टे चेहरे से
दबी हुई आवाजों में निकले
दोहरे लफ्ज
शातिर हँसी आगे लिखे सच्चे नाम
यकीन के मलबे से जाम पड़ी जिन्दगी
बेचने और लूटने का हुनरमंद
कैक्टस पर अंडे उगाकर
दरवाजे पर सजाने वाले

भीड़ की भरसक कोशिशें
अकेला न होने देने की
किसी रास्ते के नजर न आने की
कामयाब हो जाती है
आँखों और दुनिया के बीच पड़ी
एक खारे पानी की दीवार के सामने
बेशक बहुत भीड़ है बिना किसी नाम की।

महानगर

सांकल होती है शहर के दरवाजों पर
घरों में कुंडियाँ नहीं होती
हर कस्बा शहर जाकर बूढ़ा हो जाता है
जवानी पगडंडियों पर छूट जाती है।

मिट्टी के आंगन पर पड़ी दरारें
नहीं भरी जा सकती कंक्रीट से
और जहाँ भर दी जाती
रिश्तों में दरारें पड़ जाती हैं।

नजर आता है आसमां गलियों सा
जमीं पर गलियाँ
अनाथों-सी लगती हैं

रौनकें सिर्फ रातों को होती है यहाँ
स्ट्रीट लाईटों और गाड़ियों की हेडलाइट्स से

दिन के उजाले डरते हैं जहाँ
खिड़कियों के अंदर झांकने से

वहाँ जाने कैसे दिन
और कैसी रातें होती हैं।

रात का बचा हुआ खाना

बची हुई बासी रोटियाँ
और बचे हुए बासी भात के लिए
जब ताकते हैं गली में गाय
और गैलरी की रेलिंग पर आते कौवों को
तो मानकर चलते हैं कि
गाय को खिलाना है बड़ा पुण्य
काला कौवा बचाएगा शनि के प्रकोप से

मन को मना ही लेते हैं कि मगर फिर
एक अपराध बोध से होता है मन खिन्न
जब सारा पुण्य कमा कर
सुबह की पहली चाय के साथ
अखबार के पन्ने पर
खाली खेत के बीच में लगे पेड़ से
फाँसी पर लटके किसान को देखते हैं
बढ़ता हुआ यह आँकड़ा
सारे पुण्य को पाप में बदलने लगता है

जूड़े में खट्टी गंध की तरह

धूप से सनी हुई दोपहर
मेरे पसीने से अपना चेहरा धोती है
और पसीने के नमक से उसका चेहरा
दमक उठता है
अपने दमकते चेहरे पर एक लाल टीका लगाते
ओढ़लेती है शाम का आँचल
जिसमें होती है सितारों से जरदोजी की कढ़ाई

शाम जितनी ढलती रात में
सितारों की चमक उतनी बढ़जाती है
और इन तीनों वक्त की भागीदारी में
होती हूँ मैं शामिल
अपने सपनों को बचा लाती हूँ
रात के सिरहाने तक
दिन भर वहाँ खोंसते-खोंसते
बार-बार ढीले होते जूड़े में काँटे की तरह कसकर
उतार देती हूँ अपनी पिंडली और एड़ी के दर्द को
कलफ लगी साड़ी की तरह बिस्तर पर

निकाल देती हूँ जूड़े से काँटे को
और फैला देती हूँ मोर पंख की तरह
बालों को पूरे तकिये पर

धीरे-धीरे नींद सोखती है बालों की नमी से नमक
जिसे धूप से सनी दोपहर
छोड़ गई थी मेरे जूड़े में खट्टी गंध की तरह

मगर हर दिन की तरह
नींद में नमक कम ही पड़ता
और रात बड़ी बेस्वाद-सी गुजरती है सुबह तक
मैं फिर से करती हूँ कोशिश
जिन्दगी की हाँडी में
नमक स्वादानुसार डालने की...।

इश्तेहार

हर शनिवार को बैठती थी
नजर गड़ाए अखबार पर
और पन्ना होता था मेट्रिमोनी का
अम्माँ ने कभी स्कूल का मुँह नहीं देखा था
मगर बेटियों को रट्टा लगाते
देखती सुनती रही न रहे उसके लिए काले अक्षर
भैंस बराबर
सीख गई वह पढ़ना थोड़ा-बहुत
हर शनिवार को ढूँढती थी
इश्तेहारों में बेटियों का जीवन
अपनी कोख में पाला था पराया धन
संस्कारों के सूद सहित
विदा जो करना था उन्हें।

अंतिम यात्रा

अपनी मानसिक हत्या का अनावरण कर
जब करना हो तुम्हें दैहिक आत्महत्या
तब कारण सहित एक स्पष्टीकरण लिख देना
जिससे तुम्हारी मौत के प्रश्नचिन्ह पर
बातों की मक्खियाँ न भिनभिनाए

करो कुछ ऐसा कि सांसों की रफ्तार बिना बढ़ाए
रक्त संचार को रोक दे धड़कन की लय को तोड़ दे

किसी मोह में न पड़ जाना
कि तुम्हारे जाने से बाधित होगा
कोई जीवन कोई हो जाएगा अनाथ
कोई बूढ़ा बन जाएगा जीवित लाश
पेट के लिए कोई बेवा
बन तो नहीं जाएगी बाजार की रौनक

बहुत सरल उपाय है आत्महत्या
बिना खुद को हत्यारा बनाए
अपनों की हत्या कर उन्हें जीवित छोड़ देना

किसी के जाने से
जीवन नहीं रूकता किसी का
न लो कोई बोझ अपनी आत्मा पर
अडिग रहो अपने फैसले पर
कैसे हो सकती है कायरता आत्महत्या
जबकि बहुत साहस चाहिए अपने को मिटाने

मन की इच्छाएँ

मन की इच्छाएँ रेल हो जाना चाहती हैं
कि अचानक उम्मीदों की बोगी
बेपटरी हो जाती है
यात्राएँ हरी झंडी पार नहीं कर पाती
स्थगित न हो दुर्घटनाग्रस्त हो जाती हैं
यात्री जख्मी होकर भी जारी रखते हैं यात्रा
मन में मुआवजे की उम्मीद लिए।

दीदी

दीदी जिसने अपनी ख्वाहिशों को
बना लिया था झोला
और अपने ख्वाबों को दो जोड़ी जूते
ख्वाबों के फीते कभी नहीं खुलते
फँसकर नहीं गिरेगी कभी
जानती थी वो
वो झोले में लाती थी हमारे लिए अन्न
हमारी डिग्रियों के लिए रोशनाई
और माँ का भरोसा
भरती रही वह बाबा के रिक्त को

दीदी का साहस हमारी छत थी
उसी के नीचे संजोया हमने अपना संसार

बिस्मिल्ला खाँ की शहनाई के साथ
सिर पर हाथ रखते गले लगाया था मुझे
आँसुओं से धुल रही थी बरसों की थकान
सौंप रही थी मुझे शादी का जोड़ा
जो दादी ने सौंपा था कभी माँ को दीदी के लिए।

पृथ्वी और रोटी

सुबह से रात तक
आकाश बदलता है कई रंग
मौसम भी बदलता अपने रंग
धरती की देह भी बदलती है
नहीं बदलती हैं तो वो हैं
रोटी और मिट्टी
रोटी हर दिशा में गोल ही होती है
भूख के नक्शे में
जैसे पृथ्वी होती है गोल ब्रम्हाण्ड के नक्शे में
मिट्टी अपना रंग नहीं बदलती
मिट्टी नींव है रोटी की ।

अनामिका चक्रवर्ती
जन्म : 11 फरवरी 1974 को जबलपुर (म.प्र.) में
शिक्षा : स्नातक, पीजीडीसीए
सृजन : विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में कविताएँ, लेख प्रकाशित। बॉलीवुड फिल्म के लिए गीत लेखन भी किया।
सम्मान : गंतव्य संस्थान, नईदिल्ली द्वारा 'राष्ट्रीय स्त्री शक्ति सम्मान'।
संप्रति : स्वतंत्र लेखन
सम्पर्क : नॉर्थ जेकेडी, वार्ड नंबर 7, मनेन्द्रगढ़, कोरिया (छ.ग.) 497ई446
मोबाइलः 8965033540
ई-मेलः anameeka112@gmail.com

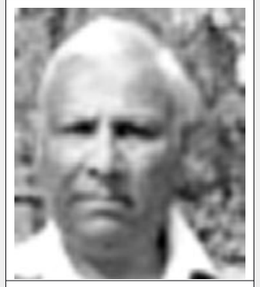

सरस निर्मोही
जन्म : 7 अगस्त 1956
निधन : 31 जनवरी 2019

विगत कुछ समय से बीमार चल रहे नगर की सक्रिय साहित्यिक संस्था 'हस्ताक्षर' के सूत्रधार, कवि-कहानीकार सरस निर्मोही का गत दिनों निधन हो गया है। निर्मोही जी तरल-सरल व्यक्तित्व के धनी थे तथा साहित्य में श्रेष्ठ रचनात्मकता के पक्षधर थे। समावर्तन के प्रारंभ से ही पाठक रहे सरस निर्मोही की कई कविताएँ तथा एक कहानी समावर्तन के अंकों में प्रकाशित हुई है। समावर्तन परिवार की ओर से उनकी स्मृतियों को नमन करते हुए यहाँ प्रस्तुत है उनकी एक अप्रकाशित लघुकथा 'वात्सल्य' जिसे उन्होंने गत दिनों समावर्तन को प्रकाशनार्थ भेजा था। - संपादक

वात्सल्य

सरस निर्मोही

परिवार में खुशी का वातावरण हो गया था। बेटी ने नरसिंग होम में सुबह ही बिटिया को जन्म दिया था। बेटी के ससुराल में सब बहुत खुश हुए। बधाईयों का सिलसिला चल पड़ा, दामाद भी जल्दी ही मिलने आ गये। आते ही नरसिंग होम पहुंचकर उन्होंने अपनी बिटिया को देखा परन्तु शाम ढलते ही नवजात शिशु को भय से चमकते देखा गया। रात तक यही स्थिति रही तो नरसिंग होम की चिकित्सका ने नवजात शिशुरोग विशेषज्ञ को स्पेशल विजिट के लिए बुलाया। रात का दस बज रहा था। नवजात शिशु रोग विशेषज्ञ ने शिश का चेकअप करके बताया कि इसने ठीक से दूध नहीं पीया है इसे जल्दी ही अलग से दूध पिलाना जरूरी है। मां के लिए भी जरूरी है कि इसे दुलारकर ठीक से दूध पिलाये। बच्चा भूखा है भूख की वजह से ऐसा हो रहा है। नवजात शिशु रोग विशेषज्ञ चिकित्सक स्थिति के आकलन के लिए वहीं रही। करीब एक घंटे बाद उन्होंने कहा कि रात का मामला है। आप घबराये नहीं। आब्जर्वेशन के लिए इसे नवजात आई.सी.यू. में भर्ती कर देते हें। वहां इसे विशेष देखभाल और चिकित्सा मिल जाएगी। जनवरी के पौष का महीना होने से सर्दी बहुत पड़ रही थी। नवजात आई.सी.यू. वाला चिकित्सालय 'शहर से बाहर था। वहां किसी के रुकने की मनाही थी, शिशुओं के अलावा वहां कोई नहीं होता। केवल नर्सेस और डॉक्टर्स को ही देखने की अनुमति थी। रात बच्चे को नर्सों के भरोसे छोड़ना पड़ा। दामाद बहुत घबराये हुए थे। उन्हें समझाइश देकर घर लाकर सुलाया। सुबह हम लोग जल्दी उठकर फिर से उस चिकित्सालय पहुंचे। जहां शिशुओं को कांच वाले बिस्तरों पर लिटाया गया था। मैं शिशुओं के बीच उस एक दिन की बच्ची को पहचान नहीं पाया किन्तु मेरे दामाद ने तुरन्त ही अपनी बिटिया को पहचानते हुए कहा- अरे वो जो अच्छे से खेल रही है वही तो मेरी बेटी है। वार्डन ने उसके कोड नम्बर के आधार पर पिता का नाम बताया जो मेरे दामाद का नाम था। तब ऐसा लगा जैसे पेड़ अपनी डाल पर खिले फूल के लिए चहक उठा।

एक पेड़

कमल चौपड़ा

कहीं भी जमीन नहीं मिल रही थी उसे। घर से वह काफी दूर निकल आया था। उसके एक हाथ में पोलीथीन की थैली थी जिसमें आम की कुछ गुठलियाँ थीं और दूसरे हाथ में लोहे की खुरपी थी। वह कहीं आम का पेड़ लगाना चाहता था पर कहीं उसे जगह नहीं मिल रही थी। आम इतने महंगे हो गये हैं कोई क्या खरीदे...?

कल शाम मां हिम्मत कर उसके लिये आम खरीद लाई। बहुत दिन बाद उसने आम खाया तो आम के स्वाद का जादू उसके दिलोदिमाग पर छा गया। वह बोला, - 'माँ मैं बड़ा होकर बहुत बड़ा आम का बाग लगाऊँगा और आम बहुत सस्ते बेचूँगा कि किसी को भी तरसना नहीं पड़ेगा।'

हँसने लगी माँ- 'कितने सस्ते बेचेगा आम?...आम का बाग कहा लगायेगा?...जमीन कहाँ से खरीदेगा?'

कुछ देर सोचने के बाद उसने कहा, - 'जब हम गांव जाते हैं, रास्ते में इतनी जमीन आती है वहाँ खेत ही खेत दिखते हैं। वहाँ आम का बाग लगाऊँगा।

'जब तक तू बड़ा होगा तब तक वहाँ भी मकान की मकान बन जायेंगे'

सारी रात वह सोचता रहा। सुबह उठते ही उसने आम की गुठलियाँ पोलीथीन की थैली में डाली और थैली को सीढ़ियों के नीचे छिपाकर स्कूल चला गया। स्कूल से आते ही वह आम का पेड़ लगाने के लिये निकल पड़ा।

अपने घर से दूर विशाल विहार में आ पहुँचा। वहाँ कोठियों केक बीच खाली पड़े एक प्लाट पर उसकी नजर पड़ी। उसे यह जगह आम के पेड़ के लिये ठीक लगी। खुरपी से वह गड्ढा खोदने लगा। एक आदमी उसकी ओर दौड़ता हुआ आया- ओये क्या कर रहा है?

डरते हुए उसने कहा- 'आम का पेड़ लगा रहा हूँ।''

औरत गुस्से में चिल्लाने लगी- 'भाग यहाँ से...हमें नहीं लगवाना पेड़ वेड़।

वह चुपचाप आगे बढ़गया। आगे एक औरज गह वह खोदने लगा तो एक आदमी आया और बोला- 'ये मेरा ठिया है। यहाँ मैं शाम को रेहड़ी लगाता हूँ...भाग यहाँ से! बताओ साला पक्का फुटपाथ तोड़ रहा है? भाग साले वर्ना।'

निराश और नाउम्मीद सा वह घर लौटने लगा। वह दुःखी था- 'ऐसे तो आम कभी भी रास्ते नहीं होंगे।'

घर लौटा तो घर के सब लोग मायूस से बैठे थे। सहमते हुए उसने पूछा - 'क्या हुआ,'' माँ ने बताया तेरे ताऊ जी ने अपनी कार बेच दी। कर्जा हो गया था न। कुछ क्षण वह खामोश रहा फिर एकाएक खुशी से वह उछला और बाहर भाग गया। कुछ देर बाद लौटा तो ताऊजी ने कहा- 'क्यों करे...मेरी कार बिक गई...तू खुश हो रहा है?

- नहीं ताऊ जी। घर के बाहर जहाँ आपकी कार खड़ी होती थी ना मैंने वहाँ पेड़ लगा दिया है। आप देख्ना...मेरे दोस्त भी देखते रह जाएंगे। लोगों के घरों के आगे धुआं छोड़ती घुर्र घुर्र कारें खड़ी होती हैं और अपने घर के आगे खड़ा होगा बड़े से गुलदस्ते जैसा फलों-फूलों से लदा हरा भरा एक पेड़!

1600/114, त्रीनगर, दिल्ली-110035
मोबाइल : 99999-45679

'राग दरबारी' के पचास वर्ष

जीवनसिंह ठाकुर

'राग दरबारी' उपन्यास श्रीलाल शुक्ल जी ने ठीक पचास वर्ष पूर्व लिखा था। उसकी अर्द्ध शताब्दी 2018 में हो गई। अब इक्यावनवे वर्ष में प्रवेश कर चुका है। यह उपन्यास व्यंग्य का क्लासिक उपन्यास माना गया था। इसके प्रकाशन वर्ष 1968 से 2018 के बीच इसके कई एडिशन प्रकाशित हुए- काफी चर्चा में रहा। 'राग दरबारी' ऊपरी तौर से कस्बाई भारत की तस्वीर सामने लाता है लेकिन भारत के कथित शहर कितने शहर बने हैं? महानगर कितने महानगर बने हैं? एक बड़ा सवाल है वहाँ अभी भी अंदरूनी तौर पर गाँव और कस्बे ही जीवित हैं। महज दौड़-भाग, खान-पान, नौकरी, सड़कों आदि से किसी समाज की सांस्कृतिक मानसिकता, जीवन दर्शन को नहीं समझा जा सकता।

'राग दरबारी' भारतीय कस्बे की गाथा है। साथ ही उसके तमाम पात्र, स्थान, बोलचाल, राजनीति, शिक्षा, शासन प्रशासन, रिश्ते-नाते, आदि-आदि, भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश यानी भारतीय परिवेश के देशों में हर जगह मिल जाएंगे। उपन्यास की जीवंतता का यह हाल था कि पाठकों में बातचीत होती तो उसमें राग दरबारी का जिक्र जरूर आता था। यह सामान्य चर्चा में आ गया था। ऐसा लम्बे समय बाद हिन्दी संसार में घटित हुआ था। जो अब भी है। अनेकानेक कस्बों में, मुहल्लों, चालों, मल्टी में लोगों ने 'वैद्यजी' की बैठकें, ढूंढली थी वे तमाम पात्र खोज लिये थे जो 'रागदरबारी' में विचरण कर रहे थे। कहने को तो कुछ ने यह भी कहा कि यह उपन्यास हंसी उड़ाता है, यह भी कहने वाले थे कि राग दरबारी हमारी सामाजिक जिंदगी की सच्चाई है। ये दोनों बिन्दू सभी तरह से हकीक़त का बयान करते हैं।

'राग दरबारी' का प्रकाशन वर्ष तथा उसके आसपास का समय देखें तो हमें अपने देश की एक बड़ी सच्चाई से सामना होता है। 'राग दरबारी' उपन्यास का प्रकाशन वर्ष 1968 है। 1962 में देश विदेश नीति, रक्षा के मामले में बुरी तरह मात खा गया था। और 1947 से 'राग दरबारी' तक कोई भारतीय अर्थ नीति, न सांस्कृतिक नीति न भाषा पर कोई सटीक काम नहीं हो पाया। 1947 से संघर्ष की शानदार उपलब्धि को भटकाव के हवाले किया जा चुका था। 1947 से 1968 के ये महज 21 वर्ष में सत्ता, वोट, भ्रष्टाचार, जातिवाद, कट्टर मजहबीयत के मामले में देश 'वैद्यजी की बैठक' में बदल गया। 'राग दरबारी' स्वतंत्रता के बाद के भारत को उसकी राजनीति अर्थ नीति, जातिवाद, स्वार्थी व्यवस्था को आईना दिखाता है। 'राग दरबारी' उपन्यास का मूल्यांकन पूर्व के उपन्यासों, घटनाओं के बिना नहीं किया जा सकता है। क्योंकि एकांगी मूल्यांकन साहित्य की सतत ऊर्जावान प्रवाह को एक बिहड़ में रोक कर उसे सीमित करते हैं। जब कोई रचना अपने अतीत, वर्तमान में पड़ताल करते हुए बात कहती है तो वह स्वाभाविक रूप से आगामी समय में भी दस्तक देती है। 'राग दरबारी' समय की इस त्रिवेणी में अपने तीनों आयामों के साथ स्पंदित है। यदि किंचित थोड़ा पीछे जायें तो हमें भारतीय समाज की व्यापक बैचेनी, छटपटाहट स्पष्ट सुनाई तथा दिखाई देती है। यह बैचेनी इतिहास, संस्कृति और साहित्य की है। कई शताब्दियों से भारत आक्रांताओं की खूनी-तलवारों, बलात धार्मिकता, धार्मिक टेक्स, लूट, भाषा, विचारधारा से प्रताड़ित, शोषित रहा है। 1887 में गुजराती के प्रसिद्ध उपन्यास 'सरस्वतीचंद्र' जिसे गोवर्धन राम त्रिपाठी ने लिखा था। सरस्वतीचंद्र उपन्यास कई खण्डों में लिखा गया यह 1907 तक लिखा गया। यह उपन्यास गुलामी में जकड़े भारतीय समाज और परिवार की सटीक तस्वीर पेश करता है। व्यापक फलक पर कई सवालों से रूबरू कराता है। अंत में सरस्वतीचंद्र का आश्रम में चले जाना, लोक कल्याण के लिए।

गांधी जी अपने विद्यार्थी काल में इसे पढ़चुके थे। वे सरस्वतीचंद्र के पात्र से प्रभावित रहे। यह प्रभाव गांधीजी के आश्रमों की व्यवस्थाओं में सरस्वतीचंद्र स्पष्ट झलकता है। 1907 में वीर सावरकर का भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास प्रकाशित हुआ। विद्रोह, फौजी विद्रोह-से इतर सावरकर जी ने पूर्ण स्वतंत्रता संग्राम कहा है। स्वयं कार्ल-मार्क्स तथा अन्य यूरोपीय, अमेरिकन, रूसी बुद्धिजीवियों ने भी इसे भारतीय स्वतंत्रता संग्राम कहा था।

1905 में गांधीजी की पुस्तक 'हिन्द स्वराज' प्रकाशित हुई। इसमें स्वतंत्रता तथा भारत पर यथार्थ, सही दिशा में इंगित थी। 1905 से 10 के बीच रवीन्द्रनाथ ठाकुर का 'गौश' उपन्यास गहरे सामाजिक तथा स्त्री विमर्श को लेकर आया। मुंशी प्रेमचंद 1905 से 25 के बीच 'सोजेवतन' 'दुर्गादास' कर्मभूमि, निर्मला, सेवा सदन, रंगभूमि, सहित कफन, ठाकुर का कुआ, पूस की रात आदि रचनाएं भारतीय स्वतंत्रता संग्राम, समाज, परिवार की पड़ताल कर रही थी। देश की व्यापक तस्वीर देश के समक्ष जा रही थी। 1934 से 36 के बीच 'गोदान' लिखा गया। प्रेमचंदजी के 'गोदान' ने स्वतंत्र होने जा रहे देश के सामने 'गोदान' रख कर बताया कि ये देश है और इसके लिए राजनीति, शासन, अर्थ व्यवस्था को क्या और किस तरह करना है? आशा और उम्मीदों के साथ प्रेमचंद 'गोदान' देकर 1936 में दिवंगत हो गये। अब हम फिर 'राग दरबारी' में झाँके कि प्रेमचंद - जिस उम्मीद में 'होरी-गोबर' को देश के हवाले करके गये थे- वे 1968 में 'वैद्यजी की बैठक' में सिमटे देश, सत्ता, समाज के समक्ष वैसे ही गिड़गिड़ाते खड़े हैं। 'राग दरबारी' के मूल्यांकन में हमें याद रखना होगा कि 1947 की स्वतंत्रता के ठीक सात-आठ साल बाद फणीश्वरनाथ रेणु का 'मैला आंचल' स्वतंत्रता की आशाओं, उम्मीदों के मोहभंग के साथ आया। 'मैला आंचल' के ठीक दस-ग्यारह वर्ष बाद 'राग दरबारी' प्रकाशित हुआ। व्यापक फलक पर 'राग दरबारी' की उपस्थिति गूंजती है। किसी रचना को समीक्षा के बंधे बंधाए मीटर या गज से नाप तौल के हवाले नहीं किया जा सकता। रचनाएं देश, समाज, समय, उसके सांस्कृतिक, राजनीतिक, और आर्थिक व्यवस्था में गहरा हस्तक्षेप करते हुए-निरंतर समाज को जनता की 'यात्रा' उसके पढ़ाव, दिशा को रेखांकित करते चलती है।

'राग दरबारी' ने पचास साल का लम्बा अर्सा जनता के बीच-बिताया है। ये पचास वर्ष किसी भी रचना के लिए, समाज के लिए कम नहीं होते हैं। 2018-19 में भी 'राग दरबारी' वैसा का वैसा जीवंत बना हुआ है। यह जीवंतता- पचास वर्ष की 'इतिहास' जैसी स्मृतियाँ नहीं, वरन वह हमारे वर्तमान में भी स्पंदित है। कहीं से भी पुराना नहीं लगता, वर्तमान को खंगालता है- हमें सचेत करता है। 'राग दरबारी' कई तरह से हमें दृष्टि देता है। इस पचास वर्षीय राग दरबारी में 'गोदान', 'मैला आंचल' के गुण सूत्र है तो बिमल राय की 'दो बीघा जमीन' राज कपूर की 'आवारा', सत्यजीत राय की 'पाथेर पांचाली', मृणाल सेन की 'एक दिन अचानक', बी.आर.चोपड़ा की 'नया दौर' 'पैगाम' हम कदम है।

वहीं यह भी देखना होगा कि 'गोदान' में आया समाज 'राग दरबारी' तक कैसे आया। इसके अगले कदम पर ज्ञान-चतुर्वेदी का 'नरक यात्रा' और 'पागलखाना' में खड़े होकर इस समग्र समाज पर सोचना ही होगा।

422, अलकापुरी, देवास-455001 (म.प्र.)
मो.94240-29724

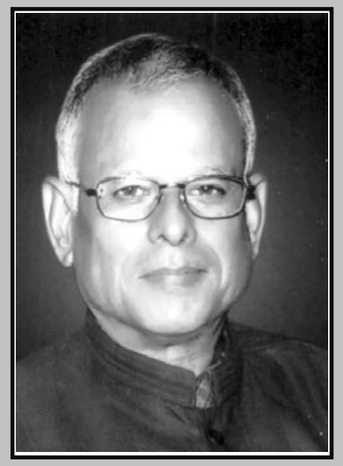

सम्पर्क : आइवरी-23, पाँचवी मंजिल, प्लेटिनम पार्क (प्लेटिनम प्लाजा)
साउथ टी.टी. नगर, निकट माता मंदिर,
भोपाल (मध्यप्रदेश) 462003
मोबाइल : 09926856086, 09826773240
ई-मेल : parshuramshuklabhopal@gmail.com

परशुराम शुक्ल

जन्म : 6 जून 1947 (ग्राम सैबसू, कानपुर, उत्तरप्रदेश)
शिक्षा : एम.ए., पी-एच्.डी.
प्रकाशन : विश्वकोशों में बाल कहानियों, बाल उपन्यासों, बाल नाटकों, बाल धारावाहिकों, बाल कविताओं आदि पर 250 से अधिक पुस्तकें और 6 हजार से अधिक स्फुट रचनाएँ प्रकाशित। अनेक रचनाओं का विभिन्न भारतीय भाषाओं में अनुवाद।
पुरस्कार/सम्मान : समाज कल्याण मंत्रालय, पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय, पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, चिल्ड्रेन्स बुक ट्रस्ट ऑफ इंडिया, नई दिल्ली, हिन्दी अकादमी, हैदराबाद सहित अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित एवं पुरस्कृत।
विशेष एक : मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र आदि राज्यों के पाठ्यक्रम में बाल कविताएँ, बाल कहानियाँ और बालोपयोगी आलेख।
विशेष दो : संत गाडगे बाबा अमरावती विश्वविद्यालय, अमरावती, कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र, विश्व-भारती, शान्तिनिकेतन , दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा-मद्रास, रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, महर्षि दयानंद सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर, बम्बई विश्वविद्यालय, बम्बई, कुमायूँ विश्वविद्यालय, नैनीताल, सावित्रीबाई फुले विश्वविद्यालय, पुणे, शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर सहित देश के अनेक विश्वविद्यालयों एवं शोधकेन्द्रों से 3 एम.फिल्. और 27 पी-एच्.डी. सम्पन्न तथा यह क्रम निरन्तर।
विश्वविद्यालय अनुदान आयोग पश्चिमी क्षेत्र कार्यालय, पुणे के आर्थिक सहयोग से 'लघु शोध परियोजना' 'डॉ. परशुराम शुक्ल के सूचनात्मक बाल साहित्य का अध्ययन' मार्च 2018 में सम्पन्न।
शिक्षण संस्थान : सेवानिवृत्त अध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, बुन्देलखण्ड कॉलेज, झाँसी (उ.प्र.)

आज का बालक काल्पनिक कहानियाँ पढ़ना नहीं चाहता है

परशुराम शुक्ल

मैं मूलतः एक समाजशास्त्री हूँ और जीवनभर समाजशास्त्री ही बनकर रहना चाहता था, किन्तु एक पूर्व अपराधी जनजाति मोघिया की लोककथाओं ने मुझे बाल साहित्यकार बना दिया। सन् 1985-86 की बात है। मोघियों की न्याय व्यवस्था पर शोधकार्य कर रहा था। इनकी न्याय व्यवस्था में लोककथाओं का विशेष महत्त्व है। अतः मैंने लगभग 50 लोककथाएँ एकत्रित कीं। पहली लोककथा 'बड़ा कौन' अक्टूबर 1986 में नंदन में प्रकाशित हुई। इसके बाद बाल साहित्य सृजन का जो क्रम आरम्भ हुआ वह अभी तक चल रहा है। मैंने बाल साहित्य की अनेक विधाओं पर लेखनी चलायी है और बाल उपन्यास से लेकर शिशु गीत तक लिखे हैं। मेरा अपना मत है कि साहित्यकार, विशेष रूप से एक बाल साहित्यकार, अपनी रचनाओं के माध्यम से अपने पाठकों के सामने उपस्थित होता है और उनसे वार्तालाप करता है। वह समाजरूपी प्रयोगशाला में सहभागी अवलोकन के माध्यम से बहुत कुछ नया सीखता है और इस नये को अपने पाठकों के सामने रखता है। इस नयी सामग्री का सीधा सम्बन्ध आवश्यकता और उपयोगिता से है। यह आवश्यक भी है। अनावश्यक और अनुपयोगी सामग्री अरुचिकर होती है। अतः पाठक उसे नकार देता हैं समाज परिवर्तनशील होता है। अवश्यकता, उद्देश्य और मूल्य बदलते रहते हैं। वर्तमान समय की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है- वैज्ञानिक दृष्टिकोण। आज का बालक चूहा-बिल्ली, तोता-मैना आदि की काल्पनिक कहानियाँ और कविताएँ नहीं पढ़ना चाहता। वह डिस्कवरी पर इन्हें वास्तविक रूप में देखना चाहता है। इनके सम्बन्ध में वैज्ञानिक जानकारियाँ प्राप्त करना चाहता है। इस प्रकार की जानकारियाँ उसका बौद्धिक मनोरंजन करने में समर्थ होती हैं। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए मैंने सूचनात्मक बाल साहित्य की आधारशिला रखी है। इसी उद्देश्य से 2 विश्वकोष तथा अनेक पुस्तकें तैयार की हैं और 50 खण्डों में वन्यजीव कोश (इन्साइक्लोपीडिया ऑफ एनीमल किंगडम) तैयार कर रहा हूँ। आरम्भ में सम्भव है कि बाल साहित्यकार इसे समझ न सकें और बाल साहित्य मानने से ही इंकार कर दें, किन्तु मैं यह दावे के साथ कह सकता हूँ कि भविष्य का बाल साहित्य सूचनात्मक बाल साहित्य ही होगा। इतना ही नहीं सूचनात्मक बाल साहित्य ही बाल साहित्य की अन्य विधाओं का आधार बनेगा। अस्तु।

परशुराम शुक्ल की बाल कविताएँ

बाल वन्दन

हे ! बाल रूप, हे! विश्वरूप,
तुमको मेरे शत-शत प्रणाम।

सच्चाई के तुम ज्योतिपुंज,
सुरभित सुमनों के नव निकुंज।
मानवता गर्व करे तुम पर,
तुम देव तुल्य नयनाभिराम।
तुमको मेरे शत-शत प्रणाम।।

पल में रुठो, पल में मानो,
सीधी सादी बातें जानो।
अमृत सम मीठी वाणी से,
पूरित होता मन का प्रकाम।
तुमको मेरे शत-शत प्रणाम।।

मुस्कान तुम्हारी पावनतम,
निर्भीक निडर भोली चितवन।
हम सारे कविगण करते हैं,
तेरे गुणगानों का बखान।
तुमको मेरे शत-शत प्रणाम।।

हे! बालरूप, हे! विश्वरूप
तुमको मेरे शत-शत प्रणाम।।

सूरज पाना है

मैं नन्हा-सा अंकुर मुझको,
सूरज पाना है।
आँधी पानी तेज हवाएँ,
शीत लहर तूफानी।
जाना मुझको दूर बहुत है,
राह बड़ी अनजानी।
चारों तरफ बवंडर फिर भी,
जड़ें जमाना है।। सूरज...
फूल हमेशा कभी खिले बस,
एक बार खिलता है।
यह जीवन ऐसा जीवन जो,
एक बार मिलता है।
इस छोटे से जीवन में कुछ,
कर दिखलाना है।। सूरज...
मेरे जैसे और बहुत से,
अंकुर जग में होंगे।
अंधकार से घबराये वे,
सहमे-सहमे होंगे।
इनके भीतर कुछ करने की,
अलख जगाना है।। सूरज...
धरती हरी भरी होगी जब,
अंकुर महकेंगे।
इनके मन में रहने वाले,
पक्षी चहकेंगे।
मैंने ठान लिया है सारा,
जग महकाना है।। सूरज...
मैं नन्हा-सा अंकुर मुझको,
सूरज पाना है।।

मैंने रॉकेट एक बनाया

मैंने रॉकेट एक बनाया।
उसको मंगल तक पहुँचाया ।

मंगल ग्रह सुनसान पड़ा था,
देख उसे ये मन घबराया।

मेरे साथ नहीं था कोई,
दूर पड़ा था मेरा साया।

याद किया मम्मी-पापा को,
अपने मन को भी समझाया।

रॉकेट पास खड़ा था मेरा,
उससे एक तिरंगा लाया।

जय बोला फिर भारत माँ की,
और तिरंगे को फहराया।

पापा सच-सच मुझे बताना

पापा सच-सच मुझे बताना।
कुछ भी मुझसे नहीं छिपाना।

मेरे जैसे जब बच्चे थे,
तब के अपने हाल सुनाना।

धींगा मस्ती धमा चौकड़ी,
हल्ला-गुल्ला शोर मचाना।

और तुम्हें अच्छा लगता था,
छत पर जाकर पतंग उड़ाना ?

दादाजी जब काम बताते,
करते थे क्या नहीं बहाना ?

मेरे भीतर देखो अपना,
बचपन का वह रूप पुराना।

कम्प्यूटर मानव

पवन एक गरीब लड़का था। उसके पिता अकुशल श्रमिक थे और प्रायः नये बनने वाले मकानों में मजदूरी करते थे। पवन की माँ शिक्षक कॉलोनी के शिक्षकों के चार-पाँच घरों में झाड़ू-पोंछा करती थी। शिक्षक कॉलोनी के मध्य एक छोटा-सा पार्क था। इसी पार्क में पवन की झोपड़ी थी। पवन के माता-पिता बहुत सज्जन, नेक और मेहनती थे। कॉलोनी के सभी शिक्षकों से उनके अच्छे सम्बन्ध थे, अतः पवन की झोपड़ी पर किसी को आपत्ति नहीं थी।

पवन दस वर्ष का हो गया था। कॉलोनी के एक शिक्षक प्रशान्त शर्मा के सहयोग से उसका एडमिशन पास के एक सरकारी स्कूल में हो गया था। पवन की माँ प्रशान्त शर्मा के घर झाड़ू-पोंछा करती थी। इसके बदले वह उसे चार सौ रुपये महीने देते थे, साथ ही पवन के लिए कॉपी-किताबों की व्यवस्था कर देते थे। कभी-कभी वह पवन को अपने घर बुलाकर थोड़ा-बहुत पढ़ा भी देते थे। पवन मेधावी लड़का था, अतः उसे पढ़ाना प्रशान्त शर्मा को बहुत अच्छा लगता था।

अचानक एक दिन पवन पर मुसीबतों का पहाड़ टूट गया। उसके पिता की एक ऊँची बिल्डिंग से गिरने के कारण मौत हो गयी। पुलिस केस बना। पवन की माँ को आशा थी कि ठेकेदार से कुछ मिल जायेगा, किन्तु कुछ मिलना तो दूर, पोस्टमार्टम के बाद क्षत-विक्षत लाश देने के डॉक्टरो ने पाँच सौ रुपये ले लिये।

पवन इस समय कक्षा पाँच में पढ़रहा था। पिता की मौत से वह परेशान हो उठा, किन्तु किसी तरह उसने अपने को सम्हाला, माँ को सान्त्वना दी और धीरे-धीरे अपनी पढ़ाई में लग गया।

अब झोपड़ी में केवल दो लोग बचे थे- पवन और उसकी माँ। शीघ्र ही दोनों का जीवन फिर से पहले की तरह चलने लगा। गरीब के पास मौत का मातम मनाने का भी समय नहीं होता। अगर वह मातम मनाये तो भूखों मर जाये। शायद उसकी तो पूरी जिन्दगी ही पवन ने अपने पिता की चिता लगायी थी और उन्हें अग्नि दी थी। इसका उस पर बहुत गहरा असर पड़ा। वह पूरी तरह अन्तर्मुखी हो गया। हँसना, बोलना, खेलना, किसी से बात करना उसे अच्छा नहीं लगता था। वह रात में थकी-हारी माँ के पाँव दबाता और फिर कुछ सोचते-सोचते सो जाता।

पिता की मृत्यु ने पवन को अचानक बहुत बड़ा बना दिया था। उसका बचपन समाप्त हो गया था और वह बड़ों की तरह जिम्मेदार हो गया था। वह माँ के पैर दबाते समय ही नहीं, पूरे दिन कुछ न कुछ सोचा करता था।

पवन कुछ करना चाहता था। वह अपनी गरीबी दूर करना चाहता था। वह अपनी माँ को सुख से रखना चाहता था। उन्हें दुनिया भर की सुविधाएँ देना चाहता था, लेकिन उसकी समझ में नहीं आता था कि वह इसके लिए क्या करें ?

समय बीतता गया। पवन के खट्टे-मीठे अनुभव बढ़ते गये। अब उसने गणित और जीव विज्ञान से इन्टर भी पास कर लिया था। उसने प्रदेश में पहला स्थान प्राप्त किया था।

पवन ने सोचा था कि उसकी गरीबी दूर हो जायेगी। उसे बहुत-सी स्कॉलरशिप मिलेगी। बहुत से पुरस्कार मिलेंगे, लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ। पिछले वर्ष प्रशान्त शर्मा भी नहीं रहे, अतः उसे रास्ता बताने वाला भी कोई नहीं बचा था।

पवन की समझ में नहीं आ रहा था कि अब वह क्या करें? उच्च शिक्षा बहुत महँगी थी। माँ भी बीमार रहने लगी थी और ईश्वरकी कृपा से जीवित थी, बिना दवा इलाज के। बहुत बीमार हो जाती या तेज बुखार आ जाता तो पवन उसे क्रोसिन की एक टेबलेट लाकर खिला देता। थोड़ा-बहुत आराम मिल जाता था।

एक दिन माँ भी चल बसी। पवन पूरी दुनिया में अकेला रह गया। वह अपनी स्थिति के बारे में बहुत सोचता, लेकिन उसे कुछ भी समझ न आता। वह कुछ काम करना चाहता था। इसके लिए उसने आस-पास के दफ्तरों और स्कूलों के कई चक्कर लगाये, लेकिन उसे कोई काम नहीं मिला। अन्त में पवन ने अपने हृदय को पत्थर बनाया और एक निर्णय ले लिया।

पवन के पास पीतल के कुछ बर्तन थे। उसने सभी बर्तन एक दुकान पर बेचे और अपनी झोपड़ी में वापस आ गया। उसे अपनी झोपड़ी से बहुत प्यार था। उसका जन्म इसी झोपड़ी में हुआ था। उसने सत्रह वर्ष इसी झोपड़ी में बिताये थे। उसके पिता और माँ की बहुत-सी यादें इस झोपड़ी से जुड़ी थीं।

पवन झोपड़ी से बाहर आ गया। वह बड़ी देर तक प्यार से झोपड़ी को निहारता रहा, फिर अचानक झोपड़ी पर मिट्टी का तेल छिड़का और आग लगा दी।

जून का महीना ! तेज गर्मी पड़ रही थी। दोपहर का समय था। झोपड़ी धू-धू कर जल उठी। आग की लपटें ऊँचाई तक पहुँच रही थीं। पवन ने एक बार जलती हुई झोपड़ी को देखा और फिर तेजी से रेलवे स्टेशन की ओर चल पड़ा।

पवन ने टिकिट लिया और सीधा मुम्बई आ पहुँचा।

सबेरे का समय था। स्टेशन पर भारी भीड़ थी। पवन पहली बार मुम्बई आया था। उसे यहाँ के रास्तों की कोई जानकारी नहीं थी। फिर भी वह ट्रेन से उतरने वालों की भीड़ के साथ चलता हुआ सड़क पर आ गया।

पवन ने सोचा था कि वह अपने पिता की तरह मजदूर का काम करेगा। मुम्बई बड़ा शहर है, अतः उसे अच्छी मजदूरी मिल जायेगी। इसके बाद वह उचित अवसर देख कर किसी अच्छे काम में लगने का प्रयास करेगा।

पवन अकेला था। पारिवारिक जिम्मेदारी भी नहीं थी। उसका अधिकांश समय भौतिक विज्ञान की प्रयोगशाला में व्यतीत होता था। उसने प्रयोगशाला में ही एक छोटी-सी लाइब्रेरी बना ली थी, जिसमें रोबोटिक्स की किताबें अधिक थीं। पवन ने तो यह तो समझ लिया था कि अभी तक तैयार किये गये विकसित रोबोट में अत्याधुनिक इलेक्ट्रॉनिकी और कम्प्यूटर टेक्नॉलाजी का प्रयोग किया गया था। इसके बाद वैज्ञानिक आगे नहीं बढ़पाये थे। पवन इस कार्य को आगे बढ़ाना चाहता था। वह एक ऐसा रोबोट तैयार करना चाहता था, जिसमें संवेदनाएँ हों।

पवन ने सड़क पार की और अनजान रास्ते पर चल पड़ा। अचानक उसकी दृष्टि दाहिने हाथ बनी एक भव्य इमारत पर पड़ी। यह सेन्ट जेवियर कॉलेज था। पवन ने कुछ पल मन में सोचा और फिर सड़क पार करके कॉलेज के भीतर आ गया।

पवन छात्र-छात्राओं से पूछता हुआ प्राचार्य कक्ष के सामने पहुँचा। उसका भाग्य अच्छा था। प्राचार्य कक्ष में प्राचार्य डॉ. विल्सन अकेले थे। पवन ने उन्हें पूरी कहानी सुनायी और उनसे सहायता करने का अनुरोध किया।

डॉ. विल्सन बड़े अनुभवी थे। उन्हें पवन की दो मिनिट की बातचीत में उसकी प्रतिभा की झलक मिल गयी थी। उन्होंने तुरन्त एक चपरासी को बुलाकर एक सादा कागज मँगाया, पवन से एप्लीकेशन लिखवायी और उसे नाइट शिफ्ट के चौकीदार का काम दे दिया। इतना ही नहीं उन्होंने कॉलेज कैम्पस में ही उसके रहने और खाने की व्यवस्था कर दी।

पवन की मुम्बई पहुँचते ही यह पहली सफलता थी। उसे यहाँ नौकरी के साथ ही सर छुपाने की जगह भी मिल गयी थी।

पवन बड़ा व्यवहार कुशल था। वह सबेरे पाँच बजे तक अपनी ड्यूटी करता और फिर सो जाता। दोपहर लगभग बारह बजे उठता और कॉलेज के चपरासियों से लेकर प्रोफेसरों तक से मिलता। डॉ. विल्सन कॉलेज कैम्पस में ही रहते थे, अतः उनसे भी प्रायः भेंट हो जाती थी।

एक दिन पवन ने डॉ. विल्सन को अपनी मार्कशीट दिखायी। प्राचार्य पहले से ही पवन की प्रतिभा से परिचित थे। उन्होंने अगले दिन ही उसे बी.एससी. में एडमिशन दे दिया। उन्होंने पवन की एडमिशन फीस अपने पास से दी थी और उसके लिए एक विशेष स्कॉलरशिप की व्यवस्था कर दी थी।

धीरे-धीरे एक महीना हो गया। अब पवन की जिन्दगी ही बदल गयी थी। वह प्रातः आठ बजे से बारह बजे तक क्लास अटेण्ड करता, इसके बाद अपने तथा अपने साथ के लोगों के काम करता और शाम को चार बजे से रात के दस बजे तक सोता। दस बजे उठ कर तैयार हो जाता। इस समय उसके पास एक-दो किताबें रहती थीं। वह नाइट ड्यूटी के साथ ही अपनी पढ़ाई भी कर लेता।

पवन बहुत खुश था। वह बड़ी तेजी से अपनी मंजिल की ओर बढ़रहा था। बचपन में एक शिक्षक ने उसका मार्गदर्शन किया। यहाँ मुम्बई में भी एक शिक्षक ने ही उसे सहारा दिया। उसने यह निश्चय किया कि वह भी एक शिक्षक बनेगा और जरूरतमन्दों को सहारा देकर उन्हें पूरी तरह सहयोग करेगा। पवन की इच्छा पूरी हो गयी। एम.एससी. करते ही उसे सेन्ट जेवियर कॉलेज में ही भौतिक विज्ञान का व्याख्यात नियुक्त कर दिया गया। इसके साथ ही वह पी-एच्.डी. के लिए भी रजिस्टर्ड हो गया।

पवन को रोबोटिक्स में विशेष रुचि थी। वह इसकी सहायता से मानवता के विकास और उसके कल्याण के कार्य करना चाहता था। उसने इस सम्बन्ध में चार शोधपत्र भी लिखे थे जो विदेशी शाधपत्रों में प्रकाशित हुए थे। इन शोधपत्रों ने उसके एपाइन्टमेन्ट के समय सभी को प्रभावित किया था।

पी-एच्.डी. पूरी होते ही पवन सहायक प्राध्यापक बन गया। उसकी आर्थिक समस्याएँ पूरी तरह समाप्त हो गयी थीं, किन्तु उसके व्यवहार में विशेष परिवर्तन नहीं आया था। वह आज भी छात्र-छात्राओं, चपरासियों, बाबूओं, सहयोगी प्राध्यापकों आदि से बड़े प्यार और विनम्रता से मिलता था। अपने इसी गुण के कारण वह इन सभी के साथ ही डॉ. विल्सन का भी प्रिय था।

पवन अकेला था। पारिवारिक जिम्मेदारी भी नहीं थी। उसका अधिकांश समय भौतिक विज्ञान की प्रयोगशाला में व्यतीत होता था। उसने प्रयोगशाला में ही एक छोटी-सी लाइब्रेरी बना ली थी, जिसमें रोबोटिक्स की किताबें अधिक थीं। पवन ने तो यह तो समझ लिया था कि अभी तक तैयार किये गये विकसित रोबोट में अत्याधुनिक इलेक्ट्रॉनिकी और कम्प्यूटर टेक्नॉलाजी का प्रयोग किया गया था। इसके बाद वैज्ञानिक आगे नहीं बढ़पाये थे। पवन इस कार्य को आगे बढ़ाना चाहता था। वह एक ऐसा रोबोट तैयार करना चाहता था, जिसमें संवेदनाएँ हों।

एक दिन पवन अपनी लाइब्रेरी में बैठा एक विज्ञान पत्रिका पढ़रहा था। अचानक उसकी दृष्टि एक आलेख पर पड़ी- 'ह्यूमनोएड रोबो : असीमो कम्पनी ने 1986 में बनाया था, किन्तु यह ह्यूमनोएड कब हो गया? इसकी पवन को जानकारी नहीं थी। पवन बड़े ध्यान से आलेख पढ़ने लगा। 1986 में तैयार किये गये असीमो में एक दर्जन अपग्रेडेशन हो चुके थे। नया असीमो 43 किलोग्राम का था तथा इसकी लम्बाई 130 सेन्टीमीटर थी। यह सोच-विचार कर सकता था, अलग-अलग लोगों की आवाजें पहचान सकता था, उनसे हाथ मिला सकता था। ऊँची-नीची सतह पर चल सकता था। नौ किलोमीटर प्रतिघण्टा की गति से दौड़ लगा सकता था, फुटबाल खेल सकता था, सीढ़ियाँ चढ़सकता था और मेहमाों को थर्मस से चाय-कॉफी कप में सर्व कर सकता था। पवन ने तुरन्त इन्टरनेट ऑन किया और उससे असीमो की पूरी जानकारी प्राप्त की। अब उसका काम काफी आसान हो गया था।

पवन अपने काम में लग गया, किन्तु उसे अपना काम रोकना पड़ा। पवन अपनी प्रयोगशाला में कुछ काम कर रहा था। इसी समय डॉ. विल्सन ने प्रवेश किया। डॉ. विल्सन कुछ देर तक इधर-उधर की बातें करते रहे, इसके बाद उन्होंने उसके सामने एनी के विवाह का प्रस्ताव रखा।

एनी डॉ. विल्सन की बेटी थी और न्यूरो सर्जरी में स्पेशलाइजेशन कर रही थी। पवन उसे अच्छी तरह जानता था। दोनों में बहुत अच्छी दोस्ती थी।

पवन को ऐनी जैसी जीवनसाथी की लम्बे समय से तलाश थी, लेकिन वह अपने कामों में इतना व्यस्त रहा कि इस विषय में सोचने का उसे कभी अवसर ही नहीं मिला।

पवन ने विनम्रतापूर्वक यह रिश्ता स्वीकार कर लिया। अगले ही माह दोनों का विवाह हो गया। पवन और एनी एक-दूसरे को पाकर बहुत खुश थे। दिसम्बर में एनी ने एक बेटे को जन्म दिया और उसे नाम दिया- विवेक।

जीवन सुखी हो, सम्पन्न हो तो समय बीतते देर नहीं लगती। विवेक उन्नीस वर्ष का हो गया था और बी.एससी. में पढ़रहा था।

मानव एक और अपने कर्म से अपनी परिस्थितियों को प्रभावित करता है, तो दूसरी ओर परिस्थितियों से प्रभावित भी होता है। पवन को उसके अभाव से उपलब्धियों तक के सफर ने अति महत्त्वाकांक्षी बना दिया था। उसने अभी तक जो कुछ भी पाया था, अपनी बौद्धिक क्षमता के बल पर पाया था, किन्तु ऐसा बहुत कुछ था, जिसे वह प्राप्त नहीं कर सका था।

एक पिता का यह स्वप्न होता है जो कुछ वह नहीं पा सका, उसे उसका बेटा प्राप्त करे। पवन भी यही चाहता था। वह चाहता था कि उसका बेटा विश्व का सर्वाधिक बुद्धिमान व्यक्ति बने और प्रत्येक क्षेत्र में सफलता के अभिनव कीर्तिमान स्थापित करे, लेकिन उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि इसके लिए वह क्या करें ? उसने इस विषय पर बहुत सोचा, किन्तु उसे कोई रास्ता नहीं दिखाई पड़ा।

पवन को विज्ञान की शोध पत्रिका पढ़ने का बहुत शौक था। एक दिन वह एक अमरीकी विज्ञान पत्रिका पढ़रहा था। अचानक उसकी दृष्टि एक आलेख पर पड़ी। इस आलेख के अनुसार- संयुक्त राष्ट्र अमरीका के मिनासोटा विश्वविद्यालय के प्लॉस्टिक एवं रिकान्सट्रक्टिव सर्जरी विभाग के अध्यक्ष डॉ. ब्रूस कनिंगघम ने कुछ दिन पूर्व माइक्रोसर्जरी द्वारा एक ऐसा ऑपरेशन किया था, जिसे विश्व में अपनी तरह का सर्वाधिक विलक्षण और जटिल ऑपरेशन माना जा रहा था। यह ऑपरेशन था ओकलाहामा के एक विकलांग केन ह्विटेन का इस ऑपरेशन के द्वारा डॉ. कनिंगघम ने केन के एक दुर्घटना में घायल होने के बाद काटे गये दोनों हाथों के स्थान पर कृत्रिम हाथ इस प्रकार लगा दिये थे कि केन की विकलांगता पूरी तरह समाप्त हो गयी थी। केन अपने कृत्रिम हाथों से खाना खा सकता था, जूते पहन सकता था, अण्डे छील सकता था, यहाँ तक कि वह दो किलो वजन तक उठा सकता था। केन के दोनों हाथों में वही पंजे लगाये गये थे, जिनका उपयोग रोबोट में किया जाता है।

पवन की जानकारी में यह पहला ऐसा ऑपरेशन था, जिसमें रोबोट का कोई हिस्सा मानव में लगाया गया था।

पवन इस ऑपरेशन के विषय में बड़ी देर तक विचार करता रहा। अन्त में उसने एक विलक्षण निर्णय लिया - विवेक के मस्तिष्क में सिलिकान चिप के प्रत्यारोपण का निर्णय।

पवन ने शाम को घर आकर इस सम्बन्ध में एनी से बात की। एनी ने पहले तो इस ऑपरेशन का विरोध किया, किन्तु अन्त में वह तैयार हो गयी।

एनी न्यूरो सर्जन थी। उसने अपने साथी डॉक्टरों से चर्चा की और अगले सप्ताह ही एक पावरफुल चिप का विवेक के मस्तिष्क में प्रत्यारोपण कर दिया।

लगभग एक माह तक सब कुछ पहले की तरह राह। इसके बाद विवेक के व्यवहार में धीरे-धीरे परिवर्तन आने लगा। उसने बच्चों के साथ खेलना, घूमना-फिरना, टी.वी. देखना आदि बन्द कर दिया और अकेले रहने लगा। वह अपना कमरा भीतर से बन्द कर लेता और घण्टों सोचता रहता।

पवन ने विवेक के बदलते हुए व्यवहार पर कोई ध्यान नहीं दिया। विवेक ने बी.एससी. में पूरे विश्वविद्यालय में सर्वाधिक अंक प्राप्त करने का कीर्तिमान बनाया।

विवेक ने एम.एससी. फिजिक्स में प्रवेश लिया। वह अपनी क्लास के सभी बच्चों से पूरी तरह अलग था। फिजिक्स के न्यूमेरिकल वह पलक झपकते ही बिना कागज-पेन के हल कर देता था। ऐसा लगता था कि उसका दिमाग सुपर कम्प्यूटर की तरह काम करने लगा है। वास्तव में विवेक का मस्तिष्क सुपर कम्प्यूटर बन चुका था।

पवन बहुत खुश था, किन्तु उसकी यह खुशी अधिक दिनों तक नहीं रह सकी। विवेक के व्यवहार में अनेक घातक परिवर्तन होने लगे। उसकी नींद गायब हो गयी, भूख लगना कम हो गया। हमेशा शान्त रहने वाला विवेक बात-बात पर चिड़चिड़ाने लगा। कभी-कभी वह छत पर चला जाता और घण्टों आसमान की तरफ देखता रहता। विवेक का व्यवहार सामान्य नहीं रह गया था। पवन ने विवेक की स्थिति देखी तो भीतर ही भीतर घबरा उठा। उसे अपने हाल पर रोना आ रहा था।

पवन के साथ एनी को भी चिन्ता हुई। उसने विवेक को अपने साथी डॉक्टरों को दिखाया। सभी ने विवेक को मनोरोगी बताया तथा सिलिकान चिप निकालने की सलाह दी।

पवन अपने बेटे को बहुत प्यार करता था। विवेक की परेशानी ने उसकी नींद उड़ा दी थी। उसने अगले दिन ही विवेक के मस्तिष्क से चिप निकलवा दी।

विवेक दो दिन अचेत रहा। तीसरे दिन उसे होश आया। पवन और एनी उसके पास ही खड़े थे। उन्हें लगा कि विवेक सामान्य हो गया है। एक सप्ताह बाद विवेक घर आ गया।

धीरे-धीरे छः महीने बीत गये। विवेक कुछ दिन सामान्य रहा। इसके बाद उसकी बेचैनी बढ़ने लगी और नींद गायब हो गयी।

डॉक्टरों ने उसे नींद की अनेक प्रकार की दवाइयाँ दीं, किन्तु विवेक को नींद नहीं आयी। विवेक की स्थिति दिन-प्रतिदिन बिगड़ती गयी। अन्त में उसे पुनः अस्पताल ले जाना पड़ा।

एनी के साथ डॉक्टरों ने विवेक के मस्तिष्क का गहन अध्ययन किया और रिपोर्ट एनी के सामने रख दी।

एनी ने रिपोर्ट देखी तो चीख पड़ी। विवेक एक शक्तिशाली कम्प्यूटर मानव बन चुका था। उसके मस्तिष्क ने अपनी शक्ति से सिलिकान चिप की सारी मैमोरी ले ली थी।

पवन पास ही खड़ा था। एनी ने हाथ बढ़ा कर रिपोर्ट पवन को पकड़ा दी और दोनों हाथों से सर पकड़ कर बैठ गयी।

बाल-साहित्य के प्रति समर्पित - परशुराम शुक्ल

शिवकुमार मिश्र

शब्द की साधना में लगे लोगों की बहुरंगी, बहुआयामी, भरी-पूरी दुनिया में भी, ऐसे लोग कम ही मिलंगे जिन्होंने अपनी समूची सर्जनात्मक प्रतिमा, अपने रचनाकार-मन को, जिज्ञासा की उसकी एक-एक तरंग को, किसी एक विशिष्ट लक्ष्य के प्रति एकांत समर्पित कर दिया हो, एक समर्पित-साधना का साक्ष्य बने हों। डॉ. परशुराम शुक्ल मेरे विचार से ऐसी समर्पित साधना के, अपवाद रूप मिलने वाले साक्ष्य हैं। जिस लक्ष्य को उनका यह एकांत समर्पण है, वह है उस बाल-साहित्य की अपेक्षित और सर्वांगीण समृद्धि, अनेक वस्तुगत कारणों के चलते, संप्रति, जिनके विस्तार में नही जाना चाहूँगा, जो विराट हिन्दी क्षेत्र में उपेक्षित नहीं, तो भी विश्व की समृद्ध भाषाओं को छोड़ भी दें, तो अन्यान्य भारतीय भाषाओं की तुलना में, हाशिए पर जरूर है। इसे विडंबना ही कहा जाएगा कि वहाँ पिछली पीढ़ियों के प्रेमचन्द, निराला, सुभद्राकुमारी चौहान, वृन्दावनलाल वर्मा आदि की सर्जनात्मक मनोभूमि में एक कोना, बालकों के लिए बराबर सुरक्षित रहा है और मुख्यधारा अपनी सर्जन के साथ-साथ वे बालकों के मनोरंजन और मनोन्नयन के लिए बराबर लिखते रहे हैं, कालांतर में स्थिति निरन्तर संकुचित होती गई है। कुछ तो सभ्यता पर तेजी से चढ़ते जा रहे नए-नए आवरण, फलतः आदमी की जीवन-शैली, आचरण, लक्ष्यों-उद्देश्यों और सोच के स्तर पर आया जबर्दस्त बदलाव और कुछ नई रंगत और नए तौर-तरीकों की इस अद्य जानी-अन-पहचानी दुनिया की, समय के साथ उपजी दीगर विसंगतियाँ, संवेदनाओं का तेजी से हो रहा क्षरण आदि, रचनाकारों की सर्जनात्मक मनोभूमि पर नन्हीं हथेलियों की दस्तकें तेजी से कम होती गई हैं। जब-तब ऐसी दस्तकें होती भी हों, तो उन्हें सुनने और उन्हें तवज्जो देने की फुरसत और वैसी मानसिकता अब कहाँ बची है। ऐसे कठिन, क्रूर और संवेदना से शून्य समय में सचमुच, अभिनन्दनीय है। बाल-साहित्य के हामरे वे सर्जक जो विद्यमान माहौल में भी, बाल-साहित्य को कम से कम हाशिए पर तो बनाए हुए हैं। जहाँ तक डॉ. परशुराम शुक्ल की बात है, किंचित् मात्र भी अतिशयोक्ति नहीं होगी, यदि यदि कहूँ कि व्यक्तिगत लाभ-लोभ, स्वार्थ, आपाधापी और विपर्यस्त जीवनकी सारी विद्रूपताओं के बीच, बालकों की दुनिया को, अपनी मानवीय और सर्जनात्क चिंता के दायरे में लेते हुए बाल-मन के मनोरंजनार्थ ही नहीं, उसके सर्वतोमुखी उन्नयन के संदर्भ में, अपनी समर्पित साधना के तहत जो कुछ उन्होंने कहा- लिखा है, नागार्जुन के शब्द लूँ तो वह ''बारूदी बदबू में ताजी मलय- गंध'' के समान है। ज्ञान के नाता अनुशासनों का ज्ञान-विज्ञान की विश्व-सम्पदा का, नर-जीवन का और नर-जीवन ही कहीं, नरेतर बाह्य प्रकृति का, जल, थल, आकाश-पाताल का, चर-अचर जगत् का, शायद ही कोई कोना हो अपने मूलवर्त्ती लक्ष्य को उसकी चरम फलश्रुति के साथ पाने के लिए डॉ. शुक्ल ने जिसे न झाँका हो, उनके जिज्ञासु और खोजी मन ने जिसमें सेंध न लगाई हो। उनका लिखा, उनके द्वारा सम्पादित-संकलित किया गया तो कुछ भी वाङ्मय मेरी निगाह में है, हैरत होती है यह सोचते हुए कि ज्ञान-विज्ञान की यह विशद् सम्पदा मात्र एक व्यक्ति के श्रम और सारस्वत-साधना का प्रतिफल है? क्या नहीं है उनकी रची, एकत्र की गई, संकलित-सम्पादित इस सम्पदा में- कविताएँ, कहानियाँ, उपन्यास, लोक-कथाएँ, लोक-वार्ताएँ, जलचरों, थलचरों, नभचरों का एक पूरा संसार, धरती के गर्भ में उसके एक छोर से दूसरे छोर तक विचरते प्राणियों की एक अपनी दुनिया, और यह सब बाल-मन को मात्र अनुरंजित करने के लिए ही नहीं, उसे जिज्ञासु बनाए रहने के लिए भी, उसे समृद्ध करने के लिए भी, अवस्था और अवस्था के साथ विकासशील बालकों की मनोभूमि का उसकी उच्चतर संभावनाओं के साथ समय, देश, समाज, वाति, सामाजिक-नैतिक मूल्यों से जोड़े रखने के लिए भी। बाल-मन अपनी प्रकृति-परिवेश, इतिहास, संस्कृति, भाषा, वातीय-स्मृतियों, जीवंत परम्पराओं आदि-आदि से सहज और प्रकृत भाव से अपना नाता बनाए रखे, उसे विकसित करता रहे, शुभ-अशुभ, मंगल-अमंगल, श्वेत-श्याम, जीवन के सारे पहलुओं से परिचित होते हुए त्याग और ग्रहण के विवेक को पा सके, इसके लिए भी। बिना उपदेश दिए या अतिरिक्त प्रयासों के शुक्लजी के कहे-लिखे में, यह सब मूलवर्त्ती पाठ से छनते हुए एकदम प्रकृत-सहज रूप में, बाल-मन में घुलकर उसका अमिट हिस्सा बनते हुए सामने आया है। यही डॉ. शुक्ल की सिद्धि है। सहजता की इस सिद्धि को डॉ. शुक्ल पा सके, इसके पीछे सहज की कह नितांत कृच्छ साधना है, जिससे होकर वे गुजरे हैं। बाल-साहित्य की रचना सीधी लकीर खींचने-जैसा निपट कठिन काम है। अपने वयस्क और परिपक्व विवे को जाग्रत रखते हुए जीना पड़ता है फिर से उन अहसासों को, जिन्हें जिए अर्सा बीत चुका है, लौटाना होता है उन स्मृतियों को जो समय बीतने के साथ मनोभूमि में जगह पाने वाली दीगर स्मृतियों के अम्बार में गड्डगड्ड ही गई होती है। यह सब विरुद्धों के एक ऐसे सह-अस्तित्व से होकर गुजरता है, जिसमें अतीत-वर्तमान सब घुले-पचे होते हैं। साधना पड़ता है इन विरुद्धों को सम पर रखना होता है उन्हें, तब उपजती है वह सर्जना, जिसे बाल-साहित्य कहा जाता है। शब्द की साधना, डॉ. शुक्ल जैसे बाल-साहित्यकारों की साधना इसी बिन्दु पर चरितार्थ होती है।

डॉ. परशुराम शुक्ल रचित बाल-वाङ्मय का जो दायरा है वह आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने साहित्य को जिस रूप में परिभाषित किया है, वह वैसा ही है- ज्ञान-राशि का संचित कोष। डॉ. शुक्ल ने यह सब समाजशास्त्र के अध्यापक के रूप में अपने पेशे को निष्ठा और ईमानदारी से निभाते हुए किया है। यह सब किसी संस्थान का किया हुआ काम होना चाहिए था, वो व्यक्ति के स्तर पर उन्होंने संपन्न किया है। महत् कार्य है यह जिसके लिए वे आशंसा के पात्र हैं। राष्ट्रीय स्तर के बड़े सम्मान जो उन्हें मिले हैं, सर्वथा उचित हैं। मेरे अपने नगर कानपुर के तो वे गौरव हैं ही, राष्ट्र के गौरव भी हैं। उनकी कीर्ति अंतर्राष्ट्रीय क्षितिजों का स्पर्श करे, मेरी मंगल-कामनाएँ उनके साथ हैं। वे अभी साठ के हुए हैं। मेरी मंगल-कामना है कि स्वस्थ-प्रसड, जाग्रत-मस्तिष्क वे उस आयुष्य को पूरा जिएँ जो प्रकृति ने आदमी को दिया है। वे शतंजीवी हों। ज्ञान की वो दीपशिखा उन्होंने प्रज्वलित की है उसके आलोक में उनका घर-परिवार तो आलोकित है ही, यह आलोक देश और समाज को, अगली मंजिलों की ओर प्रयाण करती बालकों की पूरी दुनिया को अपने दायरे में ले। हिदी में बाल-साहित्य हाशिए से निकलकर रचनाकारों की सर्जनात्मक चिन्ता में अपनी सही जगह पाए, इन शब्दों के साथ बाल-साहित्य के प्रति समर्पित डॉ. परशुराम शुक्ल जैसे शब्द-साधक का मैं अभिनन्दन करता हूँ।

सुधीजनों की दृष्टि में डॉ. परशुराम शुक्ल का कृतित्व

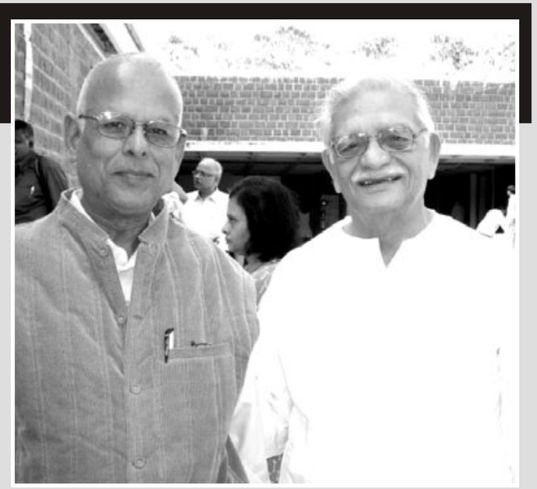

डॉ. परशुराम शुक्ल बाल साहित्य के जाने-माने लेखक हैं। उपन्यास, कहानी, कविता और साधारण ज्ञान इस सभी विधाओं में सफलतापूर्वक लिखा है। उनकी दस पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। वे बाल मनोविज्ञान को समझते हैं, उनकी शैली रोचक है, गम्भीर विषय का भी सहज रोचक शैली में लिखकर बच्चों के लिये पठनीय बना देते हैं।

- विष्णु प्रभाकर

प्रत्येक समय और समाज में हमेशा कुछ ऐसे विरल अपवाद होते हैं जो समय की धारा के विरुद्ध खड़े होकर इतिहास के ऐसे अँधेरों से मुठभेड़ करते हैं जहाँ से फलस्वरूप रोशनी की नई किरण फूट पड़ती दिखाई देती है। समाज विज्ञान के आचार्य रहे कवि-शायर और बाल साहित्यकार डॉ. परशुराम शुक्ल हमारे समय में ऐसी ही विरल उपस्थिति है।

निजी तौर से उनके घर-परिवार से निकट रहकर उनके आत्मीय होकर मैं यह जानते रहने का निरन्तर सुयोग प्राप्त करता रहा कि अनजाने ही वे

हिन्दी भाषा का कौन-सा उपकार कर रहे हैं। मैं यह दावा नहीं करने जा रहा कि वे एक मौलिक विज्ञानी या समाज-विज्ञानी हैं, किन्तु यह दावा तो करना ही चाहूँगा कि हिन्दी प्रदेशों की तमाम अकादमियाँ इस शाखा का अभी तक वह उपकार नहीं कर पाई हैं जो एक अकेले समर्पित साधक के रूप में मेरे अनुजवत परशुराम ने किया है। अपने प्रत्यक्ष अनुभवों के साक्ष्य पर कह सकता हूँ कि उन्होंने विश्व प्राणि-संसार को लेकर जो आधारभूत सामग्री हिन्दी पाठकों और प्रेमियों के लिये जुटाई है वह जानकारियों से भरी और संदिग्ध रूप से भरोसेमंद है। निश्चय ही उनका यह काम ऐसा 'स्वान्तः सुखाय' है परोक्षतः जिसमें हिन्दी भाषा और उसके लोक समाज का हित और सुख छिपा हुआ है।

विजय बहादुर सिंह

बच्चों में कल्पनाशीलता जगानेवाली कविताएँ ही श्रेष्ठ बाल कविताएँ होती हैं और शुक्लजी की कविताओं में यह गुण है। उनकी बाल कविताओं के विषय हैं- रेल, बंदर, देशप्रेम, तिरंगा और आँखें आदि। बच्चे उनकी कविताएँ पसन्द करते हैं। मैं कामना करता हूँ कि बाल काव्य सृजन में वे इसी प्रकार सक्रिय रहेंगे।

श्री प्रसाद

शुक्लजी की रुचि कई विधाओं में रही है। उन्होंने एक ओर तो गद्य विधा में कहानी, एकांकी, सत्यकथायें और उपन्यास भी लिखे हैं और दूसरी ओर पद्य विधा में शिशु गीत, कविता और गजलें भी लिखी हैं। शुक्लजी का बाल साहित्य भी गद्य और पद्य दोनों विधाओं में मिलता है। बाल साहित्य की दोनों विधाओं के सफल लेखन ने ही उन्हें प्रतिष्ठित बाल साहित्यकार स्थापित किया है।

- डॉ. मूलाराम जोशी

डॉ. शुक्ल सीधी और सरल भाषा में मानव जीवन का पूरा दर्शन बच्चों को बता देते हैं। परिश्रम करके अर्जित की गई सम्पत्ति से ही व्यक्ति फलता-फूलता है जो व्यक्ति दीन-दुखियों की सेवा करता है वही जीवन में उन्नति करता है। शुक्लजी की स्पष्ट अवधारणा है- *जो अशक्त वह कैसा तन है/जो मैला वह कैसा मन है?/करे पाप औ' भरे तिजोरी/ऐसा धन भी कोई धन है?*

- डॉ. सुरेन्द्र विक्रम

बाल साहित्य को अधिकांश लेखक बहुत सरल मानते हैं, जबकि दीगर साहित्य की तुलना में बाल साहित्य लेखन बड़ा दुष्कर कार्य है। इन तमाम प्रश्नाकुल विचारों और इनके निष्कर्षों के प्रकाश में हमें लेखक की निष्ठा को परखना चाहिए, यही एकमात्र ऐसी विशेषता है जो किसी खास लेखक को दूसरे लेखकों से अलगा देती है और उसके लेखन की खूबियाँ साकार हो उठती हैं। इस दृष्टि से जब हम डॉ. परशुराम शुक्ल के व्यक्तित्व और कृतित्व का अनुशीलन करते हैं तो वे एक खास और विलक्षण बाल साहित्यकार के रूप में हमारे सामने आते हैं।

राजनारायण बोहरे

डॉ. परशुराम शुक्ल का बाल साहित्य बच्चों को एक सुसंस्कृत इंसान बनाने, उन्हें नई और रचनात्मक दिशा देने वाला तथा सुखद भविष्य की ओर अग्रसर करने वाला समृद्धशाली साहित्य है। उन्होंने अपने बाल-साहित्य में प्राचीनकाल से आज तक बच्चों को सम-सामयिक सामाजिक परिवेश से जोड़ने का अभिनव प्रयास किया है।

डॉ. निलय गोस्वामा

हिन्दी बाल साहित्य परम्परा से आधुनिकता की ओर बढ़ रहा है....!

बाल साहित्यकार डॉ. परशुराम शक्ल से डॉ. श्यामबिहारी श्रीवास्तव की बातचीत

डॉ. श्यामबिहारी - साहित्य सृजन का आरम्भ किस रूप में हुआ ? बाल कविता, प्रौढ़कविता कहानी या लेख ?

डॉ. परशुराम - साहित्य सृजन शृंगारिक कविताओं से आरम्भ हुआ, किन्तु क्राइस्ट चर्च कॉलेज की कविता प्रतियोगिता के बाद इस पर लंबे समय के लिए विराम लग गया और मैंने 1971 से 1979 तक कुछ शोधपत्रों को छोड़कर कुछ नहीं लिखा।

मैं एक लंबे समय तक कानपुर के रेल बाजार में रहा। यहाँ गुलाबबाई का मकान है। गुलाबबाई को नौटंकी कला के क्षेत्र में पद्मश्री मिल चुका है। वह मेरी बुजुर्ग मित्र थीं। बच्चों को पढ़ाना छोटी आयु में मेरा शौक रहा है। मैंने गुलाबबाई की बेटी मधु, बेटे राजेन्द्र, भान्जे उदय सहित अनेक बच्चों को पढ़ाया। इससे उनके परिवार में मेरे घरेलू सम्बन्ध बन गए। गुलाबबाई के घर में मैंने देखा कि परिवार की बेटियाँ तो नाचती-गाती थीं पुरुषों को रिझाने का कार्य करती थीं, तथा आय का प्रमुख साधन थीं, किन्तु बहुएँ स्टेज पर नाच नहीं सकती थीं। वे पर्दा करती थीं तथा बाहर के पुरुषों से उन्हें दूर रखा जाता था। इस सम्बन्ध में बात करने पर मालूम हुआ कि ये बहुएँ बेड़िया न होकर नट्, कंजर, हबूड़ा आदि परिवारों की लड़कियाँ थीं। इन्हें कन्या मूल्य देकर प्राप्त किया गया था। इस सम्बन्ध में गुलाबबाई से बातें करने पर उन्होंने बताया कि बेटियों से तो घर चलता है किन्तु बहू खानदान आगे बढ़ाती हैं। अतः बहू की पवित्रता आवश्यक है। इस प्रकार मुझे एक ही स्थान पर नट, कंजर, बेड़िया, हबूड़ा आदि पूर्व अपराधि जनजातियों की जानकारी मिली। यह जानकारियाँ आगे चलकर मेरे लेखन में सहयोगी बनीं।

दतिया आने के बाद मेरा संपर्क मोघिया जनजाति के श्री अर्जुनसिंह मोघिया से हुआ। मोघिया एक पूर्व अपराधि जनजाति है एवं पूर्व अपराधी जनजातियों के सम्बन्ध में मुझे पहले से ही जानकारी थी। अतः मोघियों के साथ घुलने-मिलने में मुझे कोई असुविधा नहीं हुई। पूर्व अपराधी जनजातियों में आज भी अग्नि परीक्षा, जल परीक्षा आदि का प्रचलन है। इनमें सामान्य चोरी से लेकर हत्या तक के विवादों का निपटारा पंचायत में किया जाता है। पुलिस की मदद लेना और देना गंभीर अपराध माना जाता है। इनकी पंचायत में भी चोर को चोर नहीं कहा जा सकता। आरोप लगाने, सफाई देने, यहाँ तक कि सुझाव देने तक का कार्य लोककथाओं के माध्यम से किया जाता है। ये लोककथाएँ पंचतंत्र की कहानियों के समान रोचक और बालोपयोगी हैं। मैंने लगभग 50 लोककथाओं का संग्रह किया। ये सभी लोककथाएँ नंदन, पराग, बालभारती, लोटपोट, मधु मुस्कान आदि बाल पत्रिकाओं में प्रकाशित हुईं। सन् 1990 में भारत सरकार के समाज कल्याण मंत्रालय ने इनकी पाण्डुलिपि पर 18000 रुपये का प्रकाशन अनुदान दिया तथा 'मोघिया लोककथाएँ' का विवेक प्रकाशन, दिल्ली से प्रकाशन हुआ। यहीं से मेरे बाल साहित्य की शुरूआत हुई। आगे चलकर मैंने बाल कविता, बाल उपन्यास, बाल एकांकी तथा बालोपयागी आलेख आदि लिखे।

आपकी प्रथम रचना कौन-सी है? कविता या गद्य ?

मेरे संपूर्ण साहित्य पर यदि ध्यान दिया जाए तो कविता की प्रधानता दिखाई देगी। मेरी पहली रचना भी एक कविता थी- नारी का हर शृंगार निमंत्रण देता है। इस कविता को मैंने कहीं भी प्रकाशनार्थ नहीं भेजा, अतः इसका प्रकाशन नहीं हुआ। मेरी पहली प्रकाशित रचना 'सागर और हंस' है, इसका प्रकाशन 'नंदन' के अक्टूबर 1986 अंक में हुआ था। इसी रचना के प्रकाशन के बाद बाल साहित्य सृजन आरंभ हुआ। मैंने बाल साहित्य की लगभग सभी विधाओं पर लेखनी चलाई है। मेरी बाल कहानियाँ, बाल कविताएँ, बाल एकांकी तथा बालोपयोगी आलेख चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट ऑफ इंडिया, नई दिल्ली से प्रकाशित हुए। इस संस्थान द्वारा 2 पुस्तकों सहित मेरी 11 रचनाएँ प्रकाशित हुईं। एक लंबे समय बाद मैंने सूचनात्मक बाल साहित्य की आवश्यकता अनुभव की और इसका सृजन आरंभ किया।

आपको जनजातियों के विषय में शोध करने की प्रेरणा कहाँ से मिली? नट, कबूतरा, कंजर, मोघिया जातियों पर आपने बहुत लिखा है। यह कठिन सर्वेक्षण आपने कैसे संपन्न किया?

मैंने भारत की पूर्व अपराधी जनजातियों पर बहुत काम किया है। इनके संपर्क में मैं छात्र जीवन से था। मेरे जीवन का एक बड़ा भाग रेल बाजार में बीता। वहाँ गुलाबबाई का घर था। यहीं पर मेरा परिचय इन जनजातियों से हुआ, किन्तु यह एक सामान्य परिचय था। इस समय मैंने सोचा नहीं था कि भविष्य में मैं इन जनजातियों पर कार्य करूँगा।

सन् 1974 में मैं बुंदेलखण्ड कॉलेज, झाँसी आ गया। यहाँ कबूतरा नामक एक पूर्व अपराधी जनजाति बहुत सक्रिय है। सामान्यतः इस जनजाति के लोग देशी शराब बनाते हैं, राहजनी करते हैं और डकैती डालते हैं। कभी-कभी ये लोग तैयार फसलों की चोरी भी कर लेते हैं। भैंस की चोरी इनका प्रिय अपराध है। झाँसी के समाचार पत्रों में प्रायः कबूतरों के समाचार प्रकाशित होते रहते हैं। मैं इस प्रकार के समाचारों की कटिंग रख लेता था।

धीरे-धीरे बुन्देलखण्ड कॉलेज के कुछ प्राध्यापक मेरे मित्र बन गए। इनमें एक थे- डॉ. भगवानदास गुप्ता। प्रोफेसर गुप्ता इतिहास विभाग के अध्यक्ष थे। हमेशा शुष्क रहने वाले श्री गुप्ता से मुझे भरपूर स्नेह मिला। उनके खेत कबूतरों के एक गाँव के पास थे, अतः उनसे मुझे कबूतरों से सम्बन्धित अनेक रोचक जानकारियाँ मिलीं। डॉ. गुप्ता के साथ एक बार मैं परवई गाँव भी गया। यहाँ कबूतरों के कच्चे-पक्के मकान हैं और ये खेती करते हैं। मैंने शीघ्र ही कबूतरों पर एक शोधपत्र तैयार किया, जिसका प्रकाशन बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय की शोध पत्रिका 'वेतवावणी' में हुआ। धीरे-धीरे कबूतरा मेरे अध्ययन का प्रिय विषय बन गए तथा मेरे पास इनसे सम्बन्धित बहुत-सी जानकारियाँ एकत्रित हो गईं। इन सभी का प्रकाशन शोधपत्रों के रूप में हुआ।

विभा से विवाह के लगभग तीन वर्ष बाद मैं दतिया आ गया। यहाँ मेरी भेंट मोघिया जनजाति के लोगों से हुई। मोघियों के मुखिया अर्जुनसिंह देशी जड़ी-बूटी चिकित्सा का काम करते थे। पीतांबरा पीठ के सामने उनका डेरा था। अब उन्होंने डेरे को पक्के मकान में बदल दिया है और एक दुकान बना ली है। अर्जुनसिंह से मेरी मित्रता हो गई और धीरे-धीरे बढ़ती गई।

इसी समय रंगीन टेलीविजन प्रचलन में आया। मैंने 'टेलीविस्टा' खरीदा और अपने ड्राइंग रूम में रखवा दिया। यहाँ लगभग 30 लोग आराम से बैठ सकते थे। मोघिया जनजाति की स्त्रियाँ, बच्चे सभी आते थे और रविवार को टी.वी. देखते थे। यह सिलसिला 'रामायण', 'महाभारत' सीरियल्स तक चलता रहा।

विभा भोपाल की हैं। मैं प्रायः भोपाल आता था और जनजातियों के कल्याण के साथ ही योजनाओं की जानकारी भी अपने साथ ले जाता था। इससे मोघियों को लाखों रुपयों का लाभ मिला। धीरे-धीरे अर्जुनसिंह के माध्यम से कालबेलिया, कोयाराजलू, बवघरी आदि जनजातियों के लोगों से संपर्क बना। कुछ ही समय में मैं पूर्व अपराधी जनजातियों में इतना लोकप्रिय हो गया कि लोग राजस्थान और महाराष्ट्र से मेरे पास सरकारी सुविधाओं को प्राप्त करने के लिए प्रार्थना पत्र लिखवाने आने लगे।

मेरा भी पूर्व अपराधी जनजातियों से, विशेष रूप से मोघियों से लगाव बढ़ता गया। मैं इनके शादी-विवाह, पर्वों-त्यौहारों, विशिष्ट पूजाओं आदि में जाने लगा। कुछ समय बाद यह स्थिति आ गई कि इन्होंने 'पचप्याला' करके मुझे अपनी बिरादरी में मिला लिया।

इसी समय विख्यात महिला उपन्यासकार मैत्रेयी पुष्पा कबूतरा जनजाति पर उपन्यास लिखने के लिए सामग्री संकलित कर रही थीं। पूर्व अपराधी जनजाति के लोग जन-सामान्य से कभी सच नहीं बोलते। अतः मैत्रेयी को सफलता नहीं मिल रही थी।

एक दिन मैत्रेयी मेरे पास दतिया आईं और इसके बाद फिर लगातार एक सप्ताह तक आईं। वह प्रातः लगभग 10 बजे आती थीं और शाम 4-5 बजे तक वापस लौट जाती थीं। मैं उन्हें 10 से 1 बजे तक लेक्चर देता था। इसके बाद खाना खाकर सो जाता था। 3 बजे उठता था और 2 घण्टे पुनः लेक्चर देता था। मैंने मैत्रेयी को अपने प्रकाशित शोध आलेखों की फोटोकॉपियाँ भी दीं। अंतिम दिन चलते समय मैत्रेयी ने कहा था- 'ये शरीर आपका है, ये आत्मा आपकी है मैं तो बस शब्दों का चोला पहनाऊँगी।' और इस तरह यह उपन्यास बना 'अल्मा कबूतरी'। इस उपन्यास में उन्होंने पी.आर. शुक्ला नाम से मेरा स्मरण किया है। मैत्रेयी जुझारू, लगनशील और उद्देश्य के प्रति समर्पित हैं। उनके ये गुण प्रशंसनीय हैं।

मैत्रेयी पुष्पा को कबूतरा जनजाति से सम्बन्धित जानकारियाँ देने के बाद मैंने मोघियों पर ध्यान केन्द्रित किया। यह कार्य अभी चल रहा है। पूर्व अपराधी जनजातियों पर कार्य करना कठिन नहीं है। ये लोग सभ्य समाज के लोगों से अधिक विश्वसनीय होते हैं, किन्तु इनके समाज में अपराध को सामाजिक और धार्मिक मान्यता प्राप्त होने के कारण इनके अपराधी कार्यों से भयभीत होना स्वाभाविक है, किन्तु एक बार इनका विश्वास जीत लेने के बाद किसी प्रकार का भय नहीं जाता। मैंने इनके जन्म से लेकर मृत्यु तक के संस्कारों में भाग लिया है। इनके साथ जंगलों में इनकी चमत्कारी पूजाएँ देखी हैं। इनकी पंचायत के चित्र लिए हैं, किन्तु अभी तक कोई दुर्घटना नहीं हुई। पूर्व अपराधी जनजातियों पर मेरी चार पुस्तकें प्रकाशानाधीन हैं। मोघिया देशी जड़ी-बूटियों के विशेषज्ञ आदिम चिकित्सा व्यवस्था का समाजशास्त्रीय अध्ययन, 2. पूर्व अपराधी जनजातियों की न्याय व्यवस्था, 3. भारत की पूर्व अपराधी जनजातियाँ और इनकी उत्पत्ति सम्बन्धी मिथकथाएँ तथा 4. मोघिया जनजाति का समाजशास्त्रीय अध्ययन।

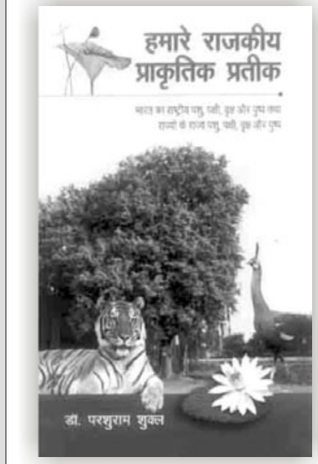

वर्तमान दौर प्रौढ़साहित्य की प्रधानता का है। ऐसे में आपने बाल साहित्य को अपने लेखन का आधार क्यों बनाया?

मैंने हमेशा लीक से हटकर लेखन का प्रयास किया। भारत की आजादी के पहले अंग्रेजों ने प्रशासनिक दृष्टि से पूर्व अपराधी जनजातियों पर बहुत काम किया। भारत की आजादी के बाद इन पर कोई विशेष काम नहीं हुआ। मैंने अपने अध्ययन का विषय पूर्व-अपराधी जनजातियों को चुना और इन पर अनेक शोध आलेख तथा सामान्य आलेख लिखे। 'मोघिया लोक कथाएँ' का मूल विषय पूर्व अपराधी जनजातियाँ ही हैं।

साहित्य का एक उद्देश्य समाज सुधार भी होता है। मेरा विश्वास है कि बूढ़े तोता राम-राम नहीं सीखते, अतः मैंने बाल साहित्य अपनाया। बाल साहित्य अपनाने का एक कारण और भी है। माँग और पूर्ति। भारत में बहुत बड़ी संख्या में सामान्य साहित्य लिखने वाले साहित्यकार हैं, किन्तु बाल साहित्यकारों की संख्या बहुत कम है। सामान्य साहित्यकारों में खेमेबाजी और गुटबंदी है, जबकि बाल साहित्यकारों में ऐसा नहीं है। बाल साहित्यकार बच्चों के समान सरल और सहृदय हैं।

बाल साहित्य को मैं साहित्य की स्वतंत्र विधा मानता हूँ तथा इसकी सभी विधाओं- बाल उपन्यास, बाल धारावाहिक, बाल कहानी, बाल एकांकी, शिशुगीत, बाल कविता आदि के विकास के लिए प्रयासरत हूँ। कुछ समय तक बाल साहित्य का सृजन करने के बाद मैंने यह अनुभव किया कि बाल साहित्य में सूचनात्मक साहित्य का अभाव है। इस अभाव की पूर्ति के लिए मैंने रेडियो, टी.वी., कम्प्यूटर, इंद्रधनुष जैसे विषयों पर बाल कविताएँ- रोबोट, मेढ़क, मुर्गा जैसे विषयों पर बालोपयोगी आलेख लिखे। ये आलेख राष्ट्रीय स्तर पर पुरस्कृत भी हुए और चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट द्वारा पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुए। इसके साथ ही मैंने मार्जार कोष ओर जलचर कोष जैसे विश्वकोश भी तैयार किए तथा थलचरों और जलचरों पर पुस्तकें तैयार कीं। इस प्रकार की सूचनात्मक बाल साहित्य की लगभग 50 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। मैंने यह अनुभव किया कि प्रौढ़साहित्य की तुलना में यह साहित्य आवश्यक एवं अधिक उपयोगी है। अतः मैंने प्रौढ़साहित्य पर ध्यान नहीं दिया।

आधुनिक युग विज्ञान और तकनीकी आविष्कारों का है। कहा जाता है कि विज्ञान और तकनीकी आविष्कारों ने वैचारिक कठोरता और औपचारिकताओं को बढ़ावा दिया है। इससे उपजी आत्ममुखी प्रवृत्तियों ने व्यक्ति के सामाजिक व्यवहार पक्ष को कमजोर दिया है। इस सम्बन्ध में आपका क्या विचार है?

समय परिवर्तनशील होता है। वर्तमान युग विज्ञान और प्रौद्योगिकी का युग है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में पाँच सौ वर्षों में इतने परिवर्तन नहीं हुए, जितने पचास वर्षों में हो गए तथा पिछले पाँच वर्षों में इतने परिवर्तन हो गए, जितने पचास वर्षों में नहीं हुए। परिवर्तन की गति बहुत तेज हुई है। ग्लोबलाइजेशन ने इस गति को बढ़ाया है और इसे एक विस्तृत क्षेत्र में फैलाया है। इसके परिणामस्वरूप समाज में अनेक प्रकार के परिवर्तन हुए हैं तथा व्यक्ति की विचारधारा और उसकी संवेदनाओं पर प्रभाव पड़ा है। व्यक्तिवाद, भौतिकवाद, धन के महत्त्व में वृद्धि, धर्म के प्रभाव में कमी, धर्म का व्यावसायीकरण, स्त्रियों की स्थिति में परिवर्तन, प्रेम विवाहों में वृद्धि, विवाह पूर्व यौन सम्बन्धों में वृद्धि, विवाह विच्छेद में वृद्धि, आर्थिक स्वतंत्रता पर बल आदि इसी के परिणाम हैं। व्यक्ति का आत्ममुखी होना भी इसी का प्रभाव है।

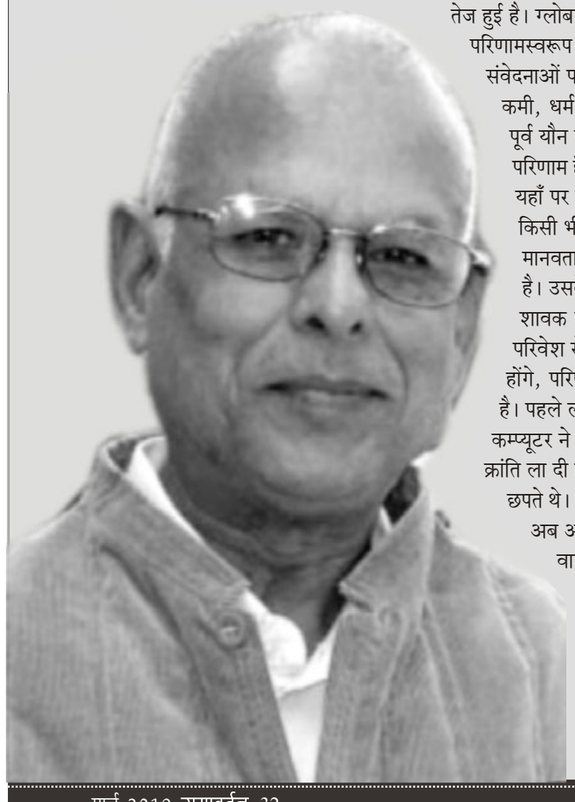

यहाँ पर विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि मानव और मानवता का अभिन्न सम्बन्ध है। किसी भी रूप में जब तक मानव रहेगा, मानवता रहेगी। व्यक्ति के ऐसे अनेक रिश्ते हैं, जो मानवता को समाप्त नहीं होने देंगे। बाघिन भी अपने बच्चों को बड़े कोमल ढ़ँग से पकड़ती है। उसके शावक के पास यदि कोई नर बाघ आ जाए तो क्रोधित हो उठती है, किन्तु यदि शावक का पिता आ जाए तो शांत बनी रहती है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के बदलते हुए परिवेश से जनसामान्य के साथ ही साहित्यकारों को भी नई-नई सूचनाएँ और उपकरण प्राप्त होंगे, परिणामस्वरूप उनके साहित्य में नवीनता आएगी। कम्प्यूटर इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। पहले लोग डरते थे कि कम्प्यूटर के आ जाने से बेरोजगारी बढ़ेगी, किन्तु ऐसा नहीं हुआ। कम्प्यूटर ने करोड़ों लोगों को रोजगार दिया। कम्प्यूटर ने साहित्य के लेखन एवं प्रकाशन में भी क्रांति ला दी है। वर्तमान समय में जितनी पत्रिकाएँ और समाचार पत्र छप रहे हैं, उतने पहले नहीं छपते थे। इसी प्रकार पुस्तकों का लेखन और प्रकाशन भी बढ़ा है।

अब आइए, आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी के व्यक्ति के सामाजिक व्यवहारों पर पड़ने वाले प्रभाव की चर्चा की जाए। यह सच है कि अनेक कारणों से व्यक्ति के व्यवहार में कृत्रिमता बढ़ी है, किन्तु कृत्रिमता अस्थाई होती है। थोड़ा प्रयास करके इसे समाप्त किया जा सकता है और इसे अंतरंगता में बदला जा सकता है। मेरा विश्वास है कि मानव का विचार पक्ष कितना भी प्रबल हो जाए, उसका भाव पक्ष अपना महत्त्व बनाए रखेगा। वर्तमान संवेदनशील साहित्य इसका सर्वोत्तम उदाहरण है।

बाल साहित्य का प्रमुख उद्देश्य आपकी दृष्टि में क्या है?

बाल साहित्य के सम्बन्ध में, विशेष रूप से बाल साहित्य के उद्देश्य के सम्बन्ध में अनेक विरोधाभासी धारणाएँ प्रचलित हैं। अधिकांश बाल साहित्यकार मनोरंजन को बाल साहित्य का उद्देश्य मानते हैं। मैं भी इस मत से सहमत हूँ। इसके विपरीत बाल साहित्यकारों का एक बहुत बड़ा वर्ग नैतिक शिक्षा को बाल साहित्य का उद्देश्य मानता है। इस वर्ग के बाल साहित्यकारों का मत है कि नैतिक शिक्षा के अभाव में बाल साहित्य की उपयोगिता समाप्त हो जाती है। यह एक प्रभावशाली तथ्य है। सम्भवतः यही कारण है कि हिन्दी के अधिकांश बाल साहित्यकारों ने नैतिक शिक्षा देने वाली बाल कविताओं का सृजन किया है। इस सम्बन्ध में मेरा मत है कि शिशु गीतों में नैतिक शिक्षा किसी भी रूप में नहीं दी जाना चाहिए। शिशुगीतों में केवल मनोरंजन होना चाहिए। बाल कविताओं और किशोर कविताओं में नैतिक शिक्षा दी जा सकती है। सामान्यतया बच्चे प्रत्यक्ष नैतिक शिक्षा पसन्द नहीं करते, अतः बाल साहित्य में मनोरंजन की चाशनी में लपेट कर नैतिक शिक्षा दी जानी चाहिए।

इस प्रकार बाल साहित्य के दो उद्देश्य स्पष्ट हो जाते हैं- मनोरंजन और नैतिक शिक्षा। वर्तमान समय में सामान्य ज्ञान का महत्त्व तेजी से बढ़रहा है। आजकल प्राइमरी कक्षाओं से लेकर प्रशासनिक परीक्षाओं तक में सामान्य ज्ञान का महत्त्व देखा जा सकता है। सामान्य ज्ञान के बल पर आप करोड़पति (कौन बनेगा करोड़पति) बन सकते हैं। सामान्य ज्ञान व्यक्ति के दैनिक जीवन में भी आवश्यक और उपयोगी होता है। अतः मैंने सूचनात्मक बाल साहित्य की नींव रखी है। सूचनात्मक बाल साहित्य के द्वारा बाल साहित्यकार बाल कविताओं, बाल कहानियों, बाल नाटकों, बाल उपन्यासों, बाल एकांकियों, बालोपयोगी आलेखों आदि के माध्यम से बच्चों को इतिहास, भूगोल से लेकर भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, प्राणी विज्ञान, वनस्पति विज्ञान आदि की जानकारियाँ दे सकते हैं। मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं ने सूचनात्मक बाल साहित्य का स्वागत किया है और बड़ी संख्या में इसका प्रकाशन आरंभ कर दिया है। इसके साथ ही बहुत-से साहित्यकारों ने भी सूचनात्मक साहित्य लिखना आरंभ कर दिया है।

आपने सूचनात्मक बाल साहित्य लिखा है। कृपया बताइए कि सूचनात्मक बाल साहित्य की अवधारणा क्या है?

बाल साहित्य में रुचि उत्पन्न होने के बाद मैंने बाल पत्रिकाओं और बालोपयोगी पुस्तकों का अध्ययन आरंभ किया। इस अध्ययन में मुझे अनेक भ्रामक तथ्य देखने को मिले, जिनका उल्लेख मैं पहले कर चुका हूँ। इसके साथ ही मुझे लगा कि बच्चों को मनोरंजन और नैतिक शिक्षा के साथ ही साथ कुछ और भी दिया जाना चाहिए। मैंने सूचनात्मक साहित्य लिखने का निश्चय किया। इस सम्बन्ध में मैंने एक शोध पत्र भी लिखा- 'हिन्दी बाल साहित्य में सूचनात्मक साहित्य का अभाव : समस्या और समाधान।' यह शोधपत्र सत्यसाईं महाविद्यालय, भोपाल द्वारा आयोजित राष्ट्रीय शोध संगोष्ठी में पढ़ा गया। इसमें मैंने दो प्रकार के बाल साहित्य का उल्लेख किया है- सृजनात्मक और सूचनात्मक। सूचनात्मक बाल साहित्य से मेरा अभिप्राय उस बाल साहित्य से है, जिसमें यथार्थ और वैज्ञानिक तथ्य विद्यमान हैं। इसके अंतर्गत उन बाल कहानियों, बाल उपन्यासों, बाल धारावाहिकों, बाल कविताओं, बालोपयोगी आलेखों आदि को सम्मिलित किया जा सकता है, जो बच्चों को विभिन्न प्रकार की यथार्थ और वैज्ञानिक सूचनाएँ प्रदान करते हों। उदाहरण के लिए झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई पर लिखा गया बाल नाटक अथवा बाल एकांकी, जिसमें लक्ष्मीबाई से सम्बन्धित यथार्थ तथ्य हों, सूचनात्मक बाल साहित्य होगा। इसी प्रकार किसी भी प्राकृतिक घटना अथवा जीव की जानकारी देने वाली बाल कविता को भी सूचनात्मक साहित्य में सम्मिलित किया जा सकता है- *भारत सहित कई देशों में नीलकंठ मिल जाता।/कंठ नहीं नीला है, फिर भी, नीलकंठ कहलाता।/नीले, पीले, हरे कत्थई, रंग चटके चमकीले।/खुले वनों में विचरण करना, सूखे हों या गीले।/दिन भर भोजन करता रहता, कीट, पतंगे खाता।/मेंढ़क, चूहे, साँप, छिपकली, सबको मार गिराता।/आते ही मौसम बसंत का, जमकर शोर मचाता।/और रिझाने मादाओं को, कलाबाजियाँ खाता।/ मादा सेती अंडे बच्चे, नर भोजन पहुँचाता।/डेढ़माह में ही इसका बच्चा, नीड़ छोड़ उड़ जाता।*

आपने अनेक प्रकार के विश्वकोश तैयार किए हैं। ये विश्वकोश बालकों के लिए हैं या

किशोरों और प्रोढ़ों के लिए?

हिन्दी में विश्वकोशों का अभाव-सा है। विशिष्ट विषयों पर आधारित विश्वकोशों का तो अभी शुभारंभ ही नहीं हुआ है। इस कमी को पूरा करने के लिए मैं मार्जार कोश, जलचर कोश, मत्स्य कोश, मोलस्क कोश, क्रस्टेशिया कोश, उभयचर कोश, जलीय स्तनपाई कोश आदि पर काम कर रहा हूँ। इनमें मार्जार कोश और जलचर कोश प्रकाशित हो चुके हैं। ये सभी विश्वकोश किशोरों के लिए हैं, किन्तु परिपक्व बुद्धि वाले दस-बारह वर्ष से अधिक आयु के बच्चे और प्रौढ़ भी इनका आनंद उठा सकते हैं। एक बार जीव विज्ञान के एक मित्र प्राध्यापक ने तो यहाँ तक कह दिया कि ये विश्वकोश प्राध्यापकों और शोधार्थियों तक के लिए उपयोगी सिद्ध होंगे।

वर्तमान बाल साहित्य के इतिहास की कमी अनुभव की जा रही है। क्या आप बाल साहित्य का इतिहास लिखे जाने की आवश्यकता अनुभव नहीं करते?

बाल साहित्य के क्षेत्र में लंबे समय से बाल साहित्य की कमी अनुभव की जा रही है। मैंने बाल साहित्य के इतिहास की रूपरेखा तैयार की थी। इसका एक आलेख के रूप में 'भाषा' और 'अक्षर शिल्पी' में प्रकाशन भी हुआ, किन्तु समयाभाव के कारण यह कार्य आगे नहीं बढ़सका।

मेरे साथ ही भारत के अनेक बाल साहित्यकार हिन्दी बाल साहित्य के इतिहास की कमी अनुभव कर रहे हैं तथा इसे दूर करने के लिए प्रयासरत हैं। कृष्ण शलभ की 'बचपन एक समंदर' की भूमिका हिन्दी बाल कविता के इतिहास का प्रामाणिक दस्तावेज है। प्रकाश मनु ने इससे भी आगे बढ़कर हिन्दी बाल कविता का इतिहास लिख डाला है तथा यह प्रकाशित भी हो चुका है। वर्तमान में वह हिन्दी बाल साहित्य के इतिहास पर काम रहे हैं।

वर्तमान युगीन चेतना के संदर्भ में बाल साहित्य की दशा और दिशा क्या होगी?

बंगला बाल साहित्य, मराठी बाल साहित्य और मलयालम बाल साहित्य ने कुछ वर्षों में महत्त्वपूर्ण प्रगति की है। बंगाल में तो रवीन्द्रनाथ टैगोर के समय से बाल साहित्य लिखा जा रहा है। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने स्वयं बाल साहित्य लिखा है। बंगाल की तो यह स्थिति है कि बिना बाल साहित्य लिखे किसी भी साहित्यकार को मान्यता ही नहीं मिलती। हिन्दी बाल साहित्य में यह स्थिति नहीं है। हिन्दी के अनेक सफल साहित्यकारों ने बाल साहित्य का सृजन किया, किन्तु बाद में इसे पूरी तरह छोड़ दिया। मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' आदि इसी प्रकार के बाल साहित्यकार हैं। हिन्दी बाल साहित्य को एक लंबे समय तक दूसरे दर्जे का साहित्य समझा गया। आज भी बहुत से साहित्यकार हिन्दी बाल साहित्य का उपहास उड़ाते हैं। और बाल साहित्यकारों को सामान्य लिखने का सुझाव देते हैं। इसके विपरीत गुलजार जैसे विद्वान् बाल साहित्य को एक अत्यन्त कठिन कार्य मानते हैं और यह स्वीकार करते हैं कि बाल साहित्य सृजन सभी साहित्यकारों के वश की बात नहीं है।

हिन्दी बाल साहित्यकारों का एक वर्ग ऐसा भी है, जो भारत की आजादी के बाद से बाल साहित्य को समृद्ध और सम्पन्न बनाने का प्रयास कर रहा है। जहूर बख्श, रामभरोसे गुप्त 'राकेश', हरिकृष्ण देवसरे, चंद्रपाल सिंह यादव 'मयंक', विनोदचंद पाण्डेय 'विनोद', राष्ट्रबंधु', सरोजिनी कुलश्रेष्ठ, शंकर सुल्तानपुरी, मधु भारतीय, कन्हैयालाल नंदन आदि ऐसे ही बाल साहित्यकार हैं। इनके श्रम और लगन का परिणाम सामने आने लगा है तथा साहित्यकारों के बहुत बड़े वर्ग ने बाल साहित्य के महत्त्व को स्वीकारना आरंभ कर दिया है। भारत के विभिन्न विश्वविद्यालयों में सुचारु रूप से चल रहे बाल साहित्य से सम्बन्धित शोधकार्य इसका प्रमाण हैं। हिन्दी बाल साहित्य के बढ़ते हुए महत्त्व को इसी तथ्य से समझा जा सकता है कि बाल साहित्य शोध संस्थान इन्दौर से विगत कुछ वर्षों में विभिन्न महाविद्यालयों के 23 शोधार्थी पंजीकृत हो चुके हैं तथा इनमें से सात शोधार्थी अपना शोधकार्य पूरा कर चुके हैं।

हिन्दी बाल साहित्य परम्परा से आधुनिकता की ओर बढ़रहा है। इसके सभी पक्षों में नए-नए प्रयोग हो रहे हैं। बाल साहित्य पर किए जाने वाले शोधकार्यों से निश्चित रूप से इस दिशा में अनेक महत्त्वपूर्ण तथ्य प्राप्त होंगे।

डॉ. श्याम बिहारी श्रीवास्तव
निकट भवानी मार्केटिंग सोसाइटी,
अनन्य कॉलोनी, सेंवढ़ा जिला दतिया (म.प्र.)
मो. 09827815769

श्रद्धांजलि

कृष्णा सोबती जी
जन्म 18 फरवरी 1926
निधन जनवरी 2019

प्रख्यात कथाकार कृष्णा सोबती जी एवं लब्धप्रतिष्ठ आलोचक
डॉ.नामवरसिंह के निधन पर
समावर्तन परिवार की ओर से विनम्र श्रद्धांजलि....

डॉ.नामवरसिंह
जन्म 28 जुलाई 1926
निधन 19 फरवरी 2019

शिवकुमारी जी की पेंटिंग

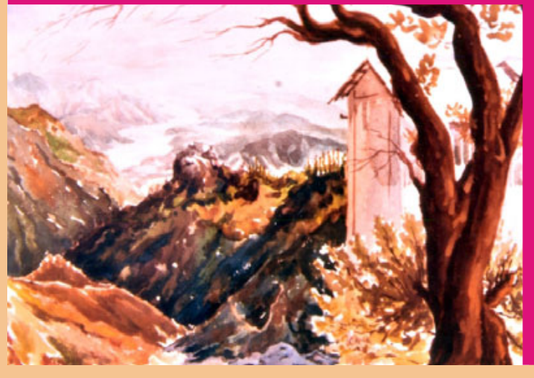

शिवकुमारी जी की पेंटिंग

ઈન્ડેક્ષ્ટ-સી

ઈન્ડસ્ટ્રીઅલ એક્ષ્ટેન્શન કોટેજ

(ગુજરાત સરકારની સંસ્થા)

iNDEXT-c

રજી. ઓફીસ :
બ્લોક નં. ૭/૧, ઉદ્યોગ ભવન, સેક્ટર - ૧૧, ગાંધીનગર.
ફોન. : ૦૭૯ - ૨૩૨૫૪૨૬૧ - ફેક્સ:૦૭૯ - ૨૩૨૫૬૦૦૭
E-mail : exdire-indext-c@gujarat.gov.in
Website : www.craftofgujarat.gujarat.gov.in

ઈન્ડેક્ષ્ટ-સી - કુટિર અને ગ્રામોદ્યોગ સ્થાપવામા માહિતી અને માર્ગદર્શન પૂરું પાડતી ગુજરાત સરકારશ્રીની સંસ્થા

ઈન્ડેક્ષ્ટ-સીની રચના કોઈપણ નફાકારક પ્રવૃત્તિ સિવાયના નીચેના ઉદેશો માટે થયેલા છે.

૧. કુટિર અને ગ્રામોદ્યોગ સ્થાપવા ઈચ્છુક સાહસિકોને ઉદ્યોગોની પસંદગી, સ્થળ પસંદગી તથા જે તે ઉદ્યોગ માટે સરકારશ્રીના પ્રવર્તમાન પ્રોત્સાહનો / લાભો વિગેરેની જાણકારી આપવી.

૨. કુટિર અને ગ્રામોદ્યોગ ક્ષેત્રની વિવિધ સહાયની યોજનાઓને એકત્રિત કરી તે વિશે ભાવિ ઉદ્યોગ સાહસિકોને માહિતી આપવી અને આવી માહિતીનું સાહિત્ય પ્રકાશિત કરવું.

૩. કુટિર અને ગ્રામોદ્યોગ ક્ષેત્રના વિવિધ ઉદ્યોગની માહિતી અને ઉદ્યોગ માટેની રૂપરેખા (પ્રોજેક્ટ પ્રોફાઈલ)એકત્રિત કરી તે વિશે ઉદ્યોગ સ્થાપવા ઈચ્છુક વ્યકિતઓને તેની જાણકારી આપવી.

૪. કુટિર ઉદ્યોગ ખાતાની તથા કુટિર ઉદ્યોગ સંલગ્ન બોર્ડ / કોર્પોરેશનની વિવિધ યોજનાઓના ફોર્મ / અરજીપત્રક પૂરા પાડવા.

૫. કુટિર ઉદ્યોગના વિકાસ માટે જાહેરાત મારફત પ્રચાર ઝૂંબેશ ચલાવવી.

૬. કુટિર ઉદ્યોગના વિકાસ માટે સેમિનાર, વર્કશોપ તથા પ્રદર્શનનું આયોજન કરવું અને આવા આયોજન માટે સહાય પૂરી પાડવી.

૭. કુટિર ઉદ્યોગના વિકાસમાં ઉપયોગી હોય તેવી અન્ય પ્રવૃતિઓ હાથ ધરવી.

૮. કુટિર ઉદ્યોગ ક્ષેત્રની આર્થિક સમસ્યાઓના નિવારણ માટે બેન્કો તથા અન્ય નાણાંકીય સંસ્થાઓ જોડે ચર્ચા-વિચારણા હાથ ધરવી.

चित्रों में परशुराम शुक्ल

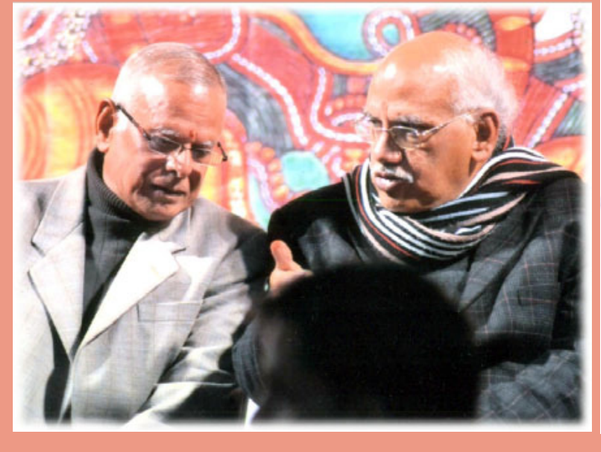

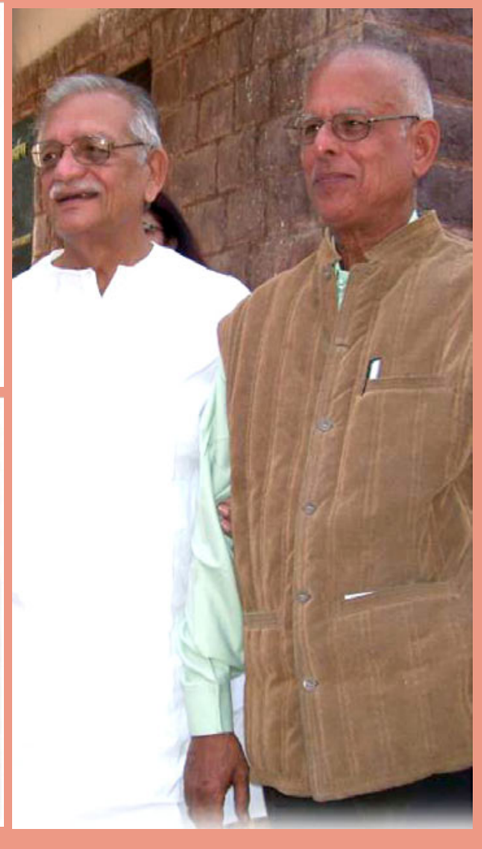

नया साल

देवांशु पाल

शशिभूषण शास्त्री ऑटो से उतरकर कुछ दूर फूटपाथ पर चलकर डॉ.अवधेश शर्मा के क्लीनिक पहुँचकर कलाई पर बंधी घड़ी पर समय देखा, सुबह के पौने ग्यारह बज रहे थे। वह समय से पन्द्रह मिनट पहले ही पहुँच गए। आजकल शहर की ट्रेफिक के कारण सिग्नल न मिलने की वजह से लोगों को बेवजह घंटो चौराहे पर खड़े रहने की सजा भुगतनी पड़ती है। पता नहीं कब किसी मंत्री का काफिला सड़क पर आ जाए, कभी मजदूरों के जुलुस निकल पड़े और कभी किसी दुर्घटना पर अनावश्यक ट्रेफिक को घंटों रोके रखना आम बात हो गई है।

शशिभूषण, क्लीनिक के भीतर प्रवेश कर मरीजों की भीड़ देखकर उनके चेहरे पर विरक्ति के भाव खींच गए। इन दिनों लोग कुछ ज्यादा ही बीमार पड़ रहे हैं। अधिकतर डॉक्टरों का कहना है कि प्रदूषण, खान पान में अनियमितताएँ और दवाईयों के अधिक सेवन के कारण लोग अधिक बीमार पड़ रहे हैं। प्रायः सभी डॉक्टरों के क्लीनिक पर मरीजों की लम्बी लाईन लगी रहती है।

काउंटर पर बैठी रिसेप्सनिस्ट लड़की के पास जाकर शशिभूषण पूछा-''मेरा नम्बर कब लगेगा.....''। लड़की ने नाम पता पूछा फिर शशिभूषण को बताया-''सर आपका नम्बर पन्द्रह है। आप बैठ जाइए.....''। शशिभूषण ने फिर पूछा-''कितना समय लग जाएगा.....''। लड़की ने कहा-''डेढ़दो घंटे सर.....''। यह सुनकर शशिभूषण का चेहरा फीका पड़ गया। इस उम्र में डॉक्टर के इंतजार में उन्हें स्टील की कुर्सी पर डेढ़दो घंटे बैठना होगा।सभी कुर्सी भरी थी सिर्फ कोने में एक कुर्सी खाली थी। खाली कुर्सी पर बैठते हुए उन्होंने कंधे पर लटकते खादी के थैले को गोद में रख लिया। थैलो में डॉक्टर की पुरानी प्रस्क्रिप्शन एवं जॉच रिपोर्ट की फाईल, पानी का बॉटल, माथे का टोपा, आज का अखबार और बिस्किट की पॉकेट जो पत्नी ने निकलते समय दी थी। एक बार सोचा थैले से अखबार निकालकर पढ़े पर जब अपने आस-पास के मरीजों की तरफ देखा तो किसी को अखबार या पत्रिका पढ़ते हुए दिखाई नहीं दिए। लोग सामाने दीवार पर लगी रंगीन टी.व्ही. पर समाचार को देख रहे थे, कुछ लोग अपने मोबाईल पर ऑखें गड़ाए थे और कुछ लोग ऑखें बंद कर अपने नम्बर का इंतजार कर रहे थे।

बात दरअसल हफते दस दिन पहले की है। शशिभूषण सुबह सोकर उठे तो हल्का सा सीने में दर्द उठने लगा। पहले तो वह काफी घबरा गए, फिर एक गिलास पानी पिया। थोड़ी देर के बाद उन्हें ठीक लगने लगा। दोपहर के बाद फिर दर्द उठने लगा तब उन्होंने गैस की टेबलेट खा ली फिर थोड़ी देर के बाद उन्हें राहत मिली। चार-पॉच दिन निकल जाने के बाद भी दर्द पूरी तरह से ठीक नहीं हुआ। शशिभूषण थोड़ा सा घबराए। शाम को बेटे के दफ्तर से लौट आने के बाद शशिभूषण ने अपने दर्द के बारे में बताया तो बेटे ने कहा-''डॉक्टर से परामर्श कर लीजिए.....आजकल तो डॉक्टर के पास मरीजों की लम्बी लाईन लगी रहती है.....आपके पास तो डॉक्टर के क्लीनिक का नम्बर तो होगा.....''। शशिभूषण ने कहा-''हॉ वो तो प्रिस्क्रिप्शन में मिल जाएगा.....''। बेटे ने नाश्ते की टेबल से उठते समय कहा- ''देख लीजिए फोन पर नम्बर लगा लीजिए और चले जाइए.....''। घबराईए मत वैसा कोई प्राब्लम नहीं होगा, खान-पान की गड़बड़ी से यह परेशानी हुई होगी.....फिर भी एक बार डॉक्टर से मिल लीजिए.....''। पास बैठी पत्नी धीमे स्वर मे बोली-''आपके साथ मैं भी चलूँगी डॉक्टर के पास.....''। तभी बेटे ने शशिभूषण की तरफ देखकर कहा-''हॉ आप मम्मी को साथ ले जा सकते हैं, वैसे मम्मी तो घर पर ही रहती है, उनका घूमना हो जाएगा.....''। शशिभूषण पत्नी की तरफ देखकर कहा-''मैं अकेला ही चला जाउँगा, खामोखा तुम क्यों परेशान होंगी, पता नहीं डॉक्टर से मिलने के लिए मुझे कितनी देर इंतजार करना होगा, तुम कहॉ तक बैठ पाओगी, तुम्हारे दोनों पॉव के घुटने का दर्द बढ़जाएगा.....''।

क्लीनिक पर मरीजों की भीड़ बढ़ती जा रही थी। दो साल पहले जब शशिभूषण यहॉ आए थे बेटे के साथ, उस दिन भी ऐसी ही भीड़ थी। चूँकि उनके सीने में तेज दर्द हो रहा था इसलिए सिस्टर ने शशिभूषण को इमरजेंसी में भर्ती करा दिया था । उस दिन डॉक्टर ने ई.सी.जी. और ईको करने के बाद तुरंत एनजीओप्लास्टी की सलाह दी। बेटे ने करीब तीस-पैंतीस मिनट डॉक्टर से चर्चा के बाद शाम को सर्जरी के लिए तैयार हुए थे। बेटे ने फोन पर मम्मी और पत्नी को क्लीनिक बुला लिया था।

सर्जरी के बाद दूसरे दिन सुबह शशिभूषण को जनरल वार्ड में शिफ्ट कर दिया गया था, और दो दिन बाद उन्हें घर जाने की छुट्टी भी मिल गई थी। सर्जरी से एक साल तक शशिभूषण डॉक्टर के चेकअप में रहे। फिर सारी स्थिति सामान्य हो गई थी। लगभग दो वर्षों के बाद फिर यह नई

स्थिति क्यों आई, शशिभूषण इसी बात को लेकर परेशान था।

इसी साल जुलाई में इकलौती बेटी की डिलीवरी कोरबा में हुई। शशिभूषण पत्नी के साथ दामाद के घर बीस दिन रहें। फिर अगस्त माह मे बेटे की शादी कराई। यह सभी काम ठीक से निपट गया था। शशिभूषण को पाँच साल हो गए सेवानिवृत्त हुए। सेवानिवृत्त के बाद उन्होंने नौकरी के पैसों से घर बनाया।

शशिभूषण प्रतिदिन सुबह जब नहाकर भगवान की पूजा करते हैं, तब वह अपने ईश्वर से हाथ जोड़कर यही प्रार्थना करते हैं कि हे भगवान परिवार के सभी सदस्यों को स्वस्थ एवं खुश रखें, लोगों की बुरी नजर से बचाए रखें। पत्नी भी प्रसन्न थी। बारिश के बाद शशिभूषण पत्नी को लेकर शिर्डी साईबाबा के दर्शन कर आए थे। पत्नी सांईबाबा के दर्शन से खुश थी। परिवार में खुशनुमा माहौल था। पूरा यह साल शशिभूषण एवं उनके परिवार वालों का अच्छा ही गुजर रहा था। पड़ोस के घन याम तिवारी जो एफसीआई से रिटायर हुए है, सुबह टहलते समय अक्सर शशिभूषण से कहते है-'' शास्त्रीजी आपके पास एनर्जी बहुत है, आप मुझसे भी तेज चलते हैं। जबकि मैं आपसे दो साल छोटा हूँ लेकिन मेरे पेट जो निकल आया है। छः माह से डॉक्टर के कहने पर सुबह टहलने लगा हूँ पर तोंद जस की तस है। पता नहीं यह कम होगी कि नहीं या फिर मुझे बहुत जल्दी अपने साथ शमशान ले जाएगा...''। यह सुनकर सभी जोर से हँस पड़ते हैं।

धीरे-धीरे शशिभूषण का नम्बर जैसे जैसे पास आते जा रहा था उसके मन में तरह तरह के भय व बीमारियो की शंकाए घर करने लगी। सब कुछ ठीक ही तो चल रहा था फिर यह अचानक शशिभूषण अपने स्वास्थ्य को लेकर चिंतित क्यों हो गए। कुछ दिन पहले की बात है शशिभूषण के घर के दरवाजे पर साधुबाबा आ पहुँचे। शशिभूषण बाहर निकल आए और पर्स से दस रूपए निकालकर देने लगे, यह देखकर बाबा बड़े ही चतुराई से शशिभूषण के माथे पर हाथ रखकर जोर-जोर से बड़बड़ाने लगे। शशिभूषण को यह समझने में देर नहीं लगा कि बाबा दस रूपए से संतुष्ट नहीं है। शशिभूषण पर्स से पैसे निकालने लगे तभी बाबा उसके हाथ की लकीर पढ़ने लगे- ''तेर हाथ की लकीरें तेरे कष्ट बता रही है। दीवाली तक तेरी किस्मत में सुख था जो तुने भोग लिया अब दुख और परिशानियाँ काल बनकर आ रहा है.....''। यह सुनकर शशिभूषण डर गए, पर्स से पाँच सौ रूपए निकालकर बाबा के हाथों में थमा दिए। बाबा खुश हुए, अपने थैले से एक पुड़िया निकालकर शशिभूषण के हाथ में पकड़ा दिए-''इस विभूति को नहाने के पश्चात अपने माथे पर लगा लेना.....''। यह कहकर बाबा चल गए।

इस घटना ने शशिभूषण के दिल में गहरा असर डाला और वे कई दिनों तक रात में ठीक से सो नहीं सके। आज अचानक पुरानी बातें याद आने पर वह विचलित होने लगे, मन में भय होने लगा कि कहीं कोई नई बीमारी चुपके से उन्हें दबोच तो नहीं रही है, थैले से पानी की बॉटल निकालकर दो घूंट पानी पिया फिर सामने चेम्बर की तरफ देखने लगे। अभी उनका नम्बर आने में देर है। नया साल आने में कुछ दिन शेष रह गए हैं। टी.व्ही.पर नए साल का धमाकेदार विज्ञापन आ रहा था। शशिभूषण मन ही मन सोच रहा था उसका नया साल कैसा रहेगा ?

गायत्री विहार,विनोबा नगर, बिलासपुर छ0ग0 495004
मो0 नं0 09907126350
E-Mail dewanshupal@gmail.com

चिल्ड्रन पार्क

राजेश सक्सेना

वह एक धार्मिक नगर था, कई मंदिर थे वहाँ उनसे निरन्तर आरतियों, मंत्रोच्चार और घण्टियों की आवाजें आती रहती थी !

नगर के बाहर एक अस्पताल के नजदीक भी एक मंदिर था सुंदर स्थापत्य आकर्षक मूर्तियां, देवी देवताओं की, सुबह शाम भक्तों की भीड़ लगती, वहीं अस्पताल के सामने कोई दस पन्द्रह झोपड़ियां थी जिनमें दिहाडी मजदूर अपनी औरतों,बच्चों के साथ उनमें अपनी जिंदगी सुकून के साथ बिता रहे थे,रोज सुबह,शाम उनके झोंपड़ों से उठता धुआँ बता देता कि मेहनतकशो की रोटी कितनी स्वादिष्ट और आदिम खुशबू से भरी है ! इन झोपड़ियों में रहने वाले मजदूरों के करीबन 10-15 बच्चे थे वे इस जगह पर खेलते रहते,कहीं साइकिल के पुराने ट्यूब, टायरों को जोड़कर दो छोटे पेड़ो की डालियों से बांधकर छोटा सा झूला बना लिया था, जिसमें झूलते खुश होते,छुपाछई के लिए झोंपड़ियों के पीछे जाकर छिपते,सीमेंट के बड़े पाइप के टुकड़ों में खेलते और मस्त रहते !

उस दिन कुछ खास तो नहीं बस अपने दोस्त महेश की पत्नी ममताजी की पेंटिंग प्रदर्शनी देखकर लौट रहा था आकाश। उस प्रदर्शनी के अदभुत चित्रों में, प्रेम और जीवन संघर्ष, रोजमर्रा की मुश्किलें, उलझी पर्ते और इन पर्तो के बीच के अंतराल में जीवन के लिए उत्सव और आनन्द मनाने के अनेक अवकाशों की कथा कहते चित्र बेहद खूबसूरत और आकर्षक, इन चित्रों की प्रभाव शीलता में उलझा आकाश अपनी स्कूटर से घर की तरफ लौट रहा था। उसके घर के रास्ते में वह मंदिर, अस्पताल और झोंपड़ियाँ पड़ती थी, कई बार आकाश उधर से निकलते हुए सोचता मंदिर का ईश्वर जरूर इनका निगेहबान है,वर्ना इतनी दूभर जिंदगी से दो चार होते इनके बीच कभी झगड़ा नहीं होता देखा, पुर सुकून शांति के साथ सो जाते अगले दिन फिर मजदूरी करने के लिए !

पर आज आकाश के कानों ने इन झोपड़ियों के पास आते आते एक बच्चे के रोने की आवाज सुनी, स्कूटर की तेज गति की घरघराहट और मंदिर की तेज घण्टियों और आरती की आवाजों के बीच बच्चे का करूण रूदन और सिसकियाँ शायद दबी जा रहीं थी,पर ये आवाजें आकाश के कान तक फिर भी पहुंच रही थी ये उसके कानों की सजगता थी या बच्चे के रूदन में मिली करूणा की ताकत, पता नहीं पर उसके रूदन को सुन उसने स्कूटर की गति धीमी करते हुए उस झोपड़ी के पास रूककर देखा वहां उसे एक दुबली मरियल सी औरत एक छोटे से बच्चे पर छड़ी बरसा रही थी, बच्चा बहुत छोटा चार पांच साल का रहा होगा, वह औरत भी दुबली मरियल होने के बावजूद ताकत और जीवन से भरपूर औरत थी आकाश ने स्कूटर सड़क के साईड में खडा करके उससे पूछा कि बच्चे को क्यों मार रही हो ? वह कुछ बोल रही थी जो समझ मे नही आ रहा था, अचानक मंदिर की घण्टियों का स्वर आना बंद हो गया, स्कूटर रूकने के कारण उसकी आवाज भी अब नहीं आ रही थी ऐसा लगा ईश्वर के कानों में भी वह आवाज पड़ने लगी थी ! आकाश ने उस औरत से फिर पूछा क्या यह तुम्हारा बेटा है ?

उस औरत ने जवाब में हामी करते हुए सिर हिलाया, आकाश ने आश्चर्य प्रकट करते हुए फिर पूछा तो फिर इसे इस तरह लकड़ी से क्यों मार रही हो ?

वह अपनी बोली में कुछ बोली ''जिसका मतलब था यह बच्चा समझता ही नहीं और बहुत जिद करता है'' मैंने उस बच्चे को गौर से देखा वह खीझ,जिद और गुस्से से भरा लंबी लम्बी सिसकियाँ लेकर बेतहाशा रोए जा रहा था।

आंसुओं में भीगे,और धूल सने उसके चेहरे पर एक मासूम कशिश के साथ भव्य चमक की भी छाप थी, आंसुओं के रेलों ने दोनों सूखे गालों पर गरीबी की दो सरल रेखाएँ खींच दी थी !

आकाश ने उसे चुप कराने की कोशिश की पर उसकी सिसकियां बन्द नहीं हो रही थी, फिर उसने उसे अपने पास बुलाने की कोशिश की तो वह और जोर से रोने लगा जैसे कह रहा हो कोई भी बाहरी समझाईश या हस्तक्षेप उसे पसंद नहीं, ये माँ बेटे के बीच की लड़ाई में कोई और क्यों आ गया !

फिर आकाश ने ''उस औरत से पूछा कि ये बच्चा क्या चाहता है ? इस बार झोपड़ी से बाहर एक बच्ची निकली शायद वह उस बच्चे की बहन थी, उससे थोड़ी बड़ी थी उसने आकाश को बताया कि मेरी माँ ने मेरे भाई को इसलिए मारा कि वो मेरे पिता के साथ साइकिल पर बैठकर बाजार जाने की जिद कर रहा था,मेरे पिता कुछ घरेलू चीजें लेने बाजार गए हैं ये उनके साथ जाने की जिद कर रहा था। आकाश ने पूछा तुम्हारे भाई का नाम क्या है उसने बताया गोपाल। आकाश ने प्यार से उस बच्चे को नाम से पुकारा गोपाल इधर आओ मेरे पास पर वह नही आया, इस समय उसकी मनोदशा में पिता के साथ साइकिल पर बाजार न जा पाने की खीझ और उससे पैदा हुआ बाल सुलभ गुस्सा और निराशा थी जिसकी गिरफ्त में उसका कोमल मन कैद था !

आकाश के मन में अपने बचपन में पिता के साथ साइकिल पर बाजार जाने की कई स्मृतियाँ तैर गई और साथ ही वह खुशी भी जो उसे अपने समय मे मिली थी,गोपाल उससे महरूम था,उसकी खीझ वाजिब थी ! बचपन की इन्हीं बातों और यादों में खोया आकाश एक दुकान से कुछ बिस्किट और ब्रेड और चिप्स के पैकेट खरीदकर उस झोपडी पर फिर जाता है, वहाँ गोपाल अभी भी लम्बी सिसकियां भरकर रो रहा है, मंदिर की घण्टियाँ शांत थी,शयन आरती हो गई थी और मंदिर के पट बन्द थे, रूग्णालय के भीतर मौजूद बीमार समाज अब शायद सो गया है,बस गोपाल है कि रो रहा है, आकाश ने उसे बिस्किट, ब्रेड देने की कोशिश की पर वह न तो चुप हुआ न उसने वे चीजें ली, शायद वह ये बता रहा था कि पिता के साथ घूमने के बदले दिया गया हर लालच या तोहफा बेकार है, हारकर आकाश ने गोपाल की बहन को वो बिस्किट के पैकेट, चिप्स और ब्रेड दे दिये और अपने घर लौट आया !

दूसरे दिन सुबह आकाश किसी काम से उन झोंपड़ों की तरफ से निकला। आज भी उसका मन गोपाल के बारे में सोच रहा था। फिर से उसने कुछ बिस्किट, मिठाई, चिप्स ले लिए फिर से गोपाल को बुलाया तो वह हंसकर दौड़ते हुए आकाश के पास आ गया और थैली ले गया, आज उसका अवसाद,गुस्सा, निराशा सब गायब हो चुका था, आकाश ने उसकी माँ से कारण पूछा ? माँ कुछ बोलती तब तक गोपाल खुद ही बोल उठा कि देर रात पिता उसे साइकिल से बाजार घुमाने ले गए थे। बालहठ पूरी हो चुकी थी, पर इससे आकाश और गोपाल के बीच एक रिश्ता बन गया। आकाश को लगने लगा मंदिर से निकलकर कोई देवदूत गोपाल के रूप में इस झोंपड़े में आ गया है। एकदम मासूम, निष्कपट और भोला। उसके चेहरे में सम्मोहन था !

आकाश जानबूझकर अब उधर से आता-जाता। जब तब उससे मिलता, फिर एक दिन जब वह सुबह उधर जाता है तो देखकर हैरान हो जाता है कि वहाँ पर एक भी झोपड़ी नहीं सब कुछ तोड़ दिया गया था,हाँ कुछ ईंटे और पत्थर जरूर वहाँ पड़े थे जिनसे उन मजदूरों ने चूल्हे बनाए थे,ये पत्थर, और ईंटे धुंए के कारण काले हो गए थे, इन चूल्हों पर जब दाल खदबदाती या तवे पर डली रोटी फूलती तब ये कालिमा नहीं दिखती, पर आज तो यह समय के साथ प्रकट हो रही थी !

रूग्णालय के कर्मचारियों से पूछने पर मालूम हुआ ये जगह अब नई विकास योजना में रखी गई है यहाँ एक चिल्ड्रन पार्क बनाया जाएगा। आकाश, गोपाल सहित उन बच्चों के बनाए ट्यूब टायर के झूले की याद में दोलन करते हुए गुमसुम वापस घर की तरफ लौट रहा था। उधर मन्दिर में प्रातःकाल की आरती की समाप्ति के बाद सब देवताओं की जय जयकार बोली जा रही थी,उन्हीं जयकारों में आकाश के कानों ने एक ध्वनि सुनी गोपालकृष्ण भगवान की जय हो !

48- हरिओम विहार (तारा मण्डल के पास), उज्जैन-456010
मो.94251-08734

चिट्ठी-पत्री

महोदय,

विद्वान, साहित्यकार, प्रतिभावान और प्रभुता संपन्न तो बहुत होते हैं, लेकिन अपने अंतरतम में मनुष्य बने रहने वाले लोग दुर्लभ होते जा रहे हैं। मेवाड़ी जी उसी दुर्लभ प्रजाती के मनुष्य है जिनमें इंसानियत का जज्बा, कर्मठता, जीवटता, समर्पण समन्दर की तरह गहरा और अनुकरणीय है। यही कारण है कि वे पिछले पचास वर्षों से भी अधिक समय से राजस्थान के एक छोटे से अंचल कांकरौली से सम्बोधन जैसी स्तरीय लघुपत्रिका निकाल रहे हैं। उनका यह जुनून राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति श्रद्धा की अनूठी मिसाल है। समावर्तन ने फरवरी 2019 के सरोकार स्तंभ में श्री कमर मेवाड़ी के इसी संघर्ष की दास्तान उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर केन्द्रित की है जो यह सिद्ध करती है कि समावर्तन की दृष्टि व्यापक और निष्पक्ष होती है। 'समावर्तन' के इस सद्व्यवहार के प्रति कोटिशः आभार।

- प्रतापसिंह सोढ़ी, 5, सुखशांति नगर, बिचौली हप्सी रोड, इन्दौर

रश्मि रमानी की तीन कविताएँ

औरत हूँ मैं

देखो मेरी ओर
कि एक औरत हूँ मैं
रक्त माँस की बेजान पुतली नहीं
सोच और अनुभव का जीवन्त संसार हूँ मैं,

मुस्कुराओ मेरे साथ
क्योंकि मेरी गोद में देवदूत मुस्कुराए हैं
गुनगुनाओ मेरे साथ
प्रकृति का प्रथम गीत
मेरे द्वारा जन्में शिशु ने गाया है
सृष्टि का रहस्य
सिमटा है मेरी कोख में
और सौंदर्य फूटा है मेरी देह से
मेरी देहगन्ध
मेरे स्पर्श
मेरी थिरकन से रची गई है
कलाओं की दुनिया

मेरे कारण बहा खून
बदल गई इतिहास की धारा
और हुए युद्ध
मेरे अस्तित्व को खण्डित करने वालों
देखो मेरी ओर
अगर मैं नहीं
तो फिर कुछ भी नहीं
दुनिया जहान में,

एक अकेली औरत

अकेली औरत महसूस कर रही है
अनजानी पदचापों को
टोह लेती आकृतियों को
और बेनाम परछाईयों को
अपने अकेलेपन को महसूसती
वह औरत बन गई है साथिन
अपने ही अकेलेपन की,

रात के ख़ामोश लम्हों में
अकेली औरत सुनती है अपनी धड़कनें
और कोशिश करती है
कविता के शब्दों में साँस लेने की,

अकेली औरत
मुस्कुराती है
और बादाम की मंजरी का लहराना
याद करती है अकेलेपन में
अपने स्याह बालों का
रेशमी अँधेरा सुलझाते हुए
देख लेती है वह
रोशनी की लकीरें
और पढ़ती है बीते दिनों को
कभी-कभी
जब पूछती है अकेली औरत अपने-आपसे
कितनी खुश है वह ?
तो बिजली की एक कौंध
मन के आसमानों में खो जाती है.

अपने भीतर के बीहड़ों में भटकती
अकेली औरत खो गई है
मन के तहख़ानें में
और डर रही है, अधटूटे ख़ामोश बुतों से.

अपने आसमान के टुकड़े को निहारते
अकेली औरत तहा रही है स्मृतियाँ
बुन रही है सपने
और समेट रही है
अतीत का सुहानापन.

गर्मियों की तपती हुई सूनी दोपहर में
अकेली औरत देख रही है
अमलतास का लचकना
गुलमोहर का दहकना
और फानूस का झूमना
अपने होठों का कँपन महसूसती
वह अकेली औरत
भयभीत है फानूस के झूमने से
उसकी आँखों में तैर रहे हैं
दहशत के क़तरे
अपनी सिसकी को दबाती
अकेली औरत डूब रही है
आँसुओं के दरिया में
भीतर के शान्त पानी में
उठ रहा है ज्वार.

औरत

औरत नहीं जानती
अपने औरत होने का अर्थ
साधारण होती है वह आसमान की तरह
पर अनभिज्ञ नहीं
भीतर की भूलभुलैया से.

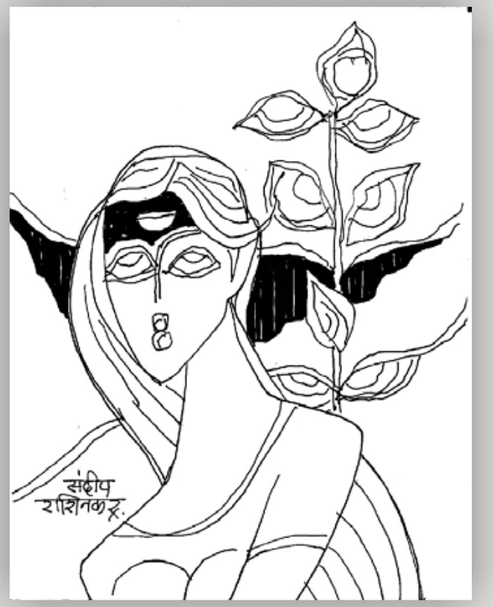

औरत नहीं जानती
अपने औरत होने का जादू
उसकी देह की कमनीयता
बदल जाती है चट्टान में
और, दर्द की दीवार को तोड़कर
फूटते हैं नस्लों के अँकुर,
आविष्कृत होती है नई देह

औरत नहीं जानती है
अपनी क्षमता
पुरुष का विषाद, थकान, खालीपन
और भी बहुत कुछ
सोख लेती है वह बढ़िया सोख्ते की तरह
औरत को पता नहीं है
अपनी सुंदरता की ताक़त
रंगोली के रंगों से घर ही नहीं सजाती
सजा देती है वह और भी बहुत कुछ

औरत को पता नहीं है
कितना ज्यादह कहती है उसकी चुप्पी
आखिर, संसार की
सबसे अच्छी कविता है औरत

30, पलसीकर कॉलोनी, मानस मेंशन,
फ्लैट नं.201, सेकेण्ड फ्लोर,
जूनी इन्दौर थाने के सामने, इन्दौर-4
मो.9827261567

धर्मपाल महेंद्र जैन की तीन कविताएँ

डर

मेरे नहीं डरने से आपका क्या बिगड़ा
आपने सौ लोग खड़े कर दिये मेरे आसपास
कि समय-समय पर वे डरते रहें और
उन्हें देखकर मैं लिखता रहूँ
कि ओ डरे हुए लोगों
मेरे पास आओ बात करो
हम सब मिलकर खड़े होंगे डर के खिलाफ।

वे नहीं आए मेरे पास
बहुत संभावना थी कि वे आएँगे
दरवाजे खुले रखे बाहर से अंदर तक
वे नहीं बतियाए
डरने के लिए उन्हें मिलती थी
सरकारी पेंशन
कर्ज़ में माफी, सस्ते सिलेंडर,
सस्ता सड़ा राशन
डरते रहने के लिए वे बनाते रहे पीढ़ियाँ
उन्हें सिर्फ एक ही काम आता था
डरना और बस डरते रहना।

आपको लगता है वे डर रहे हैं
मुझे भी यही लगता है
डरने भर से इतना कुछ मिलता है तो
डरने में हर्ज़ क्या है
बस जब वे वोट की मशीन के सामने
अकेले होते हैं
अपने साथ खड़े हो जाते हैं।

कागज़ के टुकड़े

कागज़ को टुकड़ो-टुकड़ो में फाड़कर
कितने ही दूसरे कागज़ उठा लिये
सही से कोई वाक्य ही नहीं बनता
मैं सर्वनाम से ऊपर भी नहीं उठ पाता
कि क्रियाएं जुड़ जाती हैं
एक के बाद एक बिना विशेषणों के
आप ही बताइए क्या ऐसे लिखी जाती है
बेढब जिंदगी की इबारत।
छोड़िए भी आपको क्या मालूम
आपके पास तो कागज़ भी नहीं है
आप तो खुद को ही
फाड़कर फेंके जा रहे हैं
कभी लाल जुलूस में,
कभी काले जूलूस में,
कभी पीले जुलूस में
मुझे लगता है
कागज़ फाड़ते-फाड़ते मैं
अपनी बात कह गया हूँ।

पठार में

पथरीले पठार देख रहा था
बचपन में एक दिन खेत में बैठे
कि भील उतर आए मेरे भीतर
वे बंजर पड़ी धरती पर चलाने लगे हल
बैलों की जगह ख़ुद जुत कर
बहुत पत्थर उगाए उस दिन धरती ने।

बीज की जगह ख़ुद को रोप दिया उन्होंने
खाद की जगह बिखर गए वे
ख़ुद खेत के सीने पर

पसीने से सींच दी उन्होंने भूरी मिट्टी
सपने बोने के लिए सदियों से
ऐसे ही खेत खड़े किये उनके पुरखों ने
पत्थरों में अपनी अस्थियाँ घोलते हुए।

आधी सदी के बाद उस ज़मीन पर
पौधे लहलहाते देखता हूँ अब
आँखें सूरज की तरह चमकने लगती है
और आत्मा गाने लगती है पुरखों का गीत
अमू काका-बाबा ना पोरिया
(हम काका-बाबा की संताने)
जीत के जज़्बे में।

1512-17 Anndale Drive, Toronto
M2N2W7 Canada
Ph-4162252415
E-mail : dharmtoronto@gmai.com

अशोक गीते के दो गीत

तम की सत्ता हारी है

पूनम का चाँद छिपा तो,
कृष्ण पक्ष अब भारी है।।
धवल रात का,
तन सँवलाया/
धरती का हर,
कण धुन्धलाया।
तम की सत्ता से लड़ने,
जुगनूओं की बारी है।
अंधकार दे,
घनी पीर अब।
पर मत छोड़,
मीत धीर अब।
युगों-युगों से इसी तरह,
जंग सदा ही जारी है।
आएगा फिर,
नया सवेरा।
समूल कटेगा,
घोर अँधेरा।
संकल्पों के आगे हरदम,
तम की सत्ता हारी है।

सूरज बोला

सूरज बोला उठो रामदीन,
निकला दिन...
पंछी जागे,
गाय रम्भाती।
सभी चले अब,
लिए दराती।
बैलो की घंटी बजे
टिन-टिन-टिन।
लक्ष्मी ने तो,
कलेवा बाँधा।
थोड़ी मिर्ची,
थोड़ा काँदा।
फूलों पर भवरों की,
भिन-भिन-भिन।

अम्मा आँगन,
करे लिपाई।
छोटी करती,
कण्डे थपाई।

घाम भी तो, लगी चुभाने
पिन-पिन-पिन।

194 सांई सदन, रामनगर खण्डवा म.प्र.

लोकभूमि

जो सहज है वही लोक है और उसी में आनंद है

श्रीराम दवे

यह कहना अतिशयोक्ति ही होगा कि लोक की जड़ें भले ही अत्यन्त गहरे तक जमी हुई हो, शहरीकरण और बढ़ती जा रही आधुनिकता लोकसंस्कृति को विलोपित कर सकती है। ठीक है कि लोक संस्कृति लोककला, लोकनृत्य, लोक गीत आदि में परिवर्तन आ रहा है और वह दिखाई देने लगा है किन्तु क्या यह सत्य नहीं है कि परिवर्तन ही प्रकृति का नियम है। परिवर्तन तो होना ही चाहिए। प्रत्येक संस्कृति का अपना लोक होता है किन्तु यह ध्रुव सत्य है कि एक संस्कृति दूसरी संस्कृति की कट्टर विरोधी नहीं होती है। समरसता और सबको साथ लेकर चलने तथा सबके कल्याणः सबके विकास का चिन्तन करने वाली संस्कृतियाँ कई-कई शताब्दियों तक यथावत बनी रहती है। जबकि आधुनिकता के रंग में रंगी संस्कृतियाँ स्वार्थ की नींव पर टिकी होने के कारण ज्यादा समय तक एक जैसी नहीं रह पाती है क्योंकि न तो उनमें प्रकृति होती है और न ही सहजता। कृत्रिमता किसी भी लोक संस्कृति को स्वीकार नहीं होती। शायद यही कारण है कि जो सहज है वही लोक है और उसमें ही आनंद है।

आइये, इसी आनंद को लोकराग के इन कुछ पृष्ठों पर चित्रलिखित होते हुए देखें कि कैसे लोक परम्पराएं और लोक आस्थाएँ साकार होती है और प्रत्येक क्षेत्र के लोग अपनी-अपनी परम्परा और आस्था के चलते नया वर्ष मनाते हैं अर्थात तरीके अलग-अलग किन्तु उद्देश्य एक। बता रही है विदुषी लोकलेखिका **निर्मला डोसी जी (मुम्बई)** अपने लेख 'लोक परम्पराएं और लोक आस्थाएँ' के द्वारा। मध्यप्रदेश के निमाड़ अंचल की ख्यात लेखिका और लोक जीवन में रमी हुई **सुमन चौरे जी** निमाड़ के महत्वपूर्ण लोक पर्व गणगौर पर प्रकाश डाल रही है अपने लेख 'खेती किसानी की महापर्व गणगौर' के द्वारा। दुर्ग (छत्तीसगढ़) के एक महाविद्यालय की शोधार्थी श्रीमती भगवती साहू अपने आलेख के माध्यम से 'छत्तीसगढ़की लोक संस्कृति के विकास में लोकनाट्य 'नाचा' से लोकजीवन का दर्शन करा रही है तो दमोह के **पंडित रमेश तिवारी जी** बुन्देलखण्डी में वसन्त का गीत लेकर आये हैं। सुप्रसिद्ध लोक मर्मज्ञ और इस लोकराग स्तम्भ के विशेष परामर्शी **शिव चौरसिया जी** मालवांचल के वरिष्ठ कवि स्व.मदनमोहन व्यास (देवास) के निधन पर अपनी श्रद्धांजली अर्पित कर रहे हैं। तथा स्व.व्यास जी का एक चर्चित गीत भी प्रस्तुत कर रहे हैं।

इस तरह इस लोकराग का यह समवेत स्वर आप तक पहुँच रहा है। आपकी सदाशयता और प्रतिक्रिया की अपेक्षा के साथ सभी लेखकों के प्रति आभार एवं शुभकामनाएँ।

लोक परम्पराएं - लोक मान्यताएं

निर्मला डोसी

भारत वर्ष इंसानों, जानवरों, पेड़-पौधों के अतिरिक्त ऋतुओं, त्यौहारों, परम्पराओं की भिन्नता वाला एक प्राचीन देश है। यहाँ चार कोस पर पानी और आठ कोस पर वाणी बदल जाती है, तो स्वाभाविक है वहां के तीज-त्यौहार, पहरावा, खानपान और मान्यता में भी विविधता आ जाती है। यह वैविध्यपूर्ण जीवन शैली ही भारत को अन्य देशों से अलग करती है, समृद्ध करती है।

नववर्ष : कब, कैसे और क्यों

यहां के अनेक राज्यों में नयावर्ष किसी विशेष दिन शुरू होता है और उसके साथ कुछ विशेष परम्पराएं भी जुड़ी हुयी है। हर परम्परा का अपना इतिहास है और महत्त्व भी, जिसे हमारे विद्वान पूर्वजों ने हमें सौंपा है। जो धर्म सम्मत भी है तथा विज्ञान सम्मत भी, अर्थात प्रत्येक परम्परा का एक सार्थक अर्थ होता है। नई पीढ़ी को वह मालूम न भी हो तो भी वे इसे पूर्वजों की चलायी परम्परा मान कर श्रद्धापूर्वक व तत्परता से उसका निर्वाह करते हैं। यह स्वभाव हम भारतीयों के संस्कारों में रचा बसा है। इसी कारण परम्पराएं कालजयी होती हैं।

आज हम अपने देश के अलग-अलग राज्यों में नववर्ष प्रारंभ होने की परम्पराओं पर विचार करते हैं।

पंजाब तथा हरियाणा में नववर्ष बैसाख के पहले दिन जो तेरह से पन्द्रह अप्रैल को आता है, बैसाखी के रूप में मनाते हैं। गौरतलब यह कि भारत कृषि प्रधान देश है, यहां के तीज-त्यौहार, पर्व, उत्सवों का संबंध फसलों से अनिवार्य रूप से होता है। 'बैसाखी' भी फसल कटने का समय है। इस अवसर पर मंदिरों, गुरुद्वारों में मंजीरों पर भजन कीर्तन की कर्णप्रिय धुनें सुनायी पड़ने लगती है। स्थान-स्थान पर मेलों का आयोजन होता है। इस दिन गंगा स्नान का बड़ा महत्त्व है। लोग मेष संक्रांति वाले दिन अच्छी फसल होने के लिये भगवान का आभार व्यक्त करते हैं और 'आवत पोनी' अर्थात मिल के तैयार गेहूं की तैयार फसल की कटाई करते हैं। ढोल-ताशों की उत्साह भरी आवाज़ों के बीच भांगड़ा डालते हैं। बैसाखी के दिन को 'खालसा सृजन दिवस' के रूप में भी माना गया है। 1699 में दसवें गुरु गोविंद सिंह जी ने पंथ खालसा की स्थापना की थी। सिख लोग सुबह जल्दी उठकर फूल-प्रसाद लेकर गुरुद्वारे जाते हैं, अरदास करते हैं और लंगर में एक साथ खाते हैं। तलवंडी तथा आनंदपुर साहिब में, अमृतसर के स्वर्ण मंदिर में बैसाखी की धूम देखते ही बनती है। पाकिस्तान के ननकाना साहिब, हसन अबदल व लाहौर में भी बैसाखी पर देश-विदेश से लोग मत्था टेकने आते हैं।

भारत के पूर्वोत्तर राज्य अपनी प्राकृतिक सुषमा उर्वरता तथा हस्तशिल्प के लिये जाने जाते हैं। असम में भी नववर्ष का प्रारंभ चैत्र-संक्रांति अर्थात अप्रैल की 14-15 तारिख को होता है। असमिया लोग इसे बिहू पर्व के रूप में मनाते हैं। बिहू शब्द दी-मास की शब्दावली का है। जिसमें बि का अर्थ मांगना हू का अर्थ है शांति। बिहू कृषक संस्कृति का पर्व है। यहां वर्ष में तीन बिहू मनाए जाते हैं। नववर्ष का बिहू बैसाख या अप्रैल में होता है। उसे रंगाली बिहू कहते हैं। दूसरा पोंगाली बिहू अक्तुबर में तथा तीसरा मोगाली बिहू जनवरी में पोस संक्रांति पर मनाया जाता है। असम में फसलें भी तीन ही ली जाती है। फसल-कटाई का वहां खुशियां मनाने का बड़ा कारण है। कतिपय औपचारिकता का निर्वाह तीनों अवसरों पर समान रूप से किया जाता है किन्तु रंगाली बिहू की उमंग निराली होती है। सरस संगीत उन्मुक्त नृत्य के साथ समूचा वातावरण मारक हो उठता है। वैसे तो असम को वर्ष भर हरियाली का वरदान प्राप्त है फिर भी रंगाली बिहू बसंतोत्सव का प्रतीक है।

बिहू के प्रथम दिन गो-बिहू या गोरु बिहू के रूप में मनाया जाता है। कृषि के मूल गोवंश की इस दिन पूजा की जाती है। सुबह-सवेरे गाय, बैलों, बछड़ों पर उड़द की पिट्ठी, हल्दी, तेल लगाया जाता है फिर उन्हें तालाब पर या नदी किनारे ले जाकर अच्छी तरह नहलाया जाता है। संध्या समय गौशाला तथा घर के आंगन में धूप-धूना किया जाता है। जानवरों को मच्छरों से बचाने के लिये यह व्यवस्था है। गाय बैलों को नए पगहे दिये जाते हैं तथा लौकी बैंगन की बनायी माला पहनायी जाती है। दूसरे दिन ये मालाएं निकाल कर भंडारगृह के बाहर लटका देते हैं। लोक-विश्वास है कि इस टोटके से पशु बीमार नहीं होते।

रंगाली बिहू के दूसरे दिन सभी जल्दी उठकर बड़ों को प्रणाम करते हैं। मां बड़े-बेटे को बिहू-बान देती है। अगले दिन घर में सबको बिहू-बान दिया जाता है। बिहू-बान घर की स्त्रियों द्वारा हाथ से बुना गमछा या वैसा कोई वस्त्र होता है। पुत्र, भाई, पति को बिहू-बान का उपहार देकर असम की नारियां स्वयं को धन्य समझती है। दरअसल पहले असम के हर घर में हाथ से वस्त्र बुनने का चलन था। आज बाजार से खरीद कर बिहू-बान दिया जाता है।

रंगाली बिहू में मुख्यतः प्रणयगान हुआ करते थे। मध्य कालीन वैष्णव आंदोलन के बाद धर्मपरक गान भी होने लगे। विस्तृत मैदान, उन्मुक्त पवन, कलकल निनादित नदियां, पुष्पित वृक्ष, पल्लवित लताएं अर्थात प्राकृतिक सौंदर्य से समृद्ध असम का यह नववर्ष पर्व देखते ही बनता है। कर्णप्रिय बिहू गीत के साथ बिहू-नृत्य की प्रस्तुति अद्भुत होती है।

बासंती मौसम जीवन में स्फूर्ति का संचार करता है और धन्धान्य से भरा-पूरा घर उल्लास में वृद्धि करता है तब केठ से मीठे स्वर फूट पड़ते हैं तथा पाँव मन की ताल पर थिरकने लगते हैं। बिहू गीतों में असमिया समाज के जीवन के इंद्रधनुषी प्रसंगों को बड़ी खूबी से गूंथा गया है। तीसरे दिन गौसांह बिहू होता है। इस दिन भगवान का पूजन अर्चन किया जाता है। रंगाली बिहू के छठे दिन युवतियां मेहंदी से हाथ-पैर सजाती है। एक-दूसरे के घर जाकर शुभकामनाएं दी जाती है। उपहारों का आदान-प्रदान होता है। तिल भरे चावलों का पीठा बिहू का विशिष्ट व्यंजन है। नए चावल की फसल कट कर घर के भंडारे में भरी होती है। असम में हर जात-धर्म के लोग बिहू-पर्व मनाकर वर्ष का स्वागत करते हैं।

बिहू नृत्य नए जोड़ों का मिलन त्यौहार भी है। चूंकि इसमें उद्दाम प्रणय का साकार कलात्मक रूप दिखता है इसलिये वर्षों पहले तो अभिजात्य वर्ग की महिलाओं को यह नृत्य करना तो दूर देखना तक वर्जित था। घर आयी बिहू टोली का स्वागत पुरुष वर्ग ही करते थे। समय के साथ नृत्य का आदिम स्वरूप कम हुआ तथा भंगिमाओं में शालीनता आयी है। बिहू नृत्य को वैसे विशिष्ट श्रेणी के नृत्यों में शुमार किया गया है। आजकल नगरों में पंडाल बनाकर बिहू-उत्सव आयोजित होते हैं। किन्तु बिहू के मूल रूप से इनका स्वरूप बहुत भिन्न होता है। मूल नृत्य में ढोल, ताल, पेपा बजता है। पेपा वाद्य भैंस के सींग से बनाया जाता है।

तमिलनाडु में भी नववर्ष का प्रारंभ अप्रैल की 14 तारिख से होता है। यहां उसे नववर्षारम्भम् कहते हैं। चैत्र की प्रथम तिथि को सुबह जल्दी उठकर स्नान, पूजा-पाठ करते हैं। दही में नमक व हरी मीर्च डालकर लस्सी बनाते हैं और भगवान को भोग लगाते हैं। पहली रात को ही एक ट्रे में तीन फल आम, केला, कटहल, पान के पत्ते, सुपारी, सोने चांदी के सिक्के, नगदी रूपए, फूल तथा कांच रखते हैं। सुबह उठते ही पहली नजर उन्हीं पर पड़े तो शुभ माना जाता है।

मदुराई के मिनाक्षी मंदिर में खूब धूमधाम होती है। इसे 'पुथंडु' भी कहते हैं। उत्सव को 'चित्ते राई थिरूवीरा' कहा जाता है। तमिल लोग अपने घर द्वार

कोलम, नीम के फूलों तथा कच्ची केरी से सजाते हैं। इसे समृद्धि तथा उत्पादकता का सूचक माना जाता है। श्रीलंकन तमिलों में वृद्ध बच्चों को अच्छे भाग्य का आशीष तथा पैसों का उपहार भी देते हैं।

'अरपुडु' अर्थात खेत को पहली बार जोतने का काम इसी दिन शुरू होता है। उस दिन सूर्य मीन राशि से मेष राशि में प्रवेश करता है। उस समय को पुण्यकालम् कहते हैं। किसी भी कार्य के शुभारंभ का शुरू मोहरत इस दिन युवा लोग नारियल से एक खेल खेलते हैं जिसे 'पोरथेनकाई' कहते हैं। गांवों में बैलगाड़ियों की दौड़ के आयोजन होते हैं।

भारत के दक्षिण प्रांतों तक जाते-जाते प्रकृति का रूप और भी मनोहारी हो जाता है। सागर की करधनी पहनें जब प्रकृति सुंदरी इठला कर चलती है तो उसमें एक-एक कटाक्ष पर, समूची सृष्टि चंचल हो उठती है। दक्षिण के केरल, उड़ीपी, मैंगलौर में नया वर्ष अप्रैल के दूसरे सप्ताह लगभग 15 अप्रैल तक शुरू होता है। यह फसल कटाई का प्रथम दिन होता है। इसे 'विशु' कहा जाता है। इस दिन दीप जलाते हैं, पटाखें छोड़ते हैं, नए वस्त्र पहनते हैं तथा दान-धर्म का प्रावधान भी है। नया वर्ष शुरू हो और पकवान न बनें यह कैसे संभव है? उस दिन एक विशेष प्रकार का भोजन तैयार करने की परम्परा है जिसे सदय कहा जाता है। इसमें स्वास्थ्य की दृष्टि से उपयोगी सभी स्वाद होते हैं। मीठा, नमकीन, खट्टा व कड़ुआ और सब संतुलित अनुपात में रहते हैं। साध्य पकवानों में विशु, कांजी, चावल, नारियल, दूध तथा मसालों से, विशु कट्टा चावल के आटे, नारियल के दूध तथा गुड़ से, कड़ुवे खाद्य पदार्थ में वेपमपूरम बनता है तथा केरी के सूप जैसा मम्पारा पूली सेरी' नाम का खट्टा खाद्य पदार्थ बनता है। इस प्रकार चारों स्वादों का समावेश करने की वजह आयुर्वेद का निर्देश जिसमें कहा गया है कि भोजन में चारों रस समाहित होने पर ही भोजन संतुलित व आरोग्यकर होता है।

महाराष्ट्र में नववर्ष चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को मनाया जाता है जिसे यहां 'गुड़ी पड़वा' कहते हैं। यह मार्च महीने में आता है इस दिन चैत्र नवरात्र का प्रारंभ भी होता है। घर की स्थापना होती है। पाड़वा का अर्थ ही है- प्रतिपदा या प्रथम तिथि। कहते हैं वर्षभर में इस दिन चांद सबसे ज्यादा आभावान तथा चमकीला होता है। दक्षिण में महीने के शुक्ल पक्ष को पड्या कहा जाता है। कोंकड़ी इस दिन को संवत्सर पाड़वों और कन्नड़ तेलगु इसे युगाड़ी कहते हैं जबकि आंध्र में उगाड़ी कहा जाता है। अन्य स्थानों की तरह महाराष्ट्र में भी गुड़ी पड़वा का महत्व कृषि से ही है। एक फसल का समापन तथा दूसरी फसल के शुभारंभ के लिये यह दिन शुभ माना जाता है। मराठी लोगों के लिये वर्ष के, साढ़े तीन दिन शुभ मोहरत होते हैं। पहला गुड़ी पड़वा, दूसरा अक्षय तृतीया, तीसरा विजयदशमी और आधा दिन कार्तिक मास की प्रतिपदा इस दिन गौतमी पुत्र शालिवान ने शकों को परास्त किया था। हिन्दु पुराण में प्रलय के बाद इसी दिन ब्रह्मा ने सृष्टि की पुनर्रचना प्रारंभ की थी। यह बसंत के आगमन का समय होता है। गुड़ी पड़वा के दिन महाराष्ट्र में घर के दरवाजे या खिड़की पर एक लकड़ी के डण्डे पर तांबे या चांदी के लोटे को उल्टा लगाकर उस पर हरे या पीले जरी गोटे लगे नए वस्त्र को ढंककर माला पहना पर दाहिनी तरफ टांगते हैं। इसे गुड़ी कहते हैं। आम की डाली, नीम के पत्ते तथा पीले फूल भी रखते हैं। इसे काली नजर से बचाव तथा सुख समृद्धि का प्रतीक माना जाता है। द्वार पर रंगोली बनाते हैं।

सुबह सवेरे उठ कर नीम के पत्ते पीस कर, उसमें गुड़ धनिया इमली मिलाकर मिश्रण तैयार किया जाता है और पूरे घर के सदस्य खाते हैं। आयुर्वेद में कहा गया है कि यह मिश्रण पूरे शरीर की शुद्धि करके शरीर निरोग रखता है। घर-घर में पूरणपोली बनती है। कोंकणी लोग कानन गाछीवीर व्यंजन बनाते हैं जो शकरकंद नारियल दूध गुड़ तथा चावल के आटे से बनता है।

मिश्र तथा इरान में इसी दिन को नवरोज कहते हैं। वैसे पारसी लोग भी वर्ष के प्रथम दिन को नवरोज कहते हैं। यह दिन हर वर्ष 21 मार्च को आता है।

मूल रूप से नववर्ष के प्रारंभ के संदर्भ में एक समानता हर राज्य में है वह यह कि हमारे यहाँ नववर्ष का संबंध कृषि से है मौसम से है, स्वास्थ्य से है तथा इस दिन जो व्यंजन बनते हैं उसकी सामग्री उस वक्त की फसल से प्राप्त होती है। बारीकी से चिंतन करें तो इन परम्पराओं के नेपथ्य में कितना सारगर्भित और विवेक सम्मत सच सामने आता है। भूमि, कृषि, पशु व प्रकृति का सम्मान, सादगीपूर्ण श्रमशील जीवन शैली, स्थान व ऋतु विशेष की उपज के अनुसार खान-पान तथा संयुक्त जीवन का सात्विक दर्शन सबकुछ बड़ा भव्य व सार्थक प्रतीत होता है।

अब हम उड़ीसा प्रांत की बात करते हैं जहां नववर्ष का प्रारंभ बैसाख के पहले दिन ही होता है और पण संक्रांति या महाविश्वा संक्रांति कहते हैं। उड़ीसा के लोग इस दिन छोटे घड़े में पानी मिश्री घोलकर तुलसी के पौधे पर टांगते हैं और घड़े में छोटा सा छेद कर दिया जाता है जिससे मीठा मीण पानी बूंद-बूंद तुलसी चौरे पर टपकता है। इस दिन बेसन केला तथा दही विशेष रूप से शालीग्राम, शिवलिंग व हनुमान जी पर चढ़ाते हैं तथा प्रसाद स्वरूप खाते भी हैं। उड़ीसा के ब्रह्मपुर के तारातारिणी मंदिर में, समलेश्वरी मंदिर में नववर्ष को धूमधाम से पूजा होती है। इसलिये लोग चना तथा बेल का खूब सेवन करते हैं कहीं-कहीं इस दिन हनुमान जयंती भी मनाई जाती है। गाँवों में आदिवासी डण्डनृत्य भी होता है तथा डण्ड यात्रा निकलती है। डण्ड नृत्य मां काली को समर्पित होता है। मान्यता यह है कि राक्षसों का वध कर इसी तरह माँ काली ने डण्डनृत्य किया था। यहां उत्सव तेरह दिन चलता है।

इस समय कोई उड़िया मांसाहार नहीं करते हैं, यहाँ तक कि लहसून प्याज के भी सेवन से परहेज किया जाता है।

बंगाल में नववर्ष का प्रारंभ बैसाख की पहली तिथि से ही होता है जिसे पोइला बैसाख कहते हैं। भारत में सूर्य परिक्रमा के हिसाब से वर्ष के केलेण्डर बनते हैं और जहां उसके सिद्धांत को माना जाता है। वहाँ नववर्ष बैसाख की प्रथम तिथि से ही शुरू होता है। मिथिला, असम, तमिलनाडु, उड़ीसा, झारखंड, नेपाल, कंबोड़िया, श्रीलंका, वर्मा, थाइलेण्ड इत्यादि में इसी दिन से नववर्ष शुरू होता है।

इतिहास बताता है कि कभी बंगाल में गौड़वंश के राजा शशांक का राज्याभिषेक इसी दिन हुआ था। उसका सन 590 से 625 तक कार्यकाल रहा। तभी से यह दिन नववर्ष के रूप में मनाया जाने लगा।

बंगाली लोग भोर में जल्दी उठकर एक साथ भजन-कीर्तन करते हुए प्रभातफेरी लगाते हुए नदी तक जाते हैं। उगते सूरज का दर्शन करते हैं तथा रवीन्द्रनाथ ठाकुर का लिखा गाना 'ऐशो हे बैसाख' गाते हैं। फिर मंदिरों के दर्शन करते हैं। पूजा के उपरांत व्यवसायी वर्ग इस दिन नए खाते भी डालता है। अनेक लोग आधी रात से ही कोलकाता के विख्यात काली मंदिर के बाहर कतारों में लग जाते हैं। सुबह-सुबह काली दर्शन की आस लिये। पोइला बैसाख पर बंगाल में खूब मेले लगते हैं। जिनमें यात्रा नाटक खेले जाते हैं। यह

रंगमंच का प्रारंभिक स्वरूप है और आज भी इनका खूब आनंद लिया जाता है। कोलकाता के रवीन्द्र सदन के नंदन सभागार में बांग्ला संगीत मेले का आयोजन होता है। नए वस्त्र पहनना, अनेक पहवान बनना तो जरूरी सी बात है। विशेषतः पानी के साथ चावल पकाए जाते हैं और उन्हें तली हुयी हिलसा माछ के साथ खाया जाता है। इसके अतिरिक्त लूची-भाजी, हींग मोरीच, आलू कुचुड़ी, कोराई सुतीर कुचुड़ी, दमआलू, आलू तोरकारी, मोरीच लूची, राधाबल्लभी, छोला दाल, तिकोना पराठा, आलू कुमरो चेचकी, बेगुन भाजा इत्यादि अनगिनत व्यंजन बनाए जाते हैं।

सिंधी लोग नववर्ष को चैती-चांद कहते हैं। यह चैत्रमास के दूसरे दिन होता है। दसवीं शताब्दी में इसी दिन झूलेलाल का जन्म हुआ था। वैसे सिंधि वरुण देवता की पूजा करते हैं। पुराने जमाने में ये लोग चालीस दिन तक अनेक वर्जनाओं के साथ सिंधु नदी के किनारे बड़े संयम के साथ रहकर पूजा-पाठ करते उसका समापन का चालीसवां दिन चैत्र मास की दूसरी तिथि अर्थात दूज को होता है, जो नववर्ष का पहला दिन होता था। इस पूरे अनुष्ठान को चलिहोसाहब कहते हैं। नववर्ष के दिन सिंधी एक थाली में दीपक, मिश्री की डली, इलाइची, फल, अख्खा, कलश में पानी, नारियल, झूलेलाल की मूर्ति रखकर उसे नूतन वस्त्र से ढंककर उस पर फूल पत्ते रखकर नदी तक ले जाते हैं और इस क्रिया को बहिरणा साहिब कहते हैं। नववर्ष के इस दिन सिंधी मीठे चावल का विशेष पकवान बनाते हैं जिसे ताहिरी कहा जाता है।

राजस्थान में नववर्ष दीपावली के अगले दिन अर्थात कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा से शुरू होता है। दीपावली तो भारतभर में बड़े उत्साह से मनायी जाती है। कार्तिक अमावस्यण को दीवाली और दूसरे दिन प्रतिपदा पर गोवरधन पूजा या अन्नकूट मनाया जाता है। कार्तिक की अमावस्या से पहले आने वाली अष्टमी को महिलाएं व्रत रखती है तथा दीवारों पर अहोयी माता चित्रित करके पूजा करती है। दीवाली की रात गणेश, लक्ष्मी पूजन के साथ नए खातों पर स्वास्तिक बनाए जाते हैं। खड़िया मिट्टी तथा लाल गेरू से मांडने मांड कर घर-घर द्वार तथा पूजा स्थल सजाया जाता है। दीपक जलाते हैं, पटाखे फोड़ते हैं तथा पूजन के बाद सब एक दूसरे से गले मिलते हैं। नववर्ष के लिहाज से अगला दिन अति महत्त्वपूर्ण होता है। इस दिन फिर से पूजन होता है। विशेष पकवान बनते हैं हलुवा पूरी, लपसी, मूंग-चावल मुंगेड़ी की सब्जी का भोग लगता है। इसके अतिरिक्त गुड़ से खजली शक्करपारे तथा मैदे के खाजे बनते हैं। कहीं-कहीं सैवेयों के लड्डू भी बनाए जाते हैं। बाजारों से चीनी के रंग-बिरंगे खिलौने तथा पूजन के वक्त तरबूज, बेर, काचर, खील, बतासे का प्रसाद चढ़ाया जाता है। ये सभी चीजें उस समय की फसल से मिलती है या फिर घर में तैयार होती हैं। नहा धोकर पूजन करके पूरा परिवार एक साथ बैठकर भोजन करता है। दान-धर्म का प्रावधान भी है घर के रोजमर्रा के काम में सहयोग करने वाले सभी लोगों को भी खाना दिया जाता है। उसके बाद एक दूसरे के यहां मिलने जाते हैं। जिसे रामा-सामा करना कहते हैं अर्थात अभिवादन करना। वैसे राजस्थान के व्यवसायी नया वर्ष रामनवमी से भी शुरू करते हैं। चैत्र शुक्ल नवमी को व्यावसायिक स्थलों की साफ-सफाई, सजावट होती है और शाम को मोहरत से पूजन होता है। इस दिन की विशेष बात यह थी कि कभी वर्षभर उधार पर चलने वाला कारोबारी रामनवमी के दिन वर्षभर का उधार चुका कर, आगामी वर्ष की मोहरत बोहनी करता था। बारीकी से इस प्रक्रिया पर दृष्टिपात करें तो विश्वास, भाईचारा तथा एक दूसरे के सहयोग का अलिखित और अनूठा प्रावधान था, मगर आज वह समय नहीं रहा। अब तो प्रत्येक व्यावसायिक प्रतिष्ठान पर 'उधार प्रेम की कैंची है' की उक्ति लिखकर सामने ही तख्ती लटका दी जाती है। समय का संक्रमण है। राजस्थान के लोग सुदूर असम, बंगाल, गुजरात, दक्षिण, जहां भी गए, उन्होंने अपना व्यावसायिक नववर्ष प्रारंभ रामनवमी से ही माना किन्तु धीरे-धीरे सरकारी हस्तक्षेप से सब जगह वित्त वर्ष का प्रारंभ 1 अप्रैल से होने लगा।

गुजरात में भी नववर्ष का प्रारंभ दीवाली के दूसरे दिन से होता है। रातभर बैठकर महिलाएं 2-3 दिन पहले से ही अल्पना बनाती है। घर सजाए जाते हैं नए पकवान तथा नए वस्त्र बनते हैं। वैष्णव गुजराती, श्रीनाथ जी का पूजन करते हैं और जैन गुजराती मंदिर जाते हैं। खाना खाने के बाद एक दूसरे के घर नववर्ष की शुभ कामना देने जाने का भी चलन है।

मध्यप्रदेश में नववर्ष चैत्रमास की प्रथम तिथि से शुरू होता है। दरअसल अंग्रेजों के प्रभाव से जनवरी से दिसम्बर का वर्ष माना जाने लगा। किन्तु मूलतः भारत में विक्रम संवत के अनुसार त्यौहारों/पर्वों की परिकल्पना की गई थी वही अब तक जारी है। युवा पीढ़ी 1 जनवरी से नया वर्ष शुरू करती है, 31 दिसम्बर की रात बारह बजे खूब पटाखे छोड़ते हैं, अनेक कार्यक्रम आयोजित होते हैं, खुशियां मनाते हैं, एक दूसरे को शुभकामनाएं देते हैं। उपहारों का आदान-प्रदान भी होता है। केक कटता है, गुब्बारे फूटते हैं।

भारतीय संस्कृति की विशेषता यही है कि हमने अच्छी चीज को, खुशी देने वाले क्षणों को, अपनाने में कभी कोई दुविधा महसूस नहीं की। चूंकि अंग्रेज लंबे समय तक यहां रहे तो उनका प्रभाव तो होना ही था, फिर जनवरी से नयेवर्ष की खुशियां मनाने में कोई बुराई भी नहीं है। अन्ततः हम भारतवासी वसुधैव कुटुम्बकम् सिद्धांत के सच्चे अनुयायी जो हैं।

भारत के प्रत्येक राज्य में इस्लाम धर्म के अनुयायी रहते हैं। वे सभी अपना नववर्ष ईद से शुरू करते हैं। 1 महीना रोजा रखने के उपरांत ईद का चांद देखकर नमाज पढ़कर सब एक दूसरे से गले मिलते हैं तथा बड़े-छोटों को ईदी देते हैं अर्थात आशीर्वाद स्वरूप उपहार या रूपए। इस दिन सैवैया बनाने का रिवाज है। दूध के साथ घी में भुनी सैवेयों की खीर और उसमें डले मेवे केसर इलाइची किसी के भी मुंह में पानी ला देते हैं। चारों तरफ ईद मुबारक के साथ सेवैयों का आदान-प्रदान भी होता है। इस प्रकार हम पाते हैं कि लोक परम्पराओं और लोक मान्यताओं के सानिध्य में प्रत्येक राज्य में नववर्ष अलग-अलग तरीकों से मनाया जाता है किन्तु उद्देश्य केवल एक ही होता है- मिल जुलकर खुशियाँ बाँटना और खुशियां अनुभव करना।

रम्य, सीएचएस लिमिटेड फ्लैट नं.201, सेक्टर-2 प्लाट नं. 104, शिवम हास्पिटल के पास चारकोप कांदिवली, मुम्बई (पश्चिम) मुम्बई (4) 400067
मोबाइल : 9322496620

खेती किसानी का महापर्व गणगौर

डॉ. सुमन चौरे

म्हारा नाना देवरिया राऽ बागऽ
लिम्बुवा तोड़ी लावजोऽ,
म्हारी रनुबाई नाखऽ अचारऽ....
म्हारा धणियरऽ राजा चाखऽ अचारऽ
लिम्बुवा तोड़ी लावजोऽ।

भावार्थ : मेरे छोटे देवर के बाग हैं, वहीं से हम नीबू तोड़ेंगे। नीबू का अचार मेरी रनुबाई बनायँगी, उस अचार को मेरे धणियर राजा चखेंगे। निम्बू तोड़ लाना।

'मैं' मेरे अपनत्व बोध के गीत निमाड़ के लोक-गीतों के शाश्वत स्वर हैं। नीबू मेरे देवर के बाग में लगे हैं और मेरी रनुबाई उन्हीं से अचार डालेगी। यह अचार डालने और चखने वाले नाम कोई साधारण जन नहीं हैं। अपितु, साक्षात् शिव-पार्वती के स्वरूप हैं। और ऐसे अनेकानेक गीत 'रनु'-'धणियर' संबंध उद्‌बोधन के आपको सुनाई देंगे निमाड़ के लोकपर्व गणगौर पर्व पर। निमाड़ में शिव-पार्वती का यह आराधना पर्व 'गणगौर' नाम से बड़ी श्रद्धा-आस्था और धूमधाम से मनाया जाता है। निमाड़ में चैत्रवदी (कृष्णपक्ष) दसमीं से चैत्रसुदी (शुक्ल पक्ष) तृतीया, नौ दिनों तक यह मातृ शक्ति का पर्व लोक पर्व के रूप में मनाया जाता है। यह लोकपर्व लोक जीवन से जुड़ा है। इस पर्व की विशेषता यही है कि यह पूर्णतः कृषिकर्म से जुड़ा है। यहाँ का लोक देवी-देवताओं के साथ तादात्म्य स्थापित कर अपने भावानुकूल कभी देवी माँ के रूप में, तो देवी कभी बेटी के रूप में, तो कभी बहन के रूप में देखता है।

गणगौर पर्व पर देवी का स्वरूप जवारे के रूप में रहता है। छोटी बाँस की टोकनी में शुचिता के साथ माटी भरकर उसमें गेहूँ बोये जाते हैं।

शास्त्रोक्त पद्धति से देवी का आवाहन मंत्रोच्चार कर किया जाता है; किन्तु निमाड़ में लोक देवी का आवाहन करने के लिए लोकगीत गाये जाते हैं। इस पूजन पद्धति में सहज सरल भाव से जवारा सिंचन कर ही देवी की आराधना पूरी होती है। भोला लोक-जीवन के सभी आयामों में देवी देवता को अपने जैसे ही समझता है। अतः यहाँ खेती में गेहूँ बोता है धणियर राजा (शिव) और कृषि कर्म में सहयोगी होती हैं उनकी पत्नी रनुबाई (पार्वती)। एक लोक-गीत के भाव हैं -

भोळा धणियर राजा घरऽ वाया जागऽ
रनुबाई सींचऽ लियाऽ
राणीऽ सींचीऽ नऽ जाण्या हो,
जवाराऽ पेळा पड़्या।

बोनी के साथ फसल बड़ी होती है, तब उसकी सार-सम्हाल देख-रेख की ज्यादा सावधानी रखनी पड़ती है।

उच्चो मयड़ो रेऽ व्हाऽ रेऽ
हिरणऽ राजाऽ जवऽ चरऽ
धणियर बाणऽ साधो रेऽ
तुमरा खेतऽ विणसियाऽ
हमऽ नी साधाँऽ रेऽ
म्हारी माँयऽ सावलड़ी
ववूऽ हो पातलड़ी
बईणऽ सुभद्रा बाई सासऽराऽ

भावार्थ : ऊँची भारी जमीन पर जौ की खेती लहलहा रही है। उस जौ को हिरण चरकर नष्ट कर रहे हैं। हे धणियर! तुम बाण साधकर हिरण भगा दो। इस पर धणियर कहते हैं, ''हम बाण नहीं साधेंगे और न ही जौ चरते हिरण भगाएँगे। हमारी माँ भोळीभाली है। हमारी पत्नी सुकुमारी नाजुक है और मेरी बहन सुभद्रा ससुराल में है।

इस गीत में धणियर जहाँ अपने परिवार के प्रति संवेदनशील है, वहीं पशु पक्षी के प्रति भी उतने ही दयावन्त हैं। वे सोचते हैं, खाते हुए हिरण को भगाना पाप का कारण है। धणियर का दया द्रवित भाव, जीव को त्रास न हो।, अन्यथा भूखे का श्राप मेरे परिवार को लगेगा। हमारा लोक पशु संरक्षण और पर्यावरण के प्रति सदैव चैतन्य रहा है।

आराधना पर्व गणगौर के गीतों में विराट कृषि दर्शन है। पत्नी पति से अरज करती है कि उसे पीहर मोठा भाई के यहाँ जाना है। तदनुसार रनुबाई स्नान कर शृंगार करती है। तब धणियर पूछते हैं, ''हमें किस घर मेहमान बनकर चलना है?'' तब रनादेवी कहती हैं -

दूरऽ का मोठाजी भाई अरजऽ करऽ हो
उनऽ घरऽ नऽ जासाँ मेजवानऽ
उनऽ घरऽ अम्बा आमली हो
उनऽ घरऽ बाड़ी मँऽ दाखऽ
उनऽ घरऽ सूर्या केवड़ो हो
उनऽ घरऽ जासाँ मेजवानऽ -

भावार्थ : मेरे दूर के बड़े वाले भाई के घर मेहमान बनकर चलेंगे। उनके घर आम, इमली और जामुन के वृक्ष हैं, उनकी बाड़ी में अंगूर, अनार हैं। उनकी बाड़ी में सूर्या केवड़ा लगा है, जो वातावरण में सुवास फैलाता है।

मातृ रूप में देवी का पूजन नियमित होता है। देवी की सेवा, पूजा, अर्चना आदि का स्वरूप भी खेतिहर परिवेश का है। महिलाएँ देवी पूजन एवं उनके दर्शन की कामना करती हैं। उस समय भी वे हाथ में सिर्फ फूल-पान लिए खड़ी रहती हैं। वहाँ भी आम्रवन का भाव आच्छादित है -

खोळऽ भरी पाती लाई म्हारी माँयऽ
अम्बा का वन्दऽ सीऽ
खोळऽ खोळऽ ओ जगजन्ती माँयऽ
थाराऽ दरशन की बलिहारी म्हारी माँयऽ
अम्बा का वन्दऽ सीऽ

भावार्थ : मैं अपने आँचल में आम्रवृक्ष की पाती भरकर लाई हूँ। हे माँ! आज अपनी किवाड़ी खोलकर मुझे दर्शन दो। आपके दर्शन से मेरा उद्धार होगा। कृषक-जन का सम्पूर्ण सोच अपने खेत, बाड़ी, कुआँ और बावड़ी के इर्द-गिर्द ही मँडराता रहता है। उसकी सुकुमार कन्या भी अपने पिता के बाग बगीचों में रमना चाहती है।

जब रनुबाई को ससुराल से लेने आते हैं, तो वह अपने पिता से अरज करती है कि उसे अभी ससुराल मत भेजो। उसके अभी खेलने के दिन हैं। देवी का ससुराल तो स्वर्ग में है और उसका पीहर धरती के किसान के घर है। अतः अरज करती है -

म्हारा बापऽ का कुँआ वावड़ी
हमऽ भी पाती खेलाँ हो
पिताजी हमराऽ आजा का बागऽ बगीचा
हमऽ भी पानी खेलाँ हो
झालरियो दऽ

भावार्थ : हे पिताजी! आप के बाग बगीचे हैं। खेत बाड़ी हैं, कुआँ वाबड़ी हैं, हम फूल पाती खेलेंगे। हमें ससुराल मत भेजो। कुआँ वाबड़ी हैं, हम अपनी सखियों के साथ जल किलोल करेंगे।

गणगौर गीतों में स्वयं देवी यह जानती हैं कि उनका पीहर धरती पर है। धरती ही एक ऐसा स्थान है जहाँ अन्न उपजता है। स्वर्ग में तो अन्न की खेती दुर्लभ है। जब देवी की स्तुति के गीत गाये जाते हैं तो महिलाएँ बड़े तन्मय होकर गाती हैं : ''कि देवी उन्हें भी इस बात का गुमान होता है कि उसका भाई किसान है। हमारे पति देवी के भाई हैं।'' यह गीत भी बड़ा सारगर्भित है। देवी वन में झूले पर झूल रही है, और एक तपस्विनी भिक्षा की याचना करती है, तो रनुबाई एक सूप भरकर मोती देती हैं। इस पर तपस्विनी कहती हैं, ''माता हम तुम्हारे माणिक मोती लेकर क्या करेंगे। हम तो क्षुधा तृप्ति के लिए अनाज की याचना कर रहे हैं।'' तब रनुबाई कहती हैं, ''खेत न बोये, खलिहान न बोये। चैत्र का माह आने दो, तब अन्न की भिक्षा देंगे।''

देवी कहती हैं : हम धरती पर जायँगे। धरती पर हमारा पीहर है। वहीं खेती बाड़ी होती है। तब हमारे पिता-भाई हमें अनाज की सौगात देंगे, तो हम वह तुम्हें लाकर दे देंगे।

भरया डोंगर मऽ झूला बँध्याऽ
म्हारी रनुबाई झुलवा जायजी
झुलतऽ जऽ झुलतऽ तापेसरी आई माता
हमखऽ भिक्षा देवो जीऽ -
थाळऽ भरी मोती राणी रनुबाई नऽ लिया
चल्याऽ चल्यऽा ते भिक्षा देंणाऽ जी।
काई करूँ हो थारा माणिक मोती
अन्न की भिक्षा देवो जीऽ।
खेतऽ नी वायो खळों नी वायो
काय की भिकक्षा देवाँ जीऽ
आवसे रेऽ चईतऽ को महिनों
जाँसा हमारा पीयर जीऽ
लाँवसा रेऽ गहुँड़ा की बाळदऽ
जवँऽ जाई भिकक्षा देवाँ जीऽ

भावार्थ : डोंगर में राणी रनुबाई झूला झूल रहीं थीं, तभी एक तपस्विनी भिक्षा की याचना करती हुई आई। रनुबाई सूप भर मोती देने लगीं, तो तपस्विनी बोली, ''माता! हमें तो पेट की आग बुझाने के लिए अन्न की भिक्षा चाहिए। माणिक्य मोती हमारी क्षुधा तुष्टि के काम के नहीं हैं।'' इस पर रनुबाई बोलीं, ''जब हम अपने पीहर धरती पर जायँगे, तब अन्न तुम्हारे लिए लायँगे।

निमाड़ में लोक चैत्र के दिनों में देवी को बेटी के रूप में बुलाते हैं। किसान की गेहूँ की फसल चैत्र मास में पक कर घर आ जाती है। गृह स्वामिनि कहती है, ''स्वामी!, अपने घर रनुबाई और धणियर राजा आयँगे, तो उनके बैठने के लिए श्रेष्ठ उत्तम आसन बनाना है। अपनी बाड़ी के चन्दन वृक्ष की डाल काटकर ले आओ -

बाड़ी मँऽ को चन्दनऽ कटाड़ो रेऽ
म्हारा मानऽ गुमानी डोलाऽ
जेखऽ सुताऱ्या घरऽ राळो रे
जेऽ परऽ रनुबाई बठाड़ो रेऽ
रनुबाई अकेला नी बठऽ रेऽ
जेऽ परऽ धणियर राजा बठाड़ो रेऽ
म्हाराऽ मानऽ गुमानी डोलाऽ।

भावार्थ : हे मेरे स्वामी! तुम अपनी बाड़ी में लगा चन्दन वृक्ष कटवा लो और सुतार से कहो कि वह उसका सुन्दर आसन बना दे। उसको कुम्कुम से सजा दो। उस पर रनुबाई को बैठायँगे। रनुबाई अकेली नहीं बैठेंगी, साथ में धणियर राजा को भी बैठायँगे। हमारी रनुबाई बेटी अपने स्वामी सहित नौ दिन के लिए आ रही हैं। आनन्द का पारावार नहीं होगा।

लोकजीवन इतना सहज सरल होता है कि उसकी चेतना में उसके देवी देवता भी उसी सरीखे किसान, मजदूर और कृषि कर्म में निरत रहते हैं। इसी भाव का यह गीत है। किसान अपने हरे भरे खेतों की रात-रात भर रखवाली करने जाता है। यहाँ भी यही भाव है कि पति रात में खेत पर अकेले हैं, तो पत्नी को चिन्ता में नींद नहीं आती और उसे भूख भी नहीं लगती। इसी भाव का गीत है -

वाड़ऽ वाया वाडुला म्हारा भवरा रेऽ
वाड़ी मँऽ जायगाऽ कूणऽ
जासे धणियर पातळा म्हारा भवरा रेऽ
रनुबाई अन्नऽ नी खायऽ

भावार्थ : धणियर ने गन्ने की बाड़ (बाड़ी) लगाई है। उसकी रखवाली करने धणियर स्वयं गये हैं। रात को हिंसक पशुओं की याद आती है तो रनुबाई को पति की चिन्ता होती है। ऐसी स्थिति में वे न तो अन्न खाती हैं और, न पानी पीती हैं, और रात भर जागती रहती हैं।

इस गीत में नारी सुलभ चेतना, पति की चिन्ता, एक कृषक पत्नी का सीधा सादा स्वभाव, चित्रित है।

प्रस्तुत गणगौर गीत कृषक-महिला की अभिलषित वांछनाओं को दिग्दर्शित करता है। वह देवी-देवताओं की आराधना करती हुई माँगती है अपने सुखी-सुसमृद्ध जीवन की भिक्षा और कृषिकर्म में सहयोगी गोधन की ठानऽ। एक गीत देखिए -

पूजणऽ वाळई काई माँगऽ
दूधऽ पूतऽ आह्वात माँगऽ

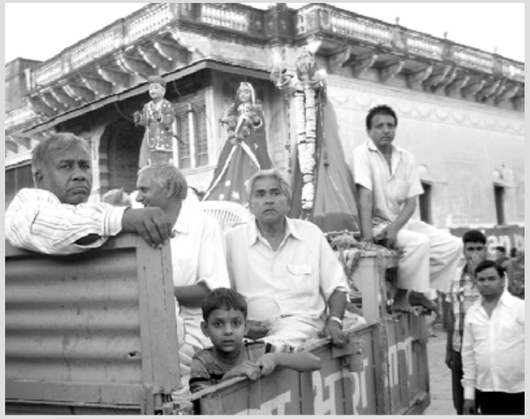

टोंगळ्या उडंतो गोबरऽ माँगऽ
पोयच्या उड़ंतो गोरसऽ माँगऽ
दासी को पीस्यो माँगऽ ववूऽ को राँध्यो माँगऽ
दीयऽ को परोस्यो माँगऽ।

भावार्थ : देवी को पूजने वाली क्या माँगती है। वह रना देवी से दूध, पूत, आह्वात अर्थात् अखण्ड सौभाग्य तथा पुत्र पौत्र माँगती है। उसके घुटने धँस जायँ, इतना गोबर और पाँचों उँगलियाँ और पूरा हाथ घी दूध में डूबे रहें। अर्थात् अकूत गोधन माँगती है, गोबर से खाद हो और पशु खेती में काम करें। साथ ही दासी का पिसा हुआ तथा बहू का बनाया हुआ और बेटी का परोसा हुआ भोजन आराधिका रनुबाई से माँगती है।

समृद्धि की कामना का कितना उदात्त भाव इन गीतों में उभर कर आया है। जहाँ गोधन है, वहाँ सभी प्रकार की सम्पन्नता भरपूर हो जाती है। यहाँ आराधिका दासी द्वारा पीसा गया, बहू का पकाया एवं बेटी का परोसा माँगती है। कितना सूक्ष्म चिन्तन है, जहाँ बेटी के परोसने की बात आती है। कोई और परोसे तो भोजन करने में संकोच होता है, बेटी के परोसने और उससे लेने तथा माँगने में कोई संकोच नहीं होता। यह बेटी माँ का ममत्व भाव है!

किसान का समूचा जीवन प्रकृति के बीच अपने खेतों, खलिहानों, कुआँ, बावड़ी के बीच और मुक्ताकाश के नीचे गुजरता है। ऐसी स्थिति में अगर वह देवी देवता के स्वरूप की कल्पना करता है, तो क्या अचरज है कि वह अपनी आराध्य देवी की सुन्दरता, उसके अंगों की उपमा अपनी खेती बाड़ी की फसलों से ही दे देता है। कितना सौन्दर्यबोध है इस गीत में -

थारो काई काई रूपऽ बखाणूऽ
थारी अँगळई मूँगऽ की सेंगळई रनुबाई
सोरठऽ देशऽ सी आई होऽ
थारा दातऽ दाड़िमऽ का बीजऽ रनुबाई
थारा डोळा लिम्बू की फाँकऽ रनुबाई
थारो सीसऽ नारेळरी रेखऽ
थारो भालऽ सूरिजमलऽ तेजऽ रनुबाई
थारा हाथऽ चम्पा का छोरऽ रनुबाई
थारा पाँयँ केळई का खम्बऽ रनुबाई

भावार्थ : हे रनुबाई! तेरे किस-किस स्वरूप का वर्णन करूँ? तेरे हाथ की उँगलियाँ मूँग की फली जैसे लम्बी और पोरदार नाजुक हैं। हे देवी, तू सौराष्ट्र से आई है। तेरे दाँत अनार के बीजों जैसे सुन्दर चमकीले गठीले हैं। तेरी आँखें नीबू की फाँक जैसी रसीली है। तेरे हाथ चम्पा के छौर जैसे नाजुक हैं और पैर कदली के खम्ब जैसे गठे सुगढ़नरम है। हे माँ! तेरे भाल पर सूर्य का तेज है। मैं तेरे किस-किस रूप का वर्णन करूँ।

एक कृषक कितनी सुन्दर उपमाओं से देवी के स्वरूप का वर्णन करता है। ऐसा वर्णन कहीं अन्यत्र उपलब्ध नहीं है। लोक में सहज भक्ति का बड़ा निर्मल भाव है, हम जैसे हैं, वैसे हमारे भगवान् हैं। हम जैसे खाते हैं, जैसे रहते हैं, वैसे ही हमारे आराध्य करते हैं। सच कहते हैं, भगवान् भावना के भूखे हैं। इसीलिए निमाड़ की लोकदेवी का प्रसाद भी उसके साधक जुवार की धानी और मूँगफली का लगाते हैं, इसे 'मेवा' कहते हैं। ज्वार और मूँगफली ही निमाड़ की मुख्य फसल है।

रनुबाई मैके से ससुराल आती है, तो ससुराल के लोग पूछते हैं कि तुम्हें क्या-क्या भोजन कराया, तब रनुबाई कहती है, ''दाख-मेवा' का भोजन कराया।'' रनुबाई का उत्तर सुन, उनके साथ गया उनका देवर कहता है, ''हे भावज्! झूठ मत बोलो, मूँगफली का प्रसाद और गुड़ घी भात का भोजन कराया गया था।'' इस प्रसंग का एक गीत है -

झूठाऽ मति बोलो भावजऽ झूठा मति बोलोऽ
जुवारऽ की धानी नऽ भुई मूँग का मेवाऽ
चंदनऽ बाजुटऽ का बठणाऽ तुम्हाराऽ
गुड़ऽ भातऽ का जिमणाऽ तुम्हाराऽ
झूठाऽ मति बोलो....।

गणगौर गीतों में निमाड़ी कृषक के खानपान, रहन-सहन, रीति रिवाज का बड़ा उदात्त दर्शन होता है। जब बिदाई की जाती है, तो मार्ग में भूख से निजात के लिए बेटी के लिए भोजन के स्थान पर गेहूँ का आटा सेंककर, उसमें गुड़ मिलाकर, एक कपड़े की पोटली में रथ के भीतर रख दिया जाता है।

रनुबाई की बिदाई के बाद गाँव के लोग अपने-अपने काम-धंधों में जुट जाते हैं। इसी अनुभूति का एक गीत है। जब रथ से ज्वारे विसर्जन कर लौटते हैं, तब यह गीत गाया जाता है -

रनुबाई तो सिधारया सासरऽ
नऽ धंधा लाग्या लोगऽ हो सहेल्याँऽ
चलो सखी देखणऽ चाळाँऽ
धणियर राजा तो मोटऽ गेरऽ
नऽ रनुबाई पाणी वाळऽ हो सहेल्याँऽ
चलऽ सखी देखणऽ चाळाँऽ

भावार्थ : रनुबाई के पीहर आने पर निमाड़ का कृषक, लोक उनकी सेवा-भक्ति में लगा था। अब नौ दिन बाद उनकी बिदाई होने पर पूरा गाँव, लोग काम में लग गए। वहीं सहेलियाँ आपस में चर्चा करती हैं कि देखो देखें रणुबाई ससुराल में क्या कर रही हैं। इसी का भाव गीत है कि धणियर राजा मोट द्वारा कुएँ से पानी निकाल रहे हैं और रनुबाई फसल में पानी देने के लिए नालियाँ बना रही हैं। जैसा लोक, वैसे उनके देवी देवता। गणगौर निमाड़ का कृषक-लोक पर्व है, वह देवी उन्हें शक्ति, भक्ति, भुक्ति और मुक्ति दे रही हैं।

13, समर्थ परिसर, ई-8 एक्स्टेन्शन, बावड़िया कला,
पोस्ट ऑफिस त्रिलंगा, भोपाल - 462039
मो. : 09424440377, 09893027235
विकल्प : 09819549984

छत्तीसगढ़ की लोक संस्कृति के विकास में लोकनाट्य 'नाचा'

श्रीमती भगवती साहू

छत्तीसगढ़ की संस्कृति लोक चौपाल से सम्बद्ध संस्कृति है। उनकी अपनी परम्पराओं की समृद्ध गठरी है। यहाँ की पंडवानी, पंथी, भरथरी, चंदैनी, सुआ, करमा, ददरिया, बांसगीत, नाचा-गम्मत आदि विविध कलारूप देशभर की अन्य पारम्परिक विधाओं के सम्मुख बेजोड़ हैं। छत्तीसगढ़में देश को गौरवान्वित करने वाली सांस्कृतिक संपदा है। रामगढ़की प्राचीन रंगशाला से लेकर आधुनिक रंग शिल्पियों तक हमारी विकसित परंपरा है। लोक की भावनाओं को लोक तक प्राचीन शैली में युगानुरूप यत्किंचित परिवर्तन के साथ प्रस्तुत करने की विशिष्ट विधा है लोकनाट्य 'नाचा'। लोक कलाकार, नृत्य, गीत, प्रहसन के द्वारा लोक जीवन दर्शन और लोक संस्कृति का प्रकटीकरण करते हैं।

संस्कृति मनुष्य को संस्कार देती है- या यूँ कहें जनसमुदाय के संस्कारों की संज्ञा ही संस्कृति है। इसमें लोक में प्रचलित रीति-रिवाज, विश्वास, विधि-विधान, कला, विज्ञान यानि जीवन से सम्बद्ध सभी व्यवहार आ जाते हैं। लोक संस्कृति व लोककलाएँ फूल की तरह हैं जो गाँव-जंगल, नदी-पहाड़, खेत-खलिहान में लोक के सुख-दुःख, रीति-रिवाज, श्रम-धर्म, आचार-व्यवहार तथा पर्व त्यौहार में फलते-फूलते। उनका विकास वहीं होता है।

छत्तीसगढ़की जनता अपनी लोक संस्कृति तथा लोककला रूपों से अत्यधिक प्रेम करते हैं। उनकी आत्मीयता और अनुराग के कारण ही वह जीवंत, समृद्ध, जीवन में शामिल और प्रासंगिक बनी हुई है। किसी भी समाज की वास्तविक पहचान उसकी संस्कृति से होती है, और कला का विकास लोकजीवन में होता है। लोककलाएँ समाज में अंतर्निहित हमारे परस्पर संबंधों, परम्परागत मूल्यों, विश्वासों को अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं। लोकगीत, लोकसंगीत, लोकनृत्य और लोकनाट्य आदिम काल से हमारे सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन की अभिव्यक्ति के सर्वोत्तम और सशक्त माध्यम रहे हैं।

छत्तीसगढ़ी लोकनाट्य 'नाचा' अंचल की लोक परम्परा का एक प्रहसनात्मक रूप है, जो जीवन के यथार्थ में मौजूद विद्रुप और विसंगति की मार्मिक और तीखी आलोचना का लोकमंच है। लोक का प्रतिनिधित्व करता हुआ 'नाचा' अपनी विशेषताओं से आपूरित गीत-संगीत और अभिनय से जन-मन को आकर्षित कर अभिभूत करता है। लोक की भावनाओं को पारंपरिक शैली में युगानुरूप परिवर्तन के साथ प्रस्तुत करने वाला एक विशिष्ट

शिल्पविधि है लोकनाट्य 'नाचा'। छत्तीसगढ़के सांस्कृतिक प्रवाह को अक्षुण्ण बनाये रखने में अंचल के अनुभवी, मंचीय लोक कलाकारों की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। लोकगीत और लोकगाथा गुम्फित प्रहसन और नृत्य का सम्मिश्रित, समन्वित प्रकटीकरण ही लोकनाट्य है।

जमुना प्रसाद कसार के अनुसार - ''आज की इस विकसित सभ्यता के युग में हम अपनी संस्कृति के कुछ हजार वर्षों की संस्कृति की ही कल्पना कर सकते हैं। फिर वह संस्कृति जहाँ युग सापेक्ष होती है वहीं वह युग निरपेक्ष भी होती है। इस रूप में संस्कृति अपनी विकास यात्रा में कुछ पुराने का त्याग करती है, और नये का निरंतर वरण करती रहती हैं। इस परिप्रेक्ष्य में छत्तीसगढ़की संस्कृति भी अपनी विकास यात्रा में किस प्रकार नये-नये रूप लेती गई इसकी कल्पना वर्तमान और ज्ञात की तुलना से ही की जा सकती है।

छत्तीसगढ़की धड़कनों में बसा छत्तीसगढ़ी लोकनाट्य 'नाचा' आधुनिक जटिलताओं, नैतिक सन्दर्भों एवं लोकतत्वों को समेटते हुए प्रस्तुत होता है। मीडिया और फिल्मों के प्रभाव से यह उपभोक्ता संस्कृति और व्यावसायिकता के चक्रव्यूह में फंसती जा रही है। जिसके कारण लोगों की सांस्कृतिक अभिरूचियों और सांस्कृतिक मूल्यों में तेजी से परिवर्तन होने लगा है। नाचा व्यवसायिक सफलता के मोह में धीरे-धीरे लोक जीवन से दूर होकर नुमाइश की चीज बनता जा रहा है। लोक संस्कृति में अतीत के साथ वर्तमान का सामंजस्य आवश्यक है लेकिन पुनर्सृजन और परिमार्जन के नाम पर भौंडापन स्वीकार नहीं किया जा सकता। लोक कलाकार श्रेष्ठतम परम्परा में विकृति का समावेश हँसी-हँसी में भी समकालीन जीवन की विसंगतियों को पहचानने में कहीं कोई भूल नहीं करते। वे लोक संस्कृति के सच्चे संवाहक होते हैं।

महावीर अग्रवाल के शब्दों में - ''नाचा छत्तीसगढ़की अत्यंत समृद्ध और जीवंत नाट्य परंपरा है उसमें सर्जनात्मक अन्वेषण की यह यात्रा लोक संस्कृति के विकास में एक सीमा तक योगदान देती है, क्योंकि सामूहिक चेतना एक ऐसा गुणधर्म है जो समाज के सांस्कृतिक विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। संस्कृति के विकास की प्रक्रिया सामाजिक और आर्थिक विकास की प्रक्रिया है। लोकरंग की महक छत्तीसगढ़ी लोकनाट्य 'नाचा' की पारंपरिक और सांस्कृतिक आधार है। जनहित की भावना उसकी आत्मा और चुम्बकीय आकर्षण को प्रदर्शित करता है। शहरी वातावरण के संपर्क और प्रभाव में आने के कारण अब नाचा की भाषा, उनके संवाद, संगीत और नृत्य में अनेक

परिवर्तन होने लगे हैं। आधुनिक संवेदना या आधुनिक बोध, अतीत से वर्तमान की मुठभेड़ से पैदा होने वाली नयी प्रतिभा का ही नाम है। कोई भी संस्कृति स्थायी और शाश्वत नहीं है, अन्याय संस्कृतियों से प्रभावित व परिवर्तित है। इन्हीं परिवर्तन एवं विकसित चेतना के कारण छत्तीसगढ़में परिवर्तन, विकास और नयापन आएगा। डॉ.विनय कुमार पाठक लिखते हैं कि - 'लोकनाट्य जीवनदर्शन मात्र न होकर जीवन को गंतव्य तक ले जाने का आयोजन भी है। वह समाज या जीवन का दर्पण मात्र न होकर उसके अवगुणों पर चोट करने वाला संयोजन भी है। ऐसे महान गुणों के कारण लोकमंच लोक हृदय का हार भी बनता है।

गोर्की ने जन संस्कृति की तुलना एक बिना तराशे हुए अनगढ़ पत्थर से की है। लोकगीत, लोकनृत्य, लोककला और अन्य सांस्कृतिक रूप बिना तराशे हुए अनगढ़पत्थर से की है। लोकगीत, लोकनृत्य, लोककला और अन्य सांस्कृतिक रूप बिना तराशते हुए कुशल दस्तकार इन पत्थरों को सुन्दर हीरों में बदल देते हैं। छत्तीसगढ़की लोक संस्कृति समय व समाज का प्रतिनिधित्व करती हुई सच्चे सेवक भांति की परिवर्तन और विकास में अपनी भूमिका अदा करती है। हबीब तनवीर ने परिवर्तन की प्रक्रिया पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि - 'आज समाज कई स्तरों पर परिवर्तन की प्रक्रिया से गुजर रहा है। मिलावट और विकास की सीखा रेखा तय करना भी एक चुनौती भरा काम है। लोक संस्कृति से कलाकारों का जुड़ाव उन्हें शक्ति देता है। लोक संस्कृति के विकास और सृजनात्मक अन्वेषण की यात्रा में लोककलाओं के कुशल शिल्पी दाऊ दुलार सिंह, दाऊ रामचंद्र देशमुख दाऊ महासिंह चन्द्राकर का योगदान अद्वितीय रहा। शताब्दी के एक महान सर्जक के रूप में हबीब तनवीर ने अपनी चेतना द्वारा छत्तीसगढ़ की लोक संस्कृति के धरोहर 'नाचा' को विश्वरंगमंच पर प्रतिष्ठित किया। रंजीत भट्टाचार्य के अनुसार- 'लोक संस्कृति जिसमें हमारे लोकगीत, लोकनृत्य, लोकनाट्य तथा अन्य परंपरायें शामिल होती हैं वस्तुतः उसमें लोकविश्वास, रूढ़ियाँ या एक कठोर शब्द में कहें तो भद्दापन भी होता है यदि वह हटाया गया तो वह भ्रष्ट भी हो सकती है, और नष्ट भी। इसलिए उसके अनगढ़स्वरूप को एक शासन देना पड़ता है। वैसे लोक संस्कृति और लोककलाओं में कुछ परिवर्तन सहज भी घटित होते हैं, क्योंकि लोक पर राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक परिवर्तनों का दबाव होता है।

'नाचा' जीवन पद्धति में होने वाले परिवर्तनों और विकसित हुई चेतना के कारण अनेक धाराओं को अपने में समेटे कुछ कमियों के बाद भी छत्तीसगढ़की लोक संस्कृति के दर्पण हैं।

*संदर्भ स्रोत : * कसार जमुना प्रसाद, लोकगीतों में पिरोई छत्तीसगढ़ी संस्कृति, पृष्ठ 34 * अग्रवाल महावीर, लोकनाट्य नाचा, पृष्ठ 189, श्री प्रकशन, दुर्ग छ.ग. * पाठक विनयकुमार, लोकमंच के पुरोधा, पृष्ठ 22, प्रयास प्रकाशन, बिलासपुर, 1999 * अग्रवाल महावीर, हबीब तनवीर का रंग संसार, 93 श्री प्रकाशन दुर्ग, 2006 * देशमुख संतराम, लोकमंच के पुरोधा, पृष्ठ 62, प्रयास प्रकाशन, बिलासपुर, 1999।*

शोधार्थी शासकीय वि.य.ता. स्वशासकीय
महाविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)

वसंत गीत

रमेश तिवारी

दिन वासन्ती लगन लगे

सुरभित बहने लगी बयार,
थपकियाँ देती मन के द्वार,
दिन वासन्ती लगन लगे।

सुबह की वो मधुरिम बौछार,
शाम का मन भावन त्यौहार,
आलस वश तन रहन लगे।
दिन वासन्ती लगन लगे।।

झुक गई कनहर की हर डार,
सरसों कर सोलह सिंगार,
चहुँ दिश टेशू दगन लगे।
दिन वासन्ती लगन लगे।।

प्रेम की दरिया भरे हिलोरे,
रहा मन तन को झकझोर,
रस हृदय में जगन लगे।
दिन वासन्ती लगन लगे।।

हवायें बाँध के घुँघरू पाँव,
पहुँची निकट नेह के गाँव,
सकल जोग से जुरन लगे।
दिन वासन्ती लगन लगे।।

कोयल कुहके बारम्बार,
सजन तक पहुँची है मनुहार,
जल नैनों से चुँअन लगे।
दिन वासन्ती लगन लगे।।

दूल्हा बन गये हैं रितुराज,
हम सब बने बाराती आज,
भाव बन भँवरा नचन लगे।
दिन वासन्ती लगन लगे।।

लहकती करने दुखड़े दूर,
खेत में फसल खड़ी भरपूर,
स्वप्न सुनहरे दिखन लगे।
दिन वासन्ती लगन लगे।।

सिविल वार्ड नं.5 राजीव गांधी कॉलोनी,
दमोह जिला दमोह (म.प्र.) पिन-470661
मो.9893094714

लोकभाषा मालवी के लोकप्रिय कवि स्व. मदनमोहन व्यास

शिव चौरसिया

आधुनिक मालवी कविता की वाचिक परंपरा में अपनी सहज, सरल, चुटीली, समयानुकूल और मर्मस्पर्शी कविताओं के कारण श्री मदनमोहन व्यास अत्यंत लोकप्रिय रहे हैं, ग्राम्य जीवन का स्वाभाविक चित्रण, स्वतंत्रता के बाद आये सामाजिक बदलाव, रीति-रिवाज और मूल्य विघटन की विसंगतियों पर तीखा कटाक्ष करने के कारण इनकी कविताओं की अलग ही पहचान रही है। ये मालवी कविता की दूसरी पीढ़ी के महत्त्वपूर्ण रचनाकार हैं।

व्यासजी का जन्म 3 जुलाई 1927 को तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.) में हुआ। बचपन से ही ये तेज बुद्धि और चंचल थे। इनका कंठ अच्छा था और भजन अच्छे गाते थे। उस समय प्रसिद्ध कथावाचक पंडित सखाराम बुआ, कानिटकर की भारी धूम थी। कानिटकरजी महत्त्वपूर्ण कीर्तनकार थे। बचपन में ही मदनमोहन व्यास उनके शिष्य बने और दूर-दूर नगरों-गाँवों में कथावाचन में साथ-साथ गये। फिर हाईस्कूल परीक्षा पास की। साहित्यरत्न भी उत्तीर्ण हुए। कुछ समय तक ये शिक्षक रहे। शिक्षा विभाग छोड़कर फिर व्यासजी पंचायत विभाग के अन्तर्गत देवास जिले में मंत्री के रूप में सेवारत रहे। कुछ समय बाद शासकीय सेवा छोड़कर पत्रकारिता की। कुछ समय तक व्यवसाय भी किया और रचनात्मक लेखन करते रहे। 15 जनवरी 2019 को इनका निधन हो गया।

व्यासजी के कविता लेखन का आरंभ यद्यपि स्वतंत्रता के पूर्व ही हो गया था, लेकिन उसमें गति सन 1952 में आरंभ हुए मालवी काव्य आंदोलन के बाद ही आई। उस समय इन्होंने ग्रामोत्थान, कृषि-विकास, शिक्षा, सामुदायिक प्रगति, नव-निर्माण जैसे विषयों पर खूब लिखा। बाद में समाज में व्याप्त कुरीतियों और राजनीतिक विसंगतियों पर इन्होंने तीखे प्रहार किये, साथ ही प्रकृति वर्णन और ग्रामीण परंपराओं पर लिखते रहे। बाल्यो, दिवाली, ट्रांसिस्टर, घणी मेंगई हे, मालवा की जातरा, रल्यो, चली छोड़ली लाड़ी की, सुखी होयगा देस आदि इनकी प्रसिद्ध कविताएँ हैं। इनका एक कविता संग्रह 'मालवा की जातरा' प्रकाशित हुआ। व्यासजी ने मालवी कविता के साथ हिन्दी कविताएँ भी बहुत लिखी हैं।

मालवा के ग्राम्य जीवन और कृषि विकास के साथ समाज में व्याप्त विसंगतियों पर तीखे प्रहार करने वाली सहज, सरल और चुटीली कविताओं के कारण मदनमोहन व्यास सदैव हमारी स्मृतियों में बने रहेंगे...। 'समावर्तन' परिवार की ओर से उनकी स्मृतियों को नमन करते हुए यहाँ प्रस्तुत है उनकी एक लोकप्रिय कविता 'सुखी होयगा देस यो म्हारो।'

130, विद्यानगर, उज्जैन
फोन-0734-2516373

सुखी होयगा देस यो म्हारो

स्व.मदनमोहन व्यास
जन्म 3 जुलाई 1927
निधन 16 फरवरी 2019

दुख की लाय बुझेगी रे प्यारा,
सुख की बरसेगी सही धारा,
तू मन में राख पतियारो
सुखी होयगा देस, यो म्हारो!

वँई से रंग-बिरंगा बादल, उठी उठीने छाया
अँई से रंग-बिरंगी चूनर का आँचल लहराया
एसी रंग-बिरंगी खेती उठी हवा में झूमे
सावन में बिरहा का गाणा रइ-रइ मन में घूमे
आ म्हारा साँते तू भी गा,
हियो भरइ जाय थारो
सुखी होयगा देस यो म्हारो!

वी जुवान जो रास बैल की, पकड़ी ने अइरया है
दुख-सुख रोज-रोज का झेले तो ई गाणा गडरया है
वी लाड़ी, भाभी, काकी होण, चली खेत की मेड़े
रेसम, रम्भा, सम्पत पणघट पे साथण के तेड़े
इन अंगी-पगड़ी चुनड़ी
वाला को भाग करारो
सुखी होयगा देस यो म्हारो!

घर-घर खुसियाँ भी छावेगा, कोठे नाज भरेगा
नवी मुकातण, पटलण, मेड़ी पे पकवान करेगा
दिया लगेगा, भाग जगेगा, हिली-मिली खेलाँगा
गोपाल्या के गोद में लइने, हींचा पे झूलाँगा

अपणी मेहनत से घर अपणो
चमकेगा जणे तारो
सुखी होयगा देस यो म्हारो!

अब जागी धरती की माया, कमइ पादरी होवे
माथे हात लगइने देखो, अब कोई भी नी रोवे
मेहनत से चूरो कर दाँगा, बड़ा-बड़ा पर्वत को
अब नी रुकने को पहियो यो परिवर्तन का रथ को

जो कड़वो ऊ मीठो होयगा
कोई नी रेगा खारो
सुखी होयगा देस यो म्हारो!

पुरोहित जिसने मछलियाँ पालीं

मनोज कुमार पांडेय

चयन : मुकेश वर्मा

जब रामदत्त प्रतिष्ठानपुर के एक आश्रमनुमा संस्कृत विद्यालय से पुरोहिती और कर्मकांड की दीक्षा ले कर वापस लौटे तब तक उनके पिता पंडित कृष्णदत्त त्रिपाठी बूढ़े हो चुके थे। इसके बावजूद उन्होंने अपनी पुरोहिताई बखूबी सँभाल रखी थी। उनकी गर्दन लगातार हिलती रहती थी इसलिये अब वह मुँड़हिलावन पंडित के नाम से जाने जाते थे। मुँड़हिलावन पंडित के बारे में कई चीजें मशहूर थीं, जिनके बारे में गाँव के लोग पीठ पीछे तो मजा लेते ही, कई बार उनके सामने भी कहने से नहीं चूकते थे। जैसे उन्हें प्याज बहुत पसन्द था पर उन्होंने प्रचारित कर रखा था कि वह प्याज और लहसुन छूते भी नहीं। इस वजह से उन्हें अपने जजमानों के यहाँ से प्याज, लहसुन नहीं मिला करता था जबकि उनके कई जजमान इनकी खेती भी किया करते थे। इस वजह से उन्हें लहसुन प्याज दूर के बाजारों से चोरी-छुपे खरीद कर लाना पड़ता था। वह बात-बात में 'हे नाथ नारायण वासुदेवाय' भी कहते थे, इस वजह से लोग उन्हें नाथ नारायण पंडित भी कहते थे। उन्हें उनके असली नाम से शायद ही कोई सम्बोधित करता था।

जल्दी ही रामदत्त ने सारी पुरोहिताई अपने पास समेट ली। अब अगर एक ही दिन दो जगहों पर जाना होता तभी पंडित कृष्णदत्त जाते नहीं तो वह घर ही रहते। अपने पिता कृष्णदत्त के विपरीत रामदत्त ने अपनी छवि एक संतोषी पंडित की बनायी। जो अपने जजमानों से कुछ माँगता नहीं था, सब कुछ उनकी श्रद्धा पर छोड़ देता था। ऊपर से उनकी यह प्रतिष्ठा कि वह फलाने गुरूजी महाराज के आश्रम से समस्त कर्मकांडों की विधिवत शिक्षा ले कर आये हैं, इन वजहों से उनकी माँग तेजी से बढ़ी। और जब चार गाँव की दूरी पर के एक नामी पंडित मुरारी उपाध्याय ने अपनी बेटी पार्वती की शादी उनसे कर दी तो इसी के साथ वह अपने इलाके के सबसे ज्यादा जजमान वाले पंडित होने की तरफ बढ़े। मुरारी उपाध्याय को कोई बेटा नहीं था और उनके भी जजमान देर सबेर रामदत्त के पास आने वाले थे। पर युवा रामदत्त का ध्यान अभी तक इन बातों की ओर नहीं गया था। वे तो अपनी नयी नवेली पत्नी पार्वती में पूरी तरह से डूब गये थे।

पार्वती उनसे लगभग सात साल छोटी थीं। गोरी चिट्टी। तीखे नाक नक्स। रूप और लावण्य से भरपूर। रामदत्त हर समय उन्हें खुश करने की फिकर में डूबे रहते। कस्बे के बाजार से उनके लिये छुपा कर जलेबी समोसे लाते, तरह-तरह की मिठाइयाँ और पकौड़ियाँ लाते, मतलब कि पार्वती का हर कहा मानने को हमेशा तैयार। पंडित कृष्णदत्त मुंडी हिलाते हुए गरियाते कि ससुर यही मेहरई सीखने गये थे आश्रम। थोड़ा जजमानों पर भी ध्यान दो। कुछ न हो तो भी उनके बीच निकल जाया करो। कभी खाली हाथ नहीं लौटोगे। कुछ न कुछ ले कर ही लौटोगे। जवाब में रामदत्त दहेज में मिली नयी चमकीली साइकिल उठाते और कहीं इधर-उधर निकल जाते। और जब भी आते खाली हाथ कभी नहीं आते, पार्वती के लिये कुछ न कुछ जरूर ले कर आते। कृष्णदत्त बड़बड़ाते रह जाते।

पार्वती उनसे खूब हँसतीं बोलतीं, अपने मायके की बातें बतातीं रामदत्त के बारे में पूछतीं। शक करने की कोई वजह नहीं थी पर रामदत्त को हमेशा लगता कि कुछ और है जो पार्वती उनसे छुपाती हैं। एक अनमनापन है पार्वती के भीतर जो दिन पर दिन जस का तस बना रहता है। कई बार रामदत्त पार्वती को छुप छुप कर देखते। चेहरे का एक एक भाव। पलकों का उठना गिरना। उनका चलना फिरना उठना बैठना। शरीर का एक एक कटाव। उन्हें अपनी किस्मत पर रश्क होता पर वे पार्वती के अनमनेपन की वजह नहीं जान पाते। कई बार उन्होंने महसूस किया कि जब वे पार्वती के पास जाते हैं तो उनके चेहरे पर कुछ रेखाएँ बढ़जाती हैं। पर उन्हें कभी इसका कोई कारण नहीं दिखाई पड़ा। वे पार्वती से बार-बार पूछते, उन्हें यहाँ कोई दिक्कत तो नहीं है ? वे रामदत्त से खुश तो हैं ? इन सवालों का जवाब उन्हें हमेशा अपने पक्ष में मिलता। पर शक करने की एक वजह और थी। मिलन के मधुरतम क्षणों में पार्वती कई बार अचानक ठंडी पड़ जातीं तो कई बार रामदत्त को लगता कि वह कुछ सूँघने की कोशिश कर रही हैं। पर रामदत्त पार्वती को ले कर कभी किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पाये। बाद के दिनों में उन्होंने मान लिया कि शायद यह उनका वहम ही है और धीरे-धीरे इसके प्रति लापरवाह होते चले गये।

बाद में पंडित कृष्णदत्त नहीं रहे। इसी के साथ रामदत्त को कोई रोकने-टोकने वाला भी नहीं रहा पर अब तक उन्हें समझ में आ गया था कि उन्हें पुरोहिती और पत्नी प्रेम के बीच एक सन्तुलन बना कर रखना होगा। नहीं तो दोनों नष्ट हो जायेंगे। प्रेम के लिये जरूरी है कि पेट भी भरा रहे और पेट भरने का पुरोहिती के अलावा उन्हें कोई और रास्ता नहीं आता था। एक बार पुरोहिती पर ध्यान केन्द्रित होने के बाद रामदत्त बहुत जल्दी एक पेशेवर पंडित में बदल गये। उन्होंने विवाह, मुंडन, तिलक, सत्यनारायण व्रत कथा और गृह प्रवेश आदि के साथ-साथ कुछ अनुष्ठानों के भी चक्र चलाए। लोगों को समझाने लगे कि अभीष्ट तो अनुष्ठानों से ही सिद्ध होता है और ये अनुष्ठान किसी भी चीज के लिये कराए जा सकते थे। सुन्दर सुलक्षण पत्नी या बहू के लिये, अच्छी फसल के लिये, मुकदमें में जीत के लिये, नौकरी पाने के लिये, सम्पत्ति और शान्ति बढ़ाने के लिये या ऐसी ही किसी भी अन्य इच्छा के लिये। उन्होंने अपने जजमानों को छूट दी कि कोई न बताना चाहे कि वह अनुष्ठान क्यों करवा रहा है तो भी वे उसके लिये अनुष्ठान करवा सकते हैं। इस तरह उन्होंने उन लोगों को भी अपने अनुष्ठान के दायरे में खींच लिया जो पत्नी या भाई या दुश्मन की मृत्यु के लिये, पड़ोसी को नष्ट करने के लिये या किसी दूसरे की पत्नी, बहन या बेटी पर हाथ साफ करने के लिये अनुष्ठान करवाना चाहते थे। रामदत्त का ये अनुष्ठान वाला नुस्खा जम कर कामयाब हुआ। जब कहीं अनुष्ठान वगैरह करवाना होता तो रामदत्त जजमान को बरामदे में छोड़ पूजागृह में जाने की बात कह कर उठ जाते कि देवी से पूछ कर आता हूँ। पूजागृह से वे पार्वती की कोठरी में पहुँच जाते कि घर की जरूरतों के लिये क्या-क्या चाहिए। चीजें सीधे रूपए में भी ली जा सकती थी पर उसकी एक सीमा थी, दूसरे यह कर्मकांड की भव्यता को नष्ट करने वाली बात भी होती। तो रामदत्त देवी से पूछ कर आते और अपने जजमानों को कर्मकांड की सामग्री लिखाते। सौ ग्राम हींग, आधा किलो जीरा, दस किलो चीनी, पाँच किलो गुड़, चाँदी की पायल या बिछिया, सोने की कील या सलाई या सोने का कोई पक्षी या अन्य आकृति, सेर भर सूखा मेवा, एक गद्दा रजाई, तकिया, चादर सहित और पच्चीस बेल आदि। पर पंडित रामदत्त इतना ही नहीं लिखाते थे। वे पूरे पेशेवर थे इसलिये जजमानों को ऐसी भी अनेक चीजें लिखाते थे जो सिर्फ कर्मकांड का भौकाल बनाए रखने के लिये होती थीं। मसलन एक सौ एक कमल के फूल, सवा ग्यारह किलो गंगा की बालू, समी की लकड़ी, पन्द्रह कुओं का पानी, सात व्यक्तियों के खेत की मिट्टी, पाँच तरह के सफेद फूल, सात तरह के पीले फूल या दस ग्राम पारा जैसी अनेक चीजें।

अगर दुश्मन से मुक्ति के लिये कोई तांत्रिक किस्म का अनुष्ठान हो रहा हो तो दुश्मन के घर की मिट्टी, गिद्ध का पंख, मोर और उल्लू की हड्डी, लोहबान, साँप की केंचुल या मदार का एक छटाँक दूध जैसी वस्तुएँ लिखाते। इस तरह के अनुष्ठान रामदत्त गुप्त रूप से करते थे। वे जानते थे कि चीजों को गुप्त कह देने से उनके साथ एक रहस्यात्मकता जुड़ जाती है और वे और तेजी फेलती हैं। इस तरह की वस्तुओं या कर्मकांड के तरीके का एक फायदा यह भी होता था कि इनके नीचे जीरा, जवाइन, चीनी या गुड़ जैसी वस्तुएँ दब कर रह जाती थीं बल्कि कई बार तो वह जजमान को ज्यादा आसान लगती थीं। उनमें पैसा भले लगता था पर उन्हें जुटाना आसान था जबकि मुफ्त चीजों को जुटाना अक्सर बेहद कठिन या श्रमसाध्य होता था।

इस तरह की चीजें रामदत्त के लिये एक तीसरे तरीके से भी मुनाफे का सौदा होती थीं। कई बार उन्हें इकट्ठा करने में आने वाली मुश्किलों से बचने के लिये लोग उन्हें एकमुश्त दक्षिणा देने की पेशकश करते थे। बदले में सारी सामग्रियों को जुटाने का काम रामदत्त का हो जाता था। रामदत्त इस तरह की अनेक चीजों का एक बड़ा भंडार अपने पास रखते थे। बहुधा तो पहले के अनुष्ठानों में इस्तेमाल की चुकी चीजें ही होती थीं जिन्हें रामदत्त यह कह कर अपने घर मँगवा लेते थे कि फला दिन या रात को इन्हें मिट्टी में गाड़ देंगे या मंत्रों के साथ जला देंगे। और उसी के साथ अनुष्ठान पूरा हो जायेगा। उनमें से ज्यादातर चीजों को वे अपने पिछवाड़े के खपड़ैल में सुरक्षित रखते जाते थे जो जल्दी ही दोबारा काम में आ जाती थीं। धीरे-धीरे रामदत्त और और लालची होते गये और अपने शुरूआती दिनों के संतोष को कहीं बहुत गहरे दबा दिया। उन्होंने दान दक्षिणा के हिसाब से तरह-तरह के अनुष्ठानों की कोटियाँ तय कर दी। जैसे कोई जजमान सत्यनारायण व्रत कथा के लिये उनके पास आता तो सीधे ही पूछ लेते, एक सौ एक वाली या पाँच सौ एक वाली' दक्षिणा से ही तय हो जाता कि वह कितना समय देंगे और संस्कृत में कथा बाँचने के अलावा किस्सा भी सुनायेंगे या बाँचते समय बीच के कुछ अध्याय भी गायब कर देंगे।

रामदत्त की ऐसी हरकतों के बाद भी उनका रूतबा कायम रहा तो उसकी अनेक वजहें थीं। पहली तो यही कि उन्होंने सभी विधि विधानों की विधिवत दीक्षा ली थी, इसका या उसका पिछलग्गू बन कर नहीं सीखा। दूसरा छोटे से छोटे अनुष्ठान को भव्य रूप देने की उनकी कला। जैसे किसी भी पूजा या अनुष्ठान की वेदी बनाते समय रामदत्त एक मछली जरूर बनाते थे जिसका चेहरा कुछ कुछ इनसानी शक्ल लिये होता था या जीभ जिसे वह सरस्वती का प्रतीक कहते थे। मछली के बारे में कुछ लोगों ने पूछा तो रामदत्त ने बताया कि उन्हें विष्णु का मत्स्यावतार सिद्ध है। इसी तरह से उन्हें पुराणों की बहुत सारी कथाएँ कंठस्थ थीं जो उन्हें एक अच्छा खासा कथावाचक बना देती थीं। वे जब बीच-बीच में अपनी चोटी सहलाते हुए कथाएँ सुनाते तो लोग उनमें डूब जाते। इसके बावजूद ऐसा नहीं था कि उनके विरोधी नहीं थे। उनके विरोधियों में वे लोग तो थे ही जिनके खिलाफ उन्होंने अनुष्ठान संपन्न कराए थे। वे भी थे जिनके लिये रामदत्त ने अनुष्ठान कराए थे पर अनुष्ठान कामयाब नहीं हुए। इसके बावजूद गाँव के अनेक झगड़ों और अनहोनियों का श्रेय रामदत्त को दिया जाता था। पर लोगों ने उन्हें सीधा निशाना इसलिये नहीं बनाया क्योंकि उनके पास इन बातों का कोई प्रमाण नहीं था। दूसरे वे पंडित रामदत्त त्रिपाठी की रहस्यमता से डरते भी थे।

रामदत्त को दो बेटे हुए, जुड़वा। रामदत्त ने उनका राम रखा वशिष्ठ नारायण त्रिपाठी और विश्वामित्र नारायण त्रिपाठी। जिस दौर में उनके बच्चे धीरे धीरे बड़े हो रहे थे, रामदत्त की समृद्धि लगातार बढ़ रही थी। खपड़ैल घर अच्छे-खासे पक्के घर में बदल गया था। दरवाजे पर का कच्चा कुआँ पक्के कुएँ में। रामदत्त ने कुएँ की बगल में एक छोटा सा मन्दिर भी बनवा लिया था। एक दो जगहों पर थोड़ी थोड़ी जमीनें दान में मिल गयी थीं। कुछ आम और महुए के फलदार पेड़ दान में मिल गये थे। रामदत्त ने पार्वती के नाम पर बीघे भर खेत भी खरीद लिया था। घर दान की चारपाइयों और तख्तों, बिस्तरों, स्टील के बर्तनों और ताँबे के कलशों से भरा था। पार्वती ने गाय और भैंस भी पाल ली थी जिनका दूध पी कर के वशिष्ठ और विश्वामित्र अपनी छाती चौड़ी कर रहे थे। बीच-बीच में रामदत्त को पार्वती का अनमनापन फिर सताने लगता जिससे निपटने का रामदत्त ने एक आसान-सा तरीका खोज निकाला था। ऐसे मौकों पर रामदत्त सोने चाँदी के सारे पशु पक्षी निकालते और बदले में पार्वती के लिये कोई जेवर गढ़ा लाते। पार्वती खुशी जाहिर करतीं और रामदत्त को भी लगता कि उन्होंने पार्वती का अनमनापन फिलहाल कुछ समय के लिये तो दूर कर दिया है जिसकी वजह के बारे में रामदत्त अपनी पूरी कोशिश के बाद भी कभी कुछ नहीं जान पाये थे।

रामदत्त के दोनों बेटे हूबहू उन पर जा रहे थे। गोरा रंग तेजी से बढ़ती लम्बाई और दोहरी कद काठी। पर रामदत्त अपने बचपन में शर्मीले और दब्बू थे, उनके विपरीत वशिष्ठ और विश्वामित्र जम कर शरारती निकल रहे थे। उनकी शरारतों और बदमाशियों की शिकायतें उन तक पहुँचती, जिस पर वे उन्हें ऊपर-ऊपर डाँटते रहे पर भीतर-भीतर मुग्ध होते रहे। उन्हें प्यार करते रहे। उनकी बलाएँ लेते रहे। रामदत्त इस बात पर खुशी महसूस करते कि उनके बेटे उनकी तरह दब्बू नहीं हैं इसलिये उनके साथ कभी वैसा कुछ नहीं होगा जैसा रामदत्त के साथ बचपन में होता रहा था। इस तरह से वशिष्ठ और विश्वामित्र के कारनामों के प्रति रामदत्त और पार्वती दोनों में ही एक उपेक्षा का भाव रहा। रामदत्त खुश थे पर उपेक्षा की एक वजह और भी थी कि वे अपने फरोहिती साम्राज्य में इतने खोए हुए थे कि कभी जान ही नहीं पाये कि दोनों भाइयों की बदमाशियाँ उन्हें किस तरफ ले जा रही हैं। पार्वती अपने अनमनेपन में ही खोयी रहतीं। और जब रामदत्त घर पर नहीं रहते तो उनसे पूछने वाला भी कोई नहीं होता कि उनके अनमनेपन की वजह क्या है जिसे वे हमेशा नकारती रहीं थी।

इस स्थिति का फायदा गाँव के उन लोगों ने उठाया जो रामदत्त से किसी वजह से दुखी या नाराज थे। उन्होंने दुश्मन को समूल नष्ट करने के गाँवों के एक प्रचलित और सर्वमान्य तरीके पर अमल करना शुरू कर दिया। यह तरीका था किसी के बेटों को बिगाड़ना या बिगड़े हुए को और शह देना। इसके बाद तो दोनों को रोकना असम्भव हो गया। बदमाशी और कमीनापन जैसे दोनों के खून में शामिल था। दोनों की एक जोड़ी बन गयी थी जो हमेशा साथ रहती। किसी की चलती हुई साइकिल के पहिए में डंडा डाल देना, किसी बच्चे के ऊपर थूक देना, बच्चों को गालियाँ सिखाना, पौधों को तोड़ देना या दोपहरियों में जब लोग सो रहे हों उनके जानवर खोल देना जैसी बातों से उनकी बदमाशियाँ शुरू हुईं तो बढ़ती ही गयीं। रामदत्त को अपने से ही फुर्सत नहीं थी पर पार्वती जब कभी अपने अनमनेपन से बाहर निकलतीं तो दोनों की जम कर पिटाई करतीं या उनका खाना बन्द कर देतीं। पर पिटाई के लिये दोनों हाथ में कम ही आते थे और खाना उनके लिये कोई समस्या नहीं थी। ऐसे कई घर थे जहाँ वशिष्ठ और विश्वामित्र चुपचाप खा पी आते थे।

गाँव में एक लड़का था चम्पक। चम्पक लम्बे बाल रखता था और गाँव की नौटंकी मंडली में स्त्रियों की भूमिकाएँ किया करता था। पता नहीं ये भूमिकाएँ करते-करते या ऐसे ही सहज रूप में पर उसके शरीर में स्त्रियों वाली कमनीयता आ गयी थी। दोनों भाई एक साथ उसके पीछे पड़े और जाने उसकी सहमति से या कुछ पैसे का लालच दे कर या डरा धमका कर उसके साथ मुँह काला किया और इसके बाद उसकी गुदा में पैट्रोल डाल दिया। वह जलन से चीखता रहा, दोनों भाई हँसते रहे।

उस दिन रामदत्त के घर में खाना नहीं बना। पार्वती का चेहरा पत्थर की तरह सख्त हो गया था। चम्पक की माँ रामदत्त के दरवाजे पर जी भर के गालियाँ बक के गयी थी। एक तो वशिष्ठ और विश्वामित्र की इतनी गलीज हरकत और ऊपर से चम्पक की माँ का दरवाजे पर आ कर गाली बकना। पार्वती सदमे की हालत में थीं। उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि वे क्या कर डालें। वे भयंकर क्रोध और बेचैनी में घर के एक छोर से दूसरे छोर के बीच घूम रही थीं। ऐसे में जब रामदत्त शाम को घर लौटे और घर में अँधेरा देखा तो सहज ही पूछ बैठे। क्या हुआ पार्वती, घर में अँधेरा क्यों है ? तुम्हारे दोनों बेटों की मौत हो गयी है इसलिये, पार्वती ने जवाब दिया। क्या बक रही हो होश में तो हो ? कहाँ हैं वशिष्ठ और विश्वामित्र ? रामदत्त के इस सवाल के जवाब में पार्वती ने कहा कि उन्हें गंगा माई खा गयीं। रामदत्त को समझ जाना था कि घर में कुछ भयानक घटा है पर रहे तो पंडित ही, नहीं समझ पाये। और बदले में पार्वती को तमाचा खींच मारा।

पार्वती जैसे क्रोध से पागल हो रही थीं। वे चिल्लायीं, मार ले मछरगन्धा, एक मैं ही थी जो तेरे साथ निबाह लाई। कोई दूसरी होती तो मुँह पर थूक कर चली गयी होती। तेरा ही पाप है कि ऐसे कुकर्मी बेटे मिले हैं। मरते भी नहीं कि फुर्सत मिले। घिन आती है मुझे तुमसे। ये तुम्हारा ही पाप है जो मेरे बेटों के सिर चढ़कर बोल रहा है। अब तक न रामदत्त ने पार्वती को कभी मारा था न पार्वती ने उनसे कभी ऐसे बात की थी। पार्वती हाँफने लगी थीं, जैसे गिरने को हुईं। रामदत्त सँभालने के लिये बढ़े जिन्हें स्थिति की गम्भीरता से ज्यादा उसकी अचानकता ने अपनी गिरफ्त में ले लिया था कि पार्वती दोबारा चीखीं। मत छुओ मुझे। तुम्हारे शरीर से मछलियों की गन्ध आती है। उबकाई आती है मुझे तुम्हारे साथ सोते जागते। तुम जब सामने होते हो तो मेरा मन करता है कि मैं साँस लेना बन्द कर दूँ। जब से तुम्हारे घर आयी, मैं कायदे से कभी साँस नहीं ले पायी। वही घिनौनी गन्ध और अब वही गन्ध मुझे तुम्हारे बेटों से आने लगी है। तुम्हारी गन्ध तो घर में ही थी, तुम्हारे बेटे पूरा इलाका गन्धवा रहे हैं पंडित। उनको सँभालो। मुझ पर हाथ उठा कर अपनी मर्दानगी मत दिखाओ।

रामदत्त लद से बैठ गये। इस पार्वती को तो वे जानते ही नहीं थे। उस चेहरे, जिसे खुश करने के लिये वे उसके आगे पीछे डोलते थे, गहने गढ़ाते थे, के पीछे ये कौन सा रूप छुपा था जिसे वे आज तक नहीं जान पाये। तो यहाँ छुपा था अनमनापन! अचानक उनकी चोटी में बेतरह दर्द उठा। चोटी को हाथ से मसलते हुए उन्होंने कहा मैंने उसे कभी नहीं याद किया पार्वती। मैं तो तुम्हारे पीछे घूमता रहा और

तुम्हें मुझसे मछलियों की गन्ध आती है। इतना तेल, साबुन, चन्दन, इत्र! नहीं ये कैसे हो सकता है ? मैना को तो मैं कब का भूल चुका हूँ तो क्या वह मेरे इतने भीतर बसी हुई थी कि खुद मुझे भी नहीं पता चला। क्या मेरे चेहरे के पीछे से मैना का चेहरा झाँकता है ? क्या मेरी दोनों आँखों की जगह पर दो मछलियाँ हैं ? क्या मेरी त्वचा का रंग बदल रहा है ? क्या मेरे नाखूनों में मछलियों की चमड़ी भर गयी है। अगर नहीं तो ये गन्ध कहाँ से आयी तुम्हें, बोलो पार्वती बोलो, रामदत्त जैसे वहीं पड़े-पड़े बुदबुदा भर रहे थे। वे दरअसल पार्वती से नहीं अपने आप से बात कर रहे थे।

इसी के समानान्तर एक दूसरा एकालाप पार्वती का भी चल रहा था। रामदत्त तुम्हारी इस घिनौनी गन्ध ने मेरा सर्वनाश कर दिया। इसने कभी एक पल को भी मुझे तुम्हारे साथ नहीं होने दिया। मैं हमेशा तरसती रही तुम्हारे ऐसे साथ के लिये जब ये मरजानी गन्ध हमारे तुम्हारे बीच न आये। जिस क्षण तुम्हारे दोनों बेटे मेरी कोख में आये उस क्षण भी मैं तुमसे घृणा कर रही थी रामदत्त।

उस पूरी रात वशिष्ठ और विश्वामित्र घर नहीं आये। रात भर घर में दीपक नहीं जला। रामदत्त जस के तस पड़े रहे अपनी फुसफुसाहटों में डूबे। पार्वती पूरी रात उन्माद में रहीं। आतीं और रामदत्त को झझोड़ने लगती, हमारी क्या गलती थी पंडित कि तुम मुझे मिले इस गन्ध के साथ, ऐसे बच्चे मिले जो नाक कटा रहे हैं गली-गली। सब तुम्हारी उसी गन्ध की वजह से हुआ। बताओ कहाँ से ले आये ये गन्ध ? दोनों एक साथ बोल रहे थे पर कोई एक, दूसरे को सुनने की स्थिति में नहीं था। पार्वती की वर्षों की संचित घृणा फूट पड़ी थी पर उसे कोई दिशा नहीं मिल रही थी। पलट कर वह पार्वती को और उन्मादी बना रही थी। ऐसे ही रामदत्त उन्हीं मत्स्यगन्धा दिनों में पहुँच गये थे। इस क्षण वे पार्वती से इतनी दूर थे कि पार्वती उन्हें मार भी डालतीं तो भी वे जीवित बने रहते। रामदत्त और पार्वती दोनों को जीवन ने दुबारा मौका दिया था। पर दोनों में से कोई भी इस हालत में नहीं था कि उसे सहेज पाता।

रात भर डूबे रहना मछलियों की गन्ध में रामदत्त त्रिपाठी के पिता कृष्णदत्त त्रिपाठी एक छोटे-मोटे गँवई फरोहित थे। वे पढ़े लिखे नहीं थे। उन्हें पुरोहिती का कोई काम काज नहीं आता था पर अभ्यास से संस्कृत का ऐसा कामचलाऊ ज्ञान उन्होंने अर्जित कर लिया था कि अटक-अटक कर सत्यनारायण कथा वगैरह का पाठ कर लेते थे। कृष्णदत्त के पास लोग तभी आते थे जब कोई दूसरा पंडित उन्हें ढूँढ़े भी नहीं मिलता था। कुछ गजब नहीं कि ऐसे में कृष्णदत्त का सबसे बड़ा सपना ही यही बन गया कि वह अपने बेटे रामदत्त को इलाके का सबसे बड़ा पंडित बनाएँ। वे जानते थे कि यह उनके किये धरे नहीं हो सकता इसलिये उन्होंने रामदत्त को किसी जानकार पंडित के साथ लगाने की सोची। पर जल्दी ही उन्हें पता चल गया कि इस तरह से उनका बेटा सिर्फ झोला उठाना या सीदा सामान बाँधना सीखेगा। दूसरे जीवन भर के लिये वह इसी पिछलग्गू की छवि में बँध जायेगा। कृष्णदत्त खुद कुछ दिनों तक एक पंडित का झोला ढो चुके थे इसलिये इस दर्द को जानते बूझते थे। इन्हीं दिनों उनको कहीं से इलाहाबाद में गंगा किनारे प्रतिष्ठानपुर में चलने वाले एक आवासीय संस्कृत विद्यालय के बारे में पता चला जहाँ न सिर्फ संस्कृत की तालीम दी जाती थी बल्कि तरह तरह के कर्मकांड भी सिखाए जाते थे। जब कृष्णदत्त त्रिपाठी अपने इकलौते मातृविहीन बालक रामदत्त को ले कर वहाँ पहुँचे तो धोती-कुर्ता पहनने वाले और लम्बी चोटी रखने वाले किशोरों के सस्वर संस्कृत पाठ पर मुग्ध हो गये और बिना कुछ भी सोचे समझे बालक रामदत्त को आश्रम में छोड़ कर चले आये। रामदत्त की उम्र उस समय पन्द्रह-सोलह साल से अधिक नहीं थी। अगले सात-आठ साल उन्हें वहीं रहना था। आश्रम एक अविवाहित आचार्य चलाते थे और वहाँ स्त्रियों का प्रवेश वर्जित था। आश्रम में रामदत्त का सिर घुटा दिया गया। सिर पर एक मोटी सी चोटी छोड़ दी गयी। उनका यज्ञोपवीत कराया गया। जाँघिए की जगह पर लँगोट बाँधना सिखाया गया और पैंट कमीज की जगह पर धोती कुर्ता। इसी तरह उन्हें बैठने, खड़े होने, नहाने, चन्दन लगाने और सोने के तरीके भी बताये गये। उन्हें यह भी बताया गया कि नहाते समय गंगा में किस दिशा की ओर मुँह करके कितनी डुबकियाँ लगानी हैं। आश्रम में मुफ्त शिक्षा और रहने खाने के बदले इन विद्यार्थियों को कुछ खास नहीं करना था। उन्हें आश्रम के कठोर अनुशासन का पालन करना था। और आचार्य जी के द्वारा अपने जजमानों या शिष्यों के हित में आये दिन संपन्न होने वाले कर्मकांडों में स्वयंसेवक की भूमिका निभानी थी। यहाँ रामदत्त को अपने जैसे अनेक बच्चे मिले जो लम्बी चोटी और जनेऊ धारण किये हुए संस्कृत भाषा और कर्मकांड को सीखने का सपना ले कर आये थे। हालाँकि यह जान पाना किसी के लिये भी मुश्किल नहीं था कि इस सपने में कितना हिस्सा इन बच्चों का खुद का था और कितना उसमें उनके पिताओं के सपने या मजबूरियाँ थीं। यहाँ अनाथ बच्चों की भी एक बड़ी संख्या थी जिन्हें उनके निकट सम्बन्धी यहाँ छोड़ गये थे। आधे अनाथ तो रामदत्त भी थे। बिना माँ के। आश्रम के कठोर अनुशासन में बच्चे सहमे और बुझे से रहते। रात में कई बार कुछ बच्चे रोने लगते जिन्हें उनके साथी ही चुप कराते। या थोड़ा पहले आये बच्चे डाँटते। धीरे धीरे आश्रम में बच्चों का एक समूह बनने लगता। वे एक-दूसरे से लड़ते-झगड़ते, साथ रहना सीखते। शुरूआती दिनों में बच्चों को लँगोट बाँधना न आता। उनके लँगोट अक्सर खुल जाते और दूसरे बच्चों का मनोरंजन हो जाता। आश्रम में मनोरंजन के साधन बहुत सीमित थे। आचार्य जी के पास एक रेडियो था जो उन्हीं के पास रहता था। बच्चों को मनोरंजन के लिये सोते समय एक दूसरे की चोटी बाँध देने या लँगोट खोल देने जैसे कामों तक ही सीमित रहना पड़ता था। एक उपाचार्य थे जिनके ऊपर बच्चों की देखरेख की समूची जिम्मेवारी थी। ये आचार्य बेहद सख्त थे और जरा सी भी गलती पर भयंकर पिटाई करते थे। बच्चे उनसे बेहद डरते थे। इतना कि जब वे बच्चों को लेकर गंगा स्नान आदि के लिये जाते तो उनके पीछे चलने वाले सैकड़ों बच्चों के कदमों से आवाज तक नहीं निकलती थी। वे जोर से साँस लेना तक भूल जाते थे। इसी तरह उन्हें अपने मन और इन्द्रियों पर नियंत्रण रखने की शिक्षा दी जा रही थी।

पर इस दुनिया के नीचे एक और दुनिया थी। नये आये बच्चे पुराने हो रहे थे। उपाचार्य के आतंक के बावजूद वह चुहलें करना, इशारे करना सीख रहे थे। पल भर के लिये ही सही उनकी किशोरावस्था आती और कुछ खेल करके चली जाती। बहुत बार ये खेल पकड़े जाते। मार पड़ती, सजायें मिलतीं फिर भी। इन्हीं सब के बीच बच्चों को ठोंक-पीट कर इस लायक बनाया जाना था कि वह भविष्य में धर्म की ध्वजा को सँभाल सकें। सफलतापूर्वक कर्मकांड संपन्न करा सकें। सफल कथावाचक बन सकें। चाहे माहौल का असर हो या वहाँ रत्ती-रत्ती में फैली विकल्पहीनता का अगले दो तीन सालों में रामदत्त आश्रम में पूरी तरह रम गये। और संस्कृत में तो कुछ इस तरह रमे कि कोई भी और भाषा न जानने के बावजूद संस्कृत को दुनिया की सर्वश्रेष्ठ भाषा मानने लगे। रामदत्त के साथ के ज्यादातर बच्चे ऐसे ही सोचते थे। यहाँ से निकल कर उन्हें पुरोहिती या अन्य कर्मकांडों को अपनाना था। वे धार्मिक कर्मकांडों के लिये तैयार किये जा रहे पेशेवर थे। उनकी शिक्षा पूरी तरह से रोजगारपरक थी। उनका अपना ड्रेस कोड था, उनका अपना छल-छद्म था जिसकी आड़ में उन्हें जीवन भर रहना था। उनके शब्द, शैली, उठने बैठने के तरीके से ले कर तकिया कलाम तक सब कुछ तय किया जा रहा था। यही उनका भविष्य था। यही उनकी दुनिया थी। उन्हें लोगों के विश्वासों और डर के बीच अपना रोजगार तलाश करना था। वे पूरी तरह से पेशेवर होने वाले थे बावजूद इसके उन्हें जीवन भर फ्रीलांसर रहना था। अक्सर किसी विद्यार्थी को आचार्य या उपाचार्य लोगों का पैर आदि दबाने जाना पड़ता था। यह विद्यार्थियों के नैतिक कर्तव्यों में शामिल था। रामदत्त उपाचार्यों के पैर तो दबाते रहे थे पर आचार्य से उनका सीधा साबका कभी नहीं पड़ा था। एक दिन आचार्य ने उन्हें अपनी सेवा के लिये बुलवाया। आचार्य लँगोट के ऊपर पीली धोती पहन कर लेटे हुए थे। रामदत्त के आते ही आचार्य ने धोती उतार कर बगल रख दी और रामदत्त को पैर दबाने के लिये कहा। रामदत्त पैर दबाते रहे और आचार्य उनसे उनकी पढ़ाई के बारे में, घर बार के बारे में और यहाँ कोई दिक्कत तो नहीं है आदि पूछते रहे। यह भी आश्वासन दिया कोई दिक्कत हो तो सीधे मुझसे बताया करो। रामदत्त खुश हो गये। बेकार में ही सब लोग आचार्य से इतना डरते हैं। आचार्य तो उनसे कितना हँस हँस कर बात कर रहे हैं। उनका गाल भी सहलाया... पर रामदत्त की खुशी ज्यादा देर नहीं टिकी। आचार्य ने अपना लँगोट खोल दिया और बोले यहाँ भी दबा दो। देखो ये बेचारा दर्द से बेहोश सा पड़ा है। रामदत्त शर्म और अपमान से कुठित हो गये। उनका मन वहाँ से भाग जाने को हुआ पर वे भाग नहीं पाये। आचार्य ने रामदत्त का हाथ पकड़ कर उस मरे हुए घिनौने चूहे पर रख दिया

और उनके हाथों को अपने हाथों में ले कर चूहे को दबाने सहलाने लगे। चूहा जिन्दा होने लगा। तब आचार्य ने कहा कि नहीं इसका जिन्दा होना ठीक नहीं। इसे मार दो पर इसे मारने का एक खास तरीका है। रामदत्त आँखें मूँद लेते हैं। कसमसाते रहते हैं। शर्म और उत्तेजना से ठंडे पड़ जाते हैं। डर से काँपते रहते हैं और उनकी धोती और लँगोट उतर जाती है। रामदत्त पूरी ताकत से चीखने को होते हैं पर अनुभवी आचार्य का हाथ पहले ही उनके मुँह पर है। चीख भीतर ही घुट कर रह जाती है। थोड़ी देर बाद लगभग बेहोश रामदत्त को आचार्य एक तेज धार वाला लम्बा चाकू दिखाते हैं कि किसी से कुछ कहा तो इसी से तुम्हें काट काट कर गंगा की मछलियों को खिला देंगे। वे बाहर निकले तो उन्हें कहीं बगल से एक उपाचार्य की हँसी सुनाई दी कि आचार्य ने आज इसे भी गूढ़ज्ञान दे दिया। उस पूरी रात रामदत्त बार-बार बेहोश होते रहे। बुखार और अर्द्धबेहोशी में मर जाउँगा आचार्य जी या चूहा चूहा जैसा कुछ बुदबुदाते रहे। मर जाउँगा आचार्य जी को आचार्य जी के प्रति उनका प्रेम और चूहा को बुखार से उपजा डर मान लिया गया। आचार्य मुस्कराते रहे। उनके साथ कुछ बच्चे भी मुस्कराते रहे। दूसरे कुछ बच्चे डरे सहमे रहे। उनकी रही सही मुस्कानें भी गायब हो गयीं। ऐसे ही कई दिनों तक चलता रहा। चाकू वाले आचार्य जी न सिर्फ रामदत्त के सपनों में आते रहे बल्कि हकीकत में भी रोज आ कर उनका हालचाल लेते रहे। रामदत्त दिन रात डरे सहमे रहते। रात में सोते-सोते चौंक पड़ते। उन्हें सपने में भी अपने साथ वही गन्दा काम दोहराया जाता दिखता, चाकू की उसी चमकती हुई नोंक पर। वे बार-बार चाकू का अपने भीतर जाना महसूस करते और जड़ हो जाते।

जल्दी ही वे ठीक हो गये पर किशोर दिनों का चमकदार उल्लास उनके चेहरे से गायब हो गया। उनकी चंचलता, दुनिया की हर चीज को अपने तरीके से जानने समझने की उत्सुकता सब गायब हो गयी। आँखों की चमक गायब हो गयी। उसकी जगह पर आँखों के नीचे एक धुँधला स्याह अँधेरा आ बैठा। पहले मस्ती और बेफिक्री की वजह से वे पैर कहीं और रखते थे तो पैर कहीं और पड़ता था, अब डर संशय और आत्महीनता की वजह से पैर कहीं और रखते हैं तो पैर कहीं और पड़ता है। एक ठंडा अनमनापन, उदासी और अपने आप में ही खोए रहने ने उन्हें उनके दोस्तों से भी काट दिया। वे हमेशा इस बात से डरे रहते कि जो कुछ उनके साथ हुआ इस बात का उनके किसी दोस्त को पता न चल जाये। नहीं तो सब दोस्त उनसे दूर हो जायेंगे, उनसे घृणा करेंगे, उनका मजाक बनाएँगे। एक चुप्पी उनके चेहरे पर स्थायी छाया की शक्ल में जमा हो रही थी। ये चुप्पी कभी चिड़चिड़ेपन के साथ टूटती तो कभी वीतरागी भाव से। दोस्तों के खुद से दूर हो जाने का डर या अपना मजाक उड़ाने का डर उनके ऊपर कुछ इस कदर हावी हो गया कि वे खुद ही सबसे दूर हो गये। कोई उनकी तरफ देख कर मुस्कराता तो रामदत्त को उसका चेहरा टेढ़ा दिखाई पड़ता। उन्हें लगता कि शायद वह जान गया है कि उस दिन उनके साथ क्या हुआ था।

दोस्तों से कट जाने के बाद अकेले पड़ गये रामदत्त ने अपने आसपास की दुनिया को नये सिरे से पहचानना शुरू किया ही था कि वही घटना फिर से दुहरायी गयी। इस बार उन्हें बुखार नहीं आया। अपने आप को खत्म कर लेने की इच्छा आयी। यह इच्छा क्षणिक थी जीवन से प्यार इस पर हावी रहा। पर जब वही घटना उनके साथ बार बार दुहरायी जाने लगी और कभी-कभी एक उपाचार्य ने भी उन्हें बुलाना शुरू कर दिया तो जान देने की उनकी इच्छा बलवान होती चली गयी। जीवन का मोह खत्म होता गया और इस खत्म होते मोह के बीच उन्होंने जाना कि यह दारूण नरक भुगतने वाले वे अकेले नहीं थे।

उनके जैसे और भी कई थे जो चुपचाप इस यातना से गुजर रहे थे। उनका आत्मविश्वास खत्म हो गया था। वे अकेले पड़ रहे थे। वे अपने से ही जूझ रहे थे और हार रहे थे। पर कुछ उन चीजों के अभ्यस्त भी हो रहे थे। कुछ इसका बदला दूसरे बच्चों से निकालने की कोशिश में थे। एक बार इस पूरे यथार्थ से परिचित हो जाने के बाद रामदत्त चुपचाप घर भाग आये। पर बहुत कोशिश के बाद भी उन्हें वे शब्द नहीं मिले जिनमें वे अपने पिता को अपने साथ घट रहीं घटनाओं के बारे में बता पाते। नतीजे में पिता उन्हें दूसरे दिन फिर से आश्रम छोड़ आये। शाम को उपाचार्य ने उन्हें बेंतों से मारा और रात को पैर दबाने के लिये बुलाया। इसके बाद अब जीने को क्या बचा है, रामदत्त ने सोचा।

एक बार तय कर लेने के बाद जान देने का जो सबसे आसान तरीका उन्हें समझ में आया वह गंगा में डूब जाने का था। रामदत्त के मन में अपनी माँ की बहुत धुँधली सी स्मृति थी। फिर भी उन्होंने माँ के न होने को गहरे महसूस किया। उन्हें लगा अगर माँ होती तो सब कुछ उनके बिना बताये भी जान जाती। माँ को सब कुछ सपने में दिखाई पड़ जाता। उन्हें पिता का ख्याल आया और इसी के साथ गुस्सा भी कि वे यहाँ रामदत्त को इन राक्षसों के बीच में छोड़ गये थे। उन्हें गाँव के अपने साथ के दूसरे बच्चे याद आये जो पढ़लिख भले ही न रहे हों पर घर में तो होंगे। गाँव के उनके हमउम्र दोस्तों का भी अपना नरक हो सकता था यह सोचने के लिये रामदत्त अभी छोटे थे। अपने दोस्तों से कटने के बाद गंगा का किनारा उन्हें वैसे भी अच्छा लगने लगा था। कई बार रामदत्त को इस वजह से भी डाँट पड़ी थी कि हमेशा गंगा किनारे क्या करते रहते हो पर जब भी उन्हें मौका मिलता गंगा की तरफ भाग निकलते। वहाँ उन्हें सुकून मिलता, जम कर उदास होने और रोने के लिये एकांत मिलता ओर कई बार पल भर के लिये ही सही पर सब कुछ भूल जाने का मौका भी। तो जब रामदत्त ने मरने का तय किया तो गंगा की गोद के सिवा कुछ और उनकी समझ में नहीं आया।

वे धीरे धीरे पानी में उतरते गये पर जैसे-जैसे वे भीतर जाते गये जान देने का उनका हौसला डगमगाता गया। जब पानी ठुड्डी तक पहुँच गया तो उन्हें मौत का भयानक चेहरा दिखाई पड़ा। वे वहीं जड़ हो गये। पल भर में ही रामदत्त ने वहाँ से लौटना चाहा पर पैरों के नीचे की नरम बालू उनको अपनी तरफ बुला रही थी। पानी का बहाव और दबाव उनके खिलाफ था। अपनी पूरी कोशिश के बाद भी वे किनारे की तरफ एक भी कदम नहीं बढ़ा पाये बल्कि बाहर निकलने की घबरायी हुई कोशिश में खड़े रहने का भी सन्तुलन बिगड़ गया और वे गहरे में पहुँच गये। अपनी लम्बाई से ज्यादा गहराई में। पानी से लड़ने की बेतरतीब कोशिश में उन्होंने पानी के ऊपर आना चाहा और पता नहीं उनकी कोशिश से या पानी के खेल से ही उनका सिर जरा सा बाहर निकला। वे पानी में थे। पैर के नीचे भी पानी ही था। ऊपर आसमान था। उस एक पल में उन्हें फिर से माँ की याद आयी। वे अपनी पूरी ताकत से अनजाने ही पुकार उठे 'अम्माँ'। और इसी के साथ वे पानी में समा गये। उनके खुले मुँह में पानी भरने लगा।

जब रामदत्त को होश आया तो उन्होंने पाया कि कोई उनका पेट दबा दबा कर पेट का पानी निकालने की कोशिश कर रहा है। रामदत्त ने आँखें खोली तो यह उनका इसी शरीर में नया जन्म था जिसे अपने मजबूत मेहनती शरीर के सहारे एक युवती ने पैदा किया था। रामदत्त ने आँखें खोल कर उसे देखा और आँखें बन्द कर ली। रामदत्त पल भर के लिये सब कुछ भूल गये। वे सोचने लगे कि वे यहाँ कैसे पहुँचे। तब उन्हें पिछला सब कुछ एक झटके में याद आता चला गया। इस क्षण उन्हें वो सारी बातें किसी बुरे सपने की तरह लगीं। पल भर में वे दुबारा सब कुछ उसी तरह से भूल गये जैसे सपना स्मृतियों से धुल-पुँछ जाता है। उन्हें एक दूसरी छवि दिखी जो अब थोड़ी निश्चिन्त सी उनके ऊपर झुकी थी। वो खुश थी कि उसकी मेहनत बेकार नहीं गयी थी। तभी उस लड़की ने, जिसका नाम मैना था और जिसे बाद के दिनों में रामदत्त ने अपने पौराणिक ज्ञान के खुमार में मत्स्यगन्धा नाम दिया था, उनसे पूछा कि पंडित हो। रामदत्त की समझ में ही नहीं आया कि वह क्या जवाब दें। तब उसने बताया कि जब उसने रामदत्त को पकड़ने के लिये हाथ बढ़ाया तो बस उनकी चुटिया ही हाथ में आ पायी। इस पर रामदत्त ने अपनी चोटी की जड़ों में एक मीठा सा दर्द महसूस किया जो सारी जिंदगी उनकी चोटी में बना रहने वाला था। वे शरमा गये।

उनका शरीर बेदम हो गया था। हाथ पैर भारी हो गये थे जैसे उन पर किसी ने गीली मिट्टी के लोंदे छोप दिए हों। फिर भी उन्होंने उठने की कोशिश की तो लड़की ने कहा कि थोड़ी देर लेटे रहो पंडित जी, तुम्हें मेरा कहा मानना चाहिए। रामदत्त ने चुपचाप आँखें मूँद ली और कहा कि तुम जाओ मैं चला जाउँगा। मैं अब ठीक हूँ। लड़की ने कहा कि ये तो बताओ कि तुम डूब कैसे रहे थे तो घबराये हुए रामदत्त ने जवाब दिया कि बाद में बताउँगा। लड़की हँसने लगी। उसने कहा कि तुम सोचते हो कि मैं बाद में भी तुमसे मिलूँगी। रामदत्त हाँ नहीं हाँ करके रह गये। वे कई वजहों से शरमा रहे थे। वे खुश थे कि बच गये थे पर इस बात पर शरमा रहे थे कि उन्हें एक लड़की ने बचाया था। इससे भी ज्यादा शर्म उन्हें इस बात पर आ रही थी कि एक लड़की उनके इतने पास बैठ कर उन्हें देखती रही थी। इस शर्माने में थोड़ा अच्छा

लगने का भाव भी शामिल था कि उसने उनका पेट दबाया था और चोटी पकड़ कर पानी से खींच लाई थी। रामदत्त ने दोबारा आँखें खोली तो पाया कि लड़की एकटक उन्हीं की तरफ देख रही है। उन्होंने झटपट आँखें मूँद ली और कहा कि तुम जाओ। लड़की ने कहा कि ठीक है पंडित जी मैं जाती हूँ। रामदत्त ने दूर जाते हुए कदमों की आवाज सुनी और आँखें खोल लीं। उन्हें चोटी की जड़ों में मीठा-मीठा दर्द महसूस हो रहा था। उन्होंने चोटी सहलायी और उठ बैठे। और पिछले दो तीन सालों के अभ्यास की वजह से स्वाभाविक रूप से आलती-पालथी मार कर बैठ गये। बैठते ही उनकी नाक ने एक परिचित-सी गन्ध महसूस की। जब रामदत्त को लगा कि गन्ध पीछे की तरफ से आ रही है तो झट से पीछे की तरफ घूम गये। पीछे वही मत्स्यगन्धा मुस्कराती हुई खड़ी थी। उन्होंने चिढ़कर कहा कि आप जाती क्यों नहीं। रामदत्त का पूरा शरीर अजीब तरीके से टूट रहा था पर वे उठे और बिना लड़की की तरफ देखे या उससे कुछ कहे सुने आश्रम की तरफ चल पड़े। आश्रम पहुँचने तक उन्होंने पीछे मुड़ कर एक बार भी नहीं देखा पर गन्ध जस की तस बनी रही और उनका पीछा करती रही।

आश्रम में विद्यार्थियों को साबुन लगाने की मनाही थी। आचार्य जी का मानना था कि सुगन्धित चीजों से वासनाएँ भड़कती हैं इसलिये विद्यार्थियों को उनसे बच कर रहना चाहिए। आश्रम में वह गंगा की बालू मल-मल कर देर तक नहाते रहे। जब उन्होंने सोचा कि अब तक गन्ध चली गयी होगी तभी उन्हें लगा कि मत्स्यगन्धा उनके पीछे ही खड़ी है। उनसे इतनी सट कर कि वह उसकी साँसों की गर्मी को भी अपनी गर्दन पर महसूस कर सकते हैं। रामदत्त को लगा कि अगर वह पलटे तो जरूर उसके चेहरे पर पलटेंगे। वे पलटे पर मत्स्यगन्धा कहीं नहीं थी। सिर्फ उसकी महक थी। उनकी चोटी में दुबारा दर्द होने लगा। चोटी सहलाते हुए रामदत्त ने सोचा कि ऐसा क्यों हो रहा है पर कुछ समझ नहीं पाये। वे एक साथ ही इस गन्ध से बचना भी चाह रहे थे और यह भी चाह रहे थे कि यह गन्ध उनके आसपास बनी रहे। कहीं वह चुड़ैल तो नहीं थी, अपनी चोटी को सहलाते हुए रामदत्त ने सोचा।

किशोर रामदत्त ने पहली बार किसी लड़की को इतना करीब से महसूस किया था। वे बार बार सोचते उसके बारे में। उसने उन्हें डूबते देखा होगा, दौड़ कर आयी होगी। उन्हें छुआ होगा पर इसके बाद वह कुछ भी नहीं सोच पाते और उनकी चोटी दर्द करने लगती। वह चोटी सहलाते हुए बैठे रहते। यूँ तो रोज ही सुबह वह नहाने के लिये गंगा की तरफ जाते थे पर उन्हें मत्स्यगन्धा नहीं दिखी। तीसरे दिन शाम उसे देखने की ललक आखिरकार उन्हें गंगा की तरफ अकेले खींच ही ले गयी। बहुत देर तक इधर उधर ताकने खोजने के बाद जब वह निराश हो कर लौटने लगे तो वह सामने की तरफ से आती हुई दिखी। वह रामदत्त को देख कर मुस्करायी तो वह शरमा गये। उनकी चाल धीमी हो गयी पर उन्होंने जाहिर किया कि जैसे उन्होंने उसे देखा ही नहीं। रामदत्त प्रकृति का नजारा लेते हुए धीरे धीरे बढ़ते रहे। जैसे ही उन्हें लगा कि वह नहीं रूकी और चलती चली गयी तो तुरन्त पलट गये और बिना किसी कोशिश के उनकी नजरें उस साँवली सलोनी लड़की पर टिक गयीं।

लड़की ने कहा घोंचू पंडित जब मुझी को खोज रहे हो तो इतनी नौटंकी क्यों कर रहे हो। रामदत्त हकबका गये। जवाब में उन्होंने कहा कि हाँ, हाँ, नहीं, नहीं। लड़की हँसने लगी और बोली पहले तय कर लो कि हाँ कहना है कि नहीं कहना है। रामदत्त लजा गये तो वह बोली उस दिन डूब कैसे रहे थे ? तैरना नहीं आता ? रामदत्त ने मुंडी हिला कर कहा हाँ, हाँ नहीं, नहीं। डर लगता है ? हाँ, इस मुलाकात में ऐसा कुछ खास नहीं है कि याद आये पर याद का क्या है उसके अपने ही तर्क होते हैं। इस मुलाकात के बाद रामदत्त अक्सर गंगा किनारे जाने लगे। लड़की रामदत्त से दो तीन साल बड़ी थी और उसका नाम मैना था। उसका घर वहीं मछुआरों की बस्ती में था। उसके पिता मछली पकड़ने का और माँ मछली बेचने का काम करती थी। जब रामदत्त लड़की के साथ होते तो अमूमन वही बोलती। रामदत्त बस हूँ हाँ करते। पर पिछले कुछ दिनों के घटनाक्रम ने उनका जो आत्मविश्वास पूरी तरह से खंडित कर दिया था वह फिर से पनपने लगा। इस बीच मैना ने रामदत्त के साथ तैरते हुए उन्हें तैरने के गुर बताये। उसने रामदत्त को घुमरी नाम का एक पानी पर तैरने वाला कीड़ा जिन्दा निगलने के लिये विवश किया जिसके बारे में मैना का भरोसा था कि उसे निगलने के बाद तैरना अपने आप ही आ जाता है। फिलहाल चाहे मैना के साथ का असर हो या घुमरी निगलने का कि वह उस कीड़े की तरह ही पानी पर तैरने लगे। रामदत्त के चेहरे की चमक दोबारा लौटने लगी। आश्रम में उन्हें कई बार सजा मिली फिर भी मौका लगते ही वह गंगा किनारे भागते। शाम के झुटपुट अँधेरे में वे साथ साथ तैरते, शर्त लगाते कि कौन आगे जायेगा, चुहलें करते बालू पर एक दूसरे को खदेड़ते पकड़ते और गुत्थमगुत्था हो जाते। हालाँकि दोनों में से किसी ने नहीं कहा था कि उनके बीच प्यार जैसा कुछ है इसके बावजूद दोनों ने एक दूसरे को तन मन से महसूसना शुरू कर दिया था। इसी क्रम में दोनों ने धीरे धीरे एक दूसरे को पहचाना और रामदत्त के मन में अपने शरीर के घृणित होने को ले कर जो एक ग्रन्थि बन गयी थी उससे वह मुक्त होने की तरफ बढ़े। जब रात के अँधेरे में गंगा की बालू पर दोनों एक हुए तो उसके बाद रामदत्त ने तुरन्त कसम खाई कि अब शादी करेंगे तो मैना से ही करेंगे। रामदत्त ने अपने इस दृढ़निश्चय के बारे में मैना को बताया तो उसने हँसी में उड़ा दिया। बोली पंडित जात से शादी कौन करेगा। वहाँ जा कर मछली की जगह कोंहड़े की सब्जी खानी पड़ेगी। ऊपर से तुम्हारी ये मोटी-सी चुटिया, मुझे तो तुम्हारे साथ चलते भी शर्म आयेगी। मैं तो किसी मछेरे से ही शादी करूँगी। तुम झूठ मूठ का सपना मत देखो। आश्रम वापस लौटते समय रामदत्त ने अपनी चोटी कटाने के बारे में सोचा। एक के बाद एक कई बहाने आये पर सबको उन्होंने खारिज कर दिया। असल बात यह थी कि वह खुद बिना चोटी के अपनी कोई कल्पना नहीं कर पाये। एक चोटी के कट जाते ही उनकी जाति चली जानी थी, कुछ इसी तरह के संस्कार उनके मन में बसे हुए थे। अपनी जाति की श्रेष्ठता का ख्याल तो ऐसे ही उनके खून में बसा हुआ था, ऊपर से उनकी आश्रम की पिछले पाँच-छह सालों की पढ़ाई... कि दुनिया ब्राह्मणों के ही इर्द-गिर्द घूमती है। या नहीं घूमती तो घूमनी चाहिए, कि सूर्य पृथ्वी की परिक्रमा करने के साथ-साथ ब्राह्मणों की भी परिक्रमा करते हैं। और ब्राह्मणों के कुछ धर्म और संस्कार होते हैं। चोटी, चन्दन और जनेऊ जैसे संस्कार उन्हें अपवित्र दुनिया के बीच में पवित्र बनाए रखते हैं। वे उस किस्से की पिनक में खोए थे जो आश्रम में उन्हें कई बार सुनाया जा चुका था कि पहले ब्राह्मणों की धोतियाँ आकाश में सूखतीं थीं। वे नहा कर धोतियाँ ऊपर उछाल देते और धोतियाँ सूखने के बाद तह हो कर नीचे आ जातीं। ब्राह्मणों की पवित्राता और जलाल अब पहले जैसा नहीं बचा है इसलिये अब उन्हें अपनी धोतियाँ जमीन पर ही सुखानी पड़ती हैं। पंडित रामदत्त ने ये किस्सा सुनने के कुछ दिनों बाद ही तय कर लिया था कि वे भी अपनी धोती आकाश में सुखाएँगे।इस पिनक के दूसरी तरफ मैना थी जो कई बार अपनी जीभ पर किसी मिठाई का टुकड़ा, कोई फल या और कोई चीज रख लेती और कहती, खाओगे घोंचू पंडित और रामदत्त खाने के लिये मरे रहते। वह अँजुरी में पानी भर कर पूछती, घोंचू पंडित प्यास तो नहीं लगी है और रामदत्त का गला प्यास से सूखने लगता। रामदत्त उसकी अँजुरी से पानी पीते और मैना की उँगलियाँ उनके मुँह में आ जातीं। वह पूछती और प्यास लगी है पंडित तो रामदत्त झट से मुंडी हिला देते। वह अंजुरी में पानी भरती और बदमाशी से अपने शरीर के किसी हिस्से पर गिरा लेती। कहती, थोड़ा सा ही तो पानी था, गिर गया राम जी। जहाँ गिरा है वहीं से पी लो और रामदत्त पीने लगते। सामने गंगा लहलहाती रहती पर ऐसे क्षणों में गंगा का पानी खारा हो जाता।

ऐसे ही एक दिन उसने अपनी जीभ पर रख कर पंडित को मछलियाँ भी खिलायीं। वह एक-एक टुकड़ा अपनी जीभ पर रखती जाती और रामदत्त खाते जाते। ऐसे तो पंडित रामदत्त जहर भी खा सकते थे। वही मछलियों की गन्ध तो वह मैना के शरीर में महसूस करते थे जो उन्हें बार-बार मैना की तरफ खींच ले आती थी। एक तीखी और उत्तेजित करने वाली गन्ध। हवा में बस कर अपनी तरफ खींच कर अपने में मिला लेने वाली गन्ध। ऐसे क्षणों में वह खुद को महर्षि पराशर और मैना को योजनगन्धा सत्यवती समझने लगते। पर यही पूरा सच नहीं था।

जिस दिन रामदत्त ने मछलियाँ खायीं लौटते हुए रास्ते में जम कर उल्टियाँ की। अपना पतित होना महसूस किया। ऐसा हमेशा होता था। रामदत्त मैना के सामने अपना ब्राह्मण होना या उच्चता के सारे संस्कार भूल जाते थे पर आश्रम की तरफ बढ़ते ही उन्हें फिर से अपना ब्राह्मण होना याद आने लगता। धोती आकाश में सुखाने का संकल्प याद आने लगता। चोटी, चन्दन और जनेऊ याद आने लगते। रटे हुए मंत्र याद आने लगते और पुराणों में पढ़ी गयी पतित ब्राह्मणों की अनेक कथाएँ याद

आने लगतीं। पर और भी कुछ उल्टा पुल्टा हो गया था रामदत्त के भीतर।

पुराणों को पढ़ते हुए श्रृंगार और काम के प्रसंगों पर रामदत्त ठहर-ठहर जाते। वे प्रसंग उन्हें बिना किसी अतिरिक्त प्रयास के याद हो जाते। संस्कृत के ऐसे बहुत सारे श्लोक इस बीच रामदत्त को याद हो गये थे जिनमें प्रेम, काम या श्रृंगारिक अठखेलियों का चित्राण होता था। ऐसे प्रसंग पुराणों में भरे हुए थे। पर जब वह मैना के मछलियाँ मारने के पुश्तैनी पेशे के बारे में सोचते तो उन्हें घिन आने लगती। आश्रम में पढ़ाई के दौरान जिस जीवन के लिये उन्हें तैयार किया जा रहा था वह ज्यादा श्रेष्ठ और पवित्र लगता। मैना की जीभ पर मछलियाँ उन्हें अमृत लगतीं पर मछलियाँ मारने की कल्पना ही उन्हें भयानक और घृणित लगती।

एक बार रामदत्त ने वैसे ही मैना को भाग चलने का प्रस्ताव किया था। रामदत्त ने कहा कि मैं बप्पा से कह दूँगा कि तुम अनाथ लड़की हो। तुम्हारे पिता वहीं आश्रम के बगल के एक मन्दिर में पुजारी थे। वे अब जीवित नहीं हैं। इतने पर ही मैना गुस्से में बोली, पंडित रामदत्त मेरे पिता जीवित हैं और मुझे पंडित नहीं बनना है। तुम्हें बनना हो तो मछुवारे बन जाओ। अभी मेरे साथ चलो। मैं तुमको अपने पिता के पास ले चलूँगी। तुम्हें झूठ भी नहीं बोलना पड़ेगा। तुम आराम से बता देना कि तुम मछुवारे नहीं पंडित हो। रामदत्त मैना से बहस करने लगे, जैसे कि वह तैयार हो जाती तो सब कुछ इतना आसान ही होता।रामदत्त को अपना भविष्य का जीवन दिखा। मिलने वाला सम्मान और प्रतिष्ठा दिखी और अपने भीतर के सदियों पुराने श्रेष्ठता के खयाल दिखे। उन्हें मैना पुराणों की उन अप्सराओं की तरह लगी जो दोषियों को पतित करने की ताक में ही बनी रहती थीं। उन्हें यह भी याद आया कि मैना ने उन्हें नया जीवन दिया था। मैना न होती तो रामदत्त भी न होते पर जल्दी ही इस ख्याल को उन्होंने यह सोच कर खारिज कर दिया था कि अगर उन्हें बचना ही होता तो तब कोई और होता।

रामदत्त मैना को लेकर दो अतिरेकी स्थितियों के शिकार थे। एक स्थिति में सब कुछ होता था, मैना नहीं होती थी या कई बार उन्हें पतित करने के एक कारक के रूप में होती थी। जबकि दूसरी स्थिति में सिर्फ मैना होती थी। दुनिया नहीं होती थी। उस दिन मैना ने उन्हें जदगी का एक दूसरा विकल्प सुझाया था। जिसमें मैना जीवन भर के लिये उनकी हो जाती पर रामदत्त को विकल्प मंजूर नहीं था।

सब कुछ ऐसे चलता रहा और एक दिन वे मैना को छोड़ कर घर चले आये। बिना मैना को बताये। उनके अन्दर इतनी हिम्मत नहीं थी कि मैना की आँखों में आँखें डाल कर कह सकते कि अब मैं तुमसे नहीं मिलूँगा क्योंकि तुम मुझे पतित कर रही हो। इसके उलट वे जानते थे कि जब जिस क्षण वे मैना को यह बताने जायेंगे उनका लौटना स्थगित हो जायेगा। रामदत्त के भीतर इतनी हिम्मत नहीं थी कि मैना से अपने ब्राह्मणत्व की बात भी कर पाते जो मैना और उनके बीच द्वन्द्व पैदा कर रहा था सो वे भाग गये। पर उस मैना से भागना इतना आसान था क्या जिसने उन्हें जीभ पर रख कर मछलियाँ खिलायी थीं। जिसकी गन्ध उन्हें पागल करती थी और रामदत्त के भीतर कहीं धँस कर गायब हो गयी थी। उसी तरह जैसे मछलियों के भीतर उनकी गन्ध रहती है पर जिसके बारे मे उन्हें खुद शायद ही पता होता हो।

घर लौट कर रामदत्त ने तय किया कि अब मैना से कभी नहीं मिलेंगे और जीवन को उसी तरीके से जियेंगे जिस तरह जीने के लिये वे पैदा हुए हैं। पर यह सवाल भी उनके भीतर बना रहा कि क्या वह धोखा करने के लिये पैदा हुए हैं अगर नहीं तो छुप करके भाग आकर उन्होंने मैना के साथ क्या किया था। यह शायद मैना ही थी जिसने उनके भीतर बैठे हुए धीरे धीरे उन्हें यह बताया था कि जिस ब्राह्मणत्व के खुमार में वे खोये हुए हैं और जो जीवन वह जी रहे हैं वह ठगी के अलावा और कुछ भी नहीं है भले ही उसे कितना भी बड़ा नाम क्यों न दिया जाये। यह बात अलग है कि यह ज्ञान होते ही वह उसी ठगी में ही जम कर डूब गये थे।

जब रामदत्त के जीवन में पार्वती आयीं, सुन्दर सुकोमल पार्वती, उन्हें लगा कि अब मैना को भुलाना आसान हो जायेगा। और यह कोई झूठ भी नहीं था। अपनी समझ में वह मैना को भूल ही गये। उनकी चोटी का दर्द जब तब उभर आता था पर वह उसकी वजह भूल गये। और गन्ध तो...

वे नहीं, मछलियाँ खायेंगी उन्हें सुबह जब रामदत्त उठे तो उन्हें भी अपने शरीर में मछलियों की गन्ध महसूस हुई। रात भर में उनका शरीर और थुलथुल हो गया था। आँखें मटमैली हो गयी थीं। चाल में वही पुराना आत्मविश्वासहीन बेढंगापन। वे अपने शरीर पर ही नहीं शरीर के भीतर भी एक सिकुड़न महसूस कर रहे थे। उनके लिये यह जानना ही उनको बदल देने के लिये काफी था कि मैना को वह अपने भीतर से कभी नहीं निकाल पाये। उनकी समझ में वेदी पर मछली या जीभ बनाना एक खेल भर ही था और कुछ नहीं। रामदत्त नहीं जान पाये पर वह हमेशा बनी रही उनके भीतर। एक हत्यारी गन्ध की शक्ल में।

उन्हें अपनी खड़ाऊ खोजने में काफी समय लगा। उन्होंने पाया कि उनकी आँखों की रोशनी रात भर में ही धुँधली हो गयी थी। और थोड़ा दूर जा कर जब वे लघुशंका के लिये बैठे तो उन्होंने पाया कि उनका लिंग कुछ उसी तरह सूख कर ऐंठ गया था जैसे कोई मछली सूख कर ऐंठ जाती है। वे घबरा गये। घबराए हुए रामदत्त की समझ में कुछ और नहीं आया तो उन्होंने झाड़ू उठायी और दुआरे पर झाड़ू लगाने लगे। इसी तरह जानवरों की सानी-पानी की, गोबर फेंका। मेहनत से दूर भागने वाले रामदत्त ने जो भी काम सामने पड़ा देखा कर डाला। जब तक पार्वती उठीं सुबह के सारे काम रामदत्त ने निपटा डाले थे। पूरे दिन वह पार्वती के सामने पड़ने से बचने की कोशिश करते रहे, जिससे मछलियों की गन्ध पार्वती को परेशान न कर सके। रात में पार्वती और रामदत्त के बिस्तर अलग-अलग हो गये। एक दूसरे से दूर।

अगले दिन ही पता नहीं कैसे पर यह बात चारों तरफ फेल गयी कि पंडित रामदत्त त्रिपाठी के शरीर से मछलियों की गन्ध आती है। अचानक ढेरों लोगों को याद आया कि यह गन्ध तो उन्हें भी आयी थी पर एकाएक वह कुछ समझ नहीं पाये इसलिये किसी से कुछ नहीं कहा। इस तरह यह बात रामदत्त के घर से चारों दिशाओं में फेल गयी और जल्दी ही नये रूप में लौटी कि पंडित रामदत्त त्रिपाठी रोज सुबह शाम बिना नागा मछली खाते हैं। इसीलिये हमेशा उनके मुँह से मछली की बास आती रहती है जबकि आश्रम से लौटने के बाद रामदत्त ने मछली को कभी हाथ भी नहीं लगाया था। आस-पास के जिन गाँवों में लोग रामदत्त को सीधे सीधे नहीं जानते थे वहाँ भी उनके मछली खाने की अफवाहें फेल गयी। किसी ने कहा कि वह अपने शरीर में मछली का तेल लगाते हैं तो किसी ने उन्हें गाँव की हाट में अँगोछे से मुँह छुपाये मछली खरीदते देखा था। और तो और कुछ लोगों ने उन्हें शहर के नानवेज होटल में भी मछली भात खाते हुए देख लिया था। तब रामदत्त पैंट कमीज पहने हुए थे और सिर पर टोपी लगाए हुए थे।

अपनी लालच और लायक बेटों वशिष्ठ और विश्वामित्र की वजह से रामदत्त पहले से ही गाँव भर की आँखों में चढ़े हुए थे। ऐसे में मछली वाली अफवाह ने अनेक लोगों को सामूहिक रूप से रामदत्त के बारे में खुलेआम कुछ भी कहने का मौका दे दिया। धीरे धीरे लोग उनसे कटने लगे। साइत वगैरह लोग उनके दरवाजे पर ही आ कर पूछ जाते पर उन्हें अपने दरवाजे पर बुलाने से बचते। साइत भी विवाह, लगन या मुंडन आदि की नहीं, बस ऐसे ही कि बाँस काटना हैं पाँचक तो नहीं लगा है, एकादशी कब पड़ रही है या परसों बहू को घर ले आना ठीक रहेगा या नहीं।

बदले में लोग कुछ सीदा वगैरह दे जाते। किसान कई बार पुआल का गठ्ठर या ताजी तरकारियाँ लाते पर घर बुलाना तो बन्द ही कर दिया था लोगों ने। यह जैसे पूरे गाँव का अघोषित निर्णय था। इसमें वे जातियाँ भी शामिल थीं जो घोषित रूप से मछलियाँ खाती थीं, चिड़ियों का शिकार करती थीं, खरगोश खा जाती थीं या मोरों के अंडे हजम कर जाती थीं। उनके लिये भी किसी पंडित का मछलियाँ खाना धर्मविरूद्ध था। और अब पंडित रामदत्त त्रिपाठी इस लायक नहीं रह गये थे कि लोग उनसे धार्मिक कर्मकांड करवाएँ। बदले में लोगों ने बगल के गाँव के लंबोदर पाँड़े के पास जाना शुरू कर दिया था जो इन दिनों आश्चर्यजनक रूप से निस्पृह हो गये थे। वे खाली होने पर इस बिना पर भी पूजा सुनाने चले जाते कि कोई उन्हें दो जून का सीदा दे दे और एक जून भरपेट भोजन करा दे। एक बार भरपेट भोजन कर लेने के बाद वैसे भी उन्हें दो-तीन दिनों तक भोजन की जरूरत नहीं पड़ती थी।

लंबोदर पाँड़े ने लोगों को एक किस्सा सुनाया जिसके अनुसार पूर्वजन्म में पंडित रामदत्त मछुआरों की बस्ती में कुत्ते थे, जो प्रयाग में गंगा किनारे बसी हुई थी। वहीं थोड़ी दूर पर प्रभु हनुमान जी का एक मन्दिर भी था जिसमें भक्तगण दिन रात हनुमान जी की महिमा का गान करते रहते थे। इस तरह कुत्ते के कान में हमेशा प्रभु का

नाम पड़ता रहता था। इसलिये यह बिना किसी पुण्य के भी इस जन्म में पंडित रामदत्त बना। पर संस्कारवश इसकी पूर्वजन्म की कुत्ते की प्रवृत्ति अभी तक नहीं गयी। न ही पिछले जन्म में खाई मछलियों का स्वाद ही इसे भूला। इसी से इस जन्म में भी यह मछली के स्वाद का दिवाना बना फिरता है। अगले जन्म में यह फिर कुत्ते के रूप में जन्म लेगा। यही कर्म का विधान है। लंबोदर पाँड़े रस ले ले कर यह किस्सा सुनाते और अपने लम्बे चौड़े उदरों पर हाथ फेरते रहते।

दूसरी तरफ रामदत्त के बेटों के नाम भले ही वशिष्ठ और विश्वामित्र थे पर इन नामों के मान्य रूपों के साथ उनका कोई रिश्ता बन सकने की संभावना कब की खत्म हो गयी थी। वे पुराणों में वर्णित उन राक्षसों के रास्ते पर चल रहे थे जो अकारण ही बुरा करते फिरते थे। वशिष्ठ और विश्वामित्र बगल में देशी पिस्तौल और चाकू रखते और बाहर निकल जाते। गाय भैंस बकरी चराने वाली बच्चियाँ और घास छीलने वाली औरतें उनका सबसे आसान शिकार बनतीं। दोनों ही हरी घास के लोभ में दूर तक चली जातीं। घसवारिनें तो खेतों के भीतर तक चलीं जातीं। दोनों अपने मुँह पर कस कर अँगोछा बाँधे रखते। वे चीखतीं पर हाथ में पिस्तौल या चाकू देख कर शान्त पड़ जातीं। कभी वे प्रतिरोध भी करतीं तो उनका प्रतिरोध एक डरा हुआ प्रतिरोध होता।

एक पिस्तौल या चाकू लिये खड़ा रहता और दूसरा बलात्कार को अंजाम देता। फिर यह क्रम बदल जाता। ताकत की हिंसक खुशी से लबालब दोनों बाद में जबरदस्ती के साथ साथ जेवर भी लूटने लगे। जो ज्यादा से ज्यादा पैरों के बिछुवे, नाक की कील या कानों की बाली बुंदी तक ही सीमित होता था। जिस इलाके में वे वैसा करते अगले कई दिनों तक उधर का रूख नहीं करते। बाद में जब उन्होंने जाना कि औरतें अपने ऊपर की गयी यौनिक हिंसा तो छुपा ले जाती हैं क्योंकि उन्हें अपने घर वालों की प्रतिक्रिया पर भरोसा नहीं होता पर बिछुवे जैसा मामूली जेवर गुम हो जाने की स्थिति में भी घर पर बताना जरूरी हो जाता था। इस स्थिति के बारे में पता चलते ही दोनों भाइयों ने जेवर लूटना बन्द कर दिया। वे जेवर पर तभी हाथ डालते जब वह सोने का होता। ऐसा मौका उनके हाथ सिर्फ एक बार आया जब एक नयी बहू कानों में सोने के झुमके पहने पहने ही घास छीलने आ गयी थी।

वशिष्ठ और विश्वामित्र के बारे में गाँव के सारे लोग जान गये थे सिर्फ रामदत्त और पार्वती को छोड़ कर। इसकी पहली वजह तो यही थी कि रामदत्त और पार्वती का गाँव के साथ सहज संपर्क सीमित होता गया था पर इसकी एक दूसरी वजह भी है। गाँवों में लोग अपने घरों को छोड़ कर पूरे गाँव के बारे में जानते हैं। किसकी लड़की किसके साथ फँसी है, कौन किसके यहाँ उठ बैठ रहा है, कौन कलिया मछरी खा रहा है, कौन शराब सिगरेट पी रहा है, किसकी बहू या बेटी साल भर से मायके या ससुराल नहीं गयी, राई रत्ती सब कुछ, एक एक बात। पर वे बेचारे नहीं जानते कि उनके घरों में भी यही सब कुछ हो रहा है। या फिर इसकी एक दूसरी वजह भी हो सकती है कि उन्हें अपने घरों के बारे में भी सब कुछ पता है। पर उनमें इतनी हिम्मत नहीं होती कि वह सीधे सीधे अपनी औलादों से कुछ कहें इसलिये सीधे कुछ कहने की बजाय गाँव के दूसरे लड़के लड़कियों के माध्यम से अपनी बात कहते थे। लड़के लड़कियाँ सुनते और अनजान बन कर वहाँ से हट जाते। उनके माँ-बाप हवा में अस्फुट स्वरों में जाने क्या-क्या बुदबुदाते रह जाते।

बाहर मन बढ़ा तो वशिष्ठ और विश्वामित्र ने अपने गाँव में भी वही सब कुछ करने की ठानी। शुरूआती दो चार मौकों पर वे कामयाब भी रहे पर एक दिन दोनों भोला मुनक्का के नशे में चूर गाँव की पुलिया पर राहजनी करते धर लिये गये। गोहार लगी। चारों तरफ से लोग लाठियाँ ले कर दौड़े। उस दिन वशिष्ठ और विश्वामित्र की जम कर पूजा की गयी। दोनों तमाम टूट फूट के शिकार हो गये। कुछ लोग थाने जाना चाहते थे पर गाँव की इज्जत के नाम पर कुछ बड़े बुजुर्गों के समझाने पर रूक गये। वशिष्ठ और विश्वामित्र महीनों घर में पड़े पड़े हल्दी मट्ठा पीते रहे, तरह तरह की देशी दवाइयाँ खाते रहे। लेप और पुलटिश बाँधते रहे।

विश्वामित्र और वशिष्ठ के बारे में फुसफुसाहटें तो लम्बे समय से चल रही थीं पर एक बार बात सार्वजनिक होने के बाद फुसफुसाहटों की जरूरतें खत्म हो गयीं और खुलेआम उनकी बुराइयाँ की जाने लगीं। बातें पुलिस तक भी पहुँची। इसी के साथ दोनों समय समय पर धरे जाने लगे। इलाके में कोई भी वारदात होती, दोनों उसमें शामिल होते या न होते पर पुलिस उन्हें उठा ले जाती। कुछ दिन उनकी सरकारी आवभगत होती फिर वे छूट जाते। शुरूआत में एक दो बार उन्हें छुड़ाने रामदत्त भी गये पर जब ये रोज रोज का काम हो गया तो उन्होंने जाना बन्द कर दिया। उनकी जगह गाँव के कुछ दूसरे लोगों ने ले ली जो बाकायदा इस गैंग में शामिल हो चुके थे या इस गैंग का फायदा उठा रहे थे। इस गैंग ने जानवर चुराने, घर लूटने, औरतों पर हाथ डालने, राहजनी करने जैसे हर उपलब्ध अपराध किये, वे पकड़े जाते, जमानत पर छूटते और इसके बाद गायब हो जाते। तब कुर्की आती। ऐसे ही दो तीन कुर्कियों के बाद रामदत्त की सारी जमा पूँजी स्वाहा हो गयी। जो थोड़ी-बहुत बचत थी वह भी तेजी से खत्म हो रही थी। जजमानों ने उनके घर की तरफ रूख करना बन्द कर दिया था। रामदत्त ने वशिष्ठ और विश्वामित्र को समझाने और सख्त होने की कोशिश की पर इन बातों का समय बहुत पहले ही बीत गया था। वशिष्ठ ने सीधा सा जवाब दिया कि जो तुम करते हो वह क्या है ? एक तरह की ठगी ही तो। लोगों को डराना या उन्हें झूठे प्रलोभन दे कर उल्लू बनाना और रूपए या सामान ऐंठना गलत नहीं है तो हमारा काम केसे गलत है। रामदत्त चुप हो गये। उनसे बेहतर कौन जानता था कि वे जो काम करते रहे हैं वह है तो ऐसा ही कुछ। भले ही इतने सीधे-सीधे न कहा जा सके या भले ही एक ऐसा ढाँचा बन गया है कि ठगा जाने वाला कई बार खुद ही हाथ जोड़ कर खुद को ठगने का निवेदन करे। वे चुप हो गये। वैसे भी चुप्पी उनके व्यक्तित्व का अभिन्न हिस्सा बनती जा रही थी।

एक दिन गाँव की ही एक औरत को अकेला पा कर दोनों उसके घर में घुस गये। औरत किसी तरह उनके चंगुल से छूट गयी और उसने गोहार मचा दी। दोनों घर भाग आये। उन्होंने रामदत्त से कहा कि कोई आये तो कहना कि दोनों घर में नहीं हैं। बाहर शोर मचा हुआ था उसमें से आवाजें छन छन कर रामदत्त तक पहुँच रही थीं। रामदत्त ने जीवन में शायद पहली बार लाठी उठायी और जब तक दोनों कुछ समझ पाते उन्हें तीन चार लाठियाँ पड़ चुकी थीं। समझ पाते ही वशिष्ठ ने लाठी छीन ली और रामदत्त के ऊपर दनादन लाठियाँ बरसाने लगे। रामदत्त की चीख सुन कर पार्वती दौड़ीं। रामदत्त पर एक के बाद एक लाठी पड़ रही थी। पार्वती की समझ में और कुछ नहीं आया तो वे अरे-अरे करते हुए रामदत्त से लिपट गयीं। बदले में जवान हाथों की एक भरपूर लाठी उनकी पीठ पर पड़ी। पार्वती एक चीख के साथ रामदत्त की बाँहों में झूल गयीं। तब तक गाँव के लोगों का झुंड रामदत्त के दरवाजे पर पहुँच चुका था। दोनों भाग खड़े हुए। कुछ लोग उनके पीछे दौड़े कुछ रामदत्त के पास रूक गये, जहाँ रामदत्त के शरीर से मछली की गन्ध आने की शिकायत करने वाली पार्वती अपनी पूरी ताकत से रामदत्त को जकड़े हुए थीं।

गाँव वालों को सामने देख कर जब रामदत्त ने पार्वती पार्वती पुकारा और खुद को छुड़ाने की कोशिश की तो पार्वती जमीन पर ढेर हो गयीं। वे बेहोश थीं पर उनके चेहरे पर अथाह पीड़ा के निशान थे। रामदत्त उन्हें उठाने लगे तो एक दो लोग और आगे आ गये। पार्वती को बगल में पड़े तख्ते पर लिटा दिया गया। गाँव की कई औरतें रोने लगीं। वे पूरे के पूरे समूह में अपनी पूरी ताकत और इच्छा के साथ वशिष्ठ और विश्वामित्र को शाप देने लगीं। इनमें से अनेक ने बचपन में दोनों के गाल चूमे थे। उनके सिरों पर हाथ फेरा था और उन्हें जी भर प्यार किया था। कइयों ने उन्हें राखी बाँधी थी और कुछ उन दोनों की खूबसूरती और रंग ढंग पर मोहित हुई थीं। कुछ ऐसी भी थीं जिनके साथ दोनों ने समय समय पर जबरदस्ती की थी पर उस समय वे चुप रह गयी थीं। उन सबके भीतर बेपनाह घृणा और क्रोध था। उन सब का गुस्सा सामूहिक रूप से फूट पड़ा था। ऐसा लग रहा था कि पूरे गाँव की सामुहिक अच्छाई, उसकी सम्मिलित ताकत, महक और मधुरता सब मिल कर दोनों को शाप दे रहीं थी।

पार्वती इसके बाद अपने पैरों पर कभी नहीं खड़ी हो पायीं। उनकी कमर के नीचे का हिस्सा मांस के निष्क्रिय लोथड़े में बदल गया। वे पीछे से टेक लगा कर बैठी रहतीं या लेटी रहतीं। ऐसे ही टट्टी पेशाब, खाना पीना सब कुछ। पार्वती को टट्टी पेशाब हो जाती और उन्हें पता नहीं चलता। जब पता चलता तो गालियाँ बकना शुरू कर देतीं। अगले कुछ महीनों में उन्होंने इतनी गालियाँ खोज निकालीं जो दुनिया में कहीं भी एक जगह पर मिल पानी असम्भव थीं। कभी वे अपनी माँ को गालियाँ बकतीं जिन्होंने उन्हें पैदा किया तो कभी अपने पिता को जो उन्हें एक मछरगन्धा के पल्ले बाँध गये। रामदत्त को, जिन्होंने पार्वती को जीवन में कभी किसी तरह का सुख

नहीं दिया और मछलियों की गन्ध में डूबे रहे। वे खुलेआम चिल्लातीं की उन्होंने जाना ही नहीं कि औरत मर्द का रिश्ता क्या होता है। वशिष्ठ और विश्वामित्र को गालियाँ बकतीं कि उन्हें पैदा होते ही मार क्यों नहीं दिया। मार के ऊपर बोरी भर कर नमक रख देतीं और गल जाते दोनों। पार्वती चौबीसों घंटे दोनों का मरना मनाया करतीं। वे चाहतीं कि दोनों को मरता हुआ देख कर मरें। पार्वती के उलट रामदत्त हर बात पर मुस्कराते रहते थे। उन्हें गुस्सा आना ही बन्द हो गया था। उन्होंने स्थितियों के सामने समर्पण कर दिया था और अपने लिये एक दयनीय मुस्कराहट उधार माँग ली थी। लोग उनकी मुस्कराहट को बेशर्मी कहते क्योंकि उनके जीवन में ऐसा कुछ भी नहीं बचा था जिस पर वह मुस्करा सकें। पार्वती बिस्तर पर थीं और बेटे घृणित थे। कहने को पक्का घर था पर उसका सारा सामान एक के बाद एक कुर्कियों में थाने जा चुका था। पार्वती के सारे जेवर बिक चुके थे। जजमानों ने अभिशप्त और पतित मान कर उन्हें छोड़ दिया था। उनके बारे में तमाम अफवाहों को सच मानते हुए ज्यादातर लोगों की राय थी कि उन्होंने जैसा किया था वैसा ही भुगत रहे हैं। कुल मिला कर भूखों मरने की नौबत थी।इसी समय प्रधानी के चुनाव आये। वर्तमान प्रधान को अपनी हालत पतली दिख रही थी। ऐसे में जब वो रामदत्त के घर का दो वोट पक्का करने उनके घर आये तो रामदत्त ने उनके सामने विजय अनुष्ठान का पाँसा फैंका। रामदत्त ने प्रधान को प्रभावित करने के लिये अपने पूरे पुरोहिती कौशल को दाँव पर लगा दिया। प्रधान इस समय कोई भी कसर बाकी न रखना चाहते थे। उन्होंने तुरन्त स्वीकृति दे दी पर यह भी कहा कि ये अनुष्ठान रामदत्त अपने घर पर गुप्त रूप से करें। वे नहीं चाहते थे कि इसके बारे में किसी को पता चले जिससे कि चुनाव पर किसी तरह का असर पड़े। रामदत्त सामग्री लिखने लगे तो प्रधान ने कहा कि पंडित जी आप देख लीजिए। हम इस समय यह सब कहाँ खोजते फिरेंगे। प्रधान ने उन्हें सामग्री के लिये रूपए दिए और चुनाव जीत जाने पर रामदत्त के घर के सामने का ग्राम सभा का तालाब रामदत्त के नाम पट्टा करने का वचन दिया। रही रामदत्त की बात तो उनके पास खोने को कुछ नहीं था। प्रधान हार भी जाते तो कुछ दिनों की रोटी का इन्तजाम तो उन्होंने कर ही लिया था। यह अनुष्ठान का प्रभाव हो या दिन-रात बँटने वाली शराब और साड़ियों का या प्रधान के भट्ठे पर दिन रात पक रहे मुर्गों और बकरों की खपत का, जो भी हो प्रधान चुनाव जीत गये। उनको अपना वादा याद रहा और उन्होंने रामदत्त के घर के सामने का तालाब उन्हें इस शर्त पर पट्टे पर दे दिया कि उससे होने वाली कमाई का आधा हिस्सा वह प्रधान को देते रहेंगे। साथ में प्रधान ने रामदत्त को यह सलाह भी दी कि अगर वह तालाब में मछली पलवा लें तो उन्हें साल भर में बिना किसी मेहनत के लाखों का फायदा हो सकता है। उन्हें कुछ भी नहीं करना पड़ेगा। बीज पड़वाने से ले कर मछलियाँ बिकवाने तक सारा जिम्मा प्रधान का रहेगा। रामदत्त ने एक बार यह भी नहीं कहा कि देवी से पूछ कर बताता हूँ। तुरन्त हाँ कर दिया।

अब क्या सोचना' पार्वती बिस्तर पर थीं और दुनिया की सबसे अश्लील गालियाँ बका करती थीं। वशिष्ठ और विश्वामित्र के बारे में बहुत दिनों से कोई खोज खबर नहीं थी। रामदत्त को खुद अपने शरीर से मछलियों की गन्ध आने लगी थी और चोटी का दर्द इतना बढ़गया था कि उनका मन करने लगता था कि चोटी ही उखाड़ पेंफके। पर रामदत्त ऐसा कुछ भी करने के बदले मुस्कराते थे। वे पार्वती की टट्टी पेशाब साफ करते, आँगन में ले जा कर उन्हें नहलाते धुलाते, तेल फुलेल लगाते, कपड़े पहनाते और पार्वती गालियाँ बकती रहतीं। वह रामदत्त को कोसती रहतीं कि यह सब उन्हीं के पापों का फल है कि औलादें बिगड़ गयीं, वे बिस्तर पर पड़ी हैं, सारे जजमान लुट गये और पता नहीं कब तक उन्हें इसी तरह घिसटना पड़ेगा। अब तक पार्वती भी मानने लगी थीं कि रामदत्त छुप छुप कर मछलियाँ खाते हैं नहीं तो इस बुढ़ापे में वो मछली पालने जैसा निकृष्ट काम क्यों करते। पार्वती उनके हाथ का पानी भी पीना नहीं पसन्द करतीं, पर उनके पास कोई विकल्प नहीं रह गया था। वे गालियाँ बकती जातीं, रामदत्त गालियाँ सुनते जाते और मुस्कराते जाते।

इधर वशिष्ठ और विश्वामित्र दोबारा घर में आने लगे थे। उनकी जब मर्जी होती घर में आते। उनके साथ उनके दोस्त भी होते। वे जो मर्जी होती पकाते, खाते पीते और चले जाते। पार्वती के बिस्तर पर पड़ जाने के बाद से रामदत्त ने बेटों से बात करना बन्द कर दिया था। वशिष्ठ और विश्वामित्र जब भी आते उनकी चोटी में दर्द बढ़जाता और वे कराहने लगते। उधर पार्वती चुप हो जातीं। उनका चेहरा विकृत हो जाता, कई बार दाँत बैठने लगते और मुँह से अबूझ आवाजें निकलने लगतीं जो पूरे घर में चक्कर खाती गूँजती रहतीं। वशिष्ठ और विश्वामित्र के जाने के थोड़ी देर बाद सब कुछ सामान्य हो जाता। रामदत्त मुस्कराते हुए घर की साफ सफाई में जुट जाते और पार्वती नयी-नयी गालियों के आविष्कार के अपने मनपसन्द काम में जुट जातीं। जब कभी मौका मिलता रामदत्त तालाब किनारे जा कर बैठ जाते और हसरत भरी निगाहों से तालाब को ताकते रहते। पर एक यही समय होता जब उनकी मुस्कराहट गायब हो जाती। वे उदास होने लगते। ऐसे समय में उनका चेहरा इतना पारदर्शी हो जाता कि उसमें न जाने कितनी चीजें तैरती दिखाई देने लगतीं। ऐसा समय देर तक न टिकता। घर तक आते-आते वे फिर मुस्कराने लगते और चोटी सहलाते हुए घर के कामों या पार्वती की सेवा में जुट जाते। जिस दिन मछलियाँ बिकीं और प्रधान ने रामदत्त को उनके हिस्से का पैसा दिया, पता नहीं केसे उन सबको पता चल गया जिनसे उन्होंने उधार ले रखा था। कोई ऐसे ही घूमते हुए आ गया, कोई पार्वती का हालचाल लेने के बहाने आ गया। उन लोगों का सारा उधार चुकाने के बाद भी रामदत्त के हाथ में इतना पैसा बचा हुआ था कि वह अगले पाँच-छह महीने के लिये पेट की चिन्ता से मुक्त हो ही सकते थे। पर अचानक वशिष्ठ और विश्वामित्र आ धमके। उन्होंने अपना हिस्सा माँगा। जब रामदत्त ने कहा कि पैसा नहीं बचा, सब उधार चुका दिया तब वशिष्ठ ने रामदत्त को धक्का दिया और कहा कि रामदत्त हम तुम्हारी रग रग जानते हैं। अपना बुढ़ापा और खराब मत करो। हम सबेरे फिर आएँगे तब तक हमको हमारा हिस्सा मिल जाना चाहिए। रात भर रामदत्त चोटी के दर्द से कराहते रहे। पार्वती का चेहरा विकृत बना रहा। उनके मुँह से ऐसी भाषाओं में लगातार शब्द निकलते रहे जो दुनिया के किसी भी कोने में नहीं थीं। रामदत्त की कराहों और पार्वती के अनजाने शब्दों की अनुगूँजों से सुबह तक घर काँपने लगा था। इतना कि अब वह कभी भी गिर सकता था। सुबह वशिष्ठ और विश्वामित्र के आने की बात सोच-सोच कर रामदत्त की कराहें बढ़रही थीं कि हल्ला मचा। एक साथ कई लोग रामदत्त के घर पर थे। रामदत्त बाहर निकले तो उन्हें बताया गया कि एक अरहर के खेत में वशिष्ठ की लाश पड़ी है। रामदत्त उन लोगों के साथ कुछ इस तरह से चल पड़े जैसे किसी अनजाने व्यक्ति की लाश देखने जा रहे हों। अपने साथ वालों की उत्तेजना की परवाह न करते हुए, हमेशा की तरह मुस्कराते हुए। वह लोगों से कुछ कह भी रहे थे। उन बातों में जाति, मछली, गुरू, मछुवारा, और चोटी के दर्द का उल्लेख था। लोगों को कुछ समझ में नहीं आया तो उन्होंने मान लिया कि बेटे की मौत के सदमे में रामदत्त पागल हो गये हैं। खेत में पहुँच कर रामदत्त ने देखा कि वशिष्ठ को लगभग चीर डाला गया है। हँसिए से कट कर गर्दन झूल गयी थी। फरसे और कुल्हाड़ियों के निशान भी पेट और कमर पर पहिचाने जा सकते थे। एक कान कट कर दूर पड़ा हुआ था। रामदत्त ने देखा कि वहाँ टूटी हुई हालत में कुछ चूड़ियाँ भी बिखरी पड़ी थीं। जो अलग-अलग रंगों की थीं।

वे बैठ गये। उनकी मुस्कराहट न जाने कहाँ गुम हो गयी। उन्होंने वशिष्ठ के शरीर पर हाथ फेरा। इतने लगाव के साथ और धीरे-धीरे कि इसमें उन्हें घंटों लग गये। वशिष्ठ का शरीर तिरछा पड़ा था। रामदत्त ने उसे सीधा करना चाहा तो उन्हें वशिष्ठ के नीचे एक तीसरा हाथ दिखाई पड़ा जिसमें एक लोहे का कड़ा पड़ा हुआ था। यह विश्वामित्र का था जिसे शायद फरसे के एक ही भरपूर वार ने शरीर से अलग कर दिया था। रामदत्त दोबारा मुस्कराने लगे। जैसे कि इस दृश्य से उनका कोई सम्बन्ध ही नहीं था। उन्हें दिखाई पड़ा कि एक तरफ खून के ऐसे निशान दिखाई पड़ रहे हैं जैसे कोई खून का स्रे करता हुआ उधर से गया हो। अभी तक उस तरफ किसी का ध्यान नहीं गया था।

रामदत्त उठे तो बाकी लोगों का ध्यान भी उधर को गया। यह एक ताजा बना रास्ता था जो उसी तालाब की ओर जाता था जिसमें रामदत्त ने मछलियाँ पाली हुई थीं। रामदत्त हवा में कुछ सूँघ रहे थे, रामदत्त हवा में कुछ कह रहे थे, पता नहीं क्या! तालाब के एक कोने की तरफ जिधर चोपियहवा आम का पेड़ था, उसी के नीचे पंडित विश्वामित्र त्रिपाठी अधनंगे पानी में तैर रहे थे। एक ही हाथ के विश्वामित्र। रामदत्त उनकी तरफ ऐसे चलते चले जा रहे थे जैसे जमीन पर चलते चले जा रहे हों। उन्हें एक दो लोगों ने पकड़ लिया। कुछ दूसरे लोग पानी में उतरने को हुए तो उन्हें

मनोज कुमार पांडेय

7 अक्टूबर 1977 को इलाहाबाद के एक गाँव सिसवाँ में जन्म। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से हिन्दी साहित्य में परास्नातक। कहानियों की तीन किताबें शहतूत, पानी (भारतीय ज्ञानपीठ), और खजाना (आधार प्रकाशन) प्रकाशित। देश की अनेक नाट्य संस्थाओं द्वारा कई कहानियों का मंचन। कई कहानियों पर फिल्में भी। अनेक कहानियों का उर्दू, पंजाबी, गुजराती, मलयालम, उड़िया आदि भाषाओं में अनुवाद। कहानियों के लिए First Ram Advani Award for excellence in Writing (2018), रवींद्र कालिया स्मृति कथा सम्मान (2017), स्पंदन कृति सम्मान (2015), भारतीय भाषा परिषद का युवा पुरस्कार (2015), मीरा स्मृति पुरस्कार (2011), विजय वर्मा स्मृति कथा सम्मान (2010), प्रबोध मजुमदार स्मृति सम्मान (2006)।

दूरभाष : 08275409685, 08805405327,ई-मेल - chanduksaath@gmail.com

गाँव के ही कुछ लोगों ने बरज दिया कि पुलिस केस है। पुलिस को आने दिया जाये। वे रूक गये। रामदत्त को लोग पकड़े हुए थे। उन्होंने अपने को छुड़ाने की कोई कोशिश नहीं की। उन्होंने बगल वाले व्यक्ति से कहा कि इसी चक्कर में आज मछलियों को चारा डालने में कितनी देर हो गयी। उधर पार्वती भी सुबह सुबह उन्हें न पाकर चिल्ला रही होंगी। यह कह कर रामदत्त ने अपने को छुड़ाया तो उन्हें ताकत लगाने की जरा भी जरूरत नहीं पड़ी। लोगों ने उन्हें आसानी से छोड़ दिया। पंडित रामदत्त सिर झुकाए, अपने में गुम मुस्कराते हुए अपने घर की तरफ चल पड़े। गाँव के लोग अभी भी तालाब के किनारे और अरहर के खेत में जमे हुए थे। धीरे-धीरे वे भी कम होने लगे। पुलिस के आने के पहले सभी जवान लोगों को गाँव छोड़ देना था। यह एक ऐसी चीज थी जिसके बारे में किसी को भी समझाने की जरूरत नहीं थी।

रामदत्त ने घर का दरवाजा भीतर से बन्द कर लिया। पार्वती धाराप्रवाह गालियों के बीच उनसे पूछ रही थीं कि वह सुबह-सुबह कहाँ चले गये थे। रामदत्त ने उन्हें कोई जबाव नहीं दिया। उन्होंने देखा कि पार्वती अपनी स्वाभाविक अवस्था में लौट आयी थीं। तो क्या इस बीच पार्वती वशिष्ठ और विश्वामित्र की तरफ से निश्चिन्त हो गयी हैं' वे डर गये। कहीं पार्वती को किसी ने इस बारे में बता तो नहीं दिया। फिर उन्होंने इस बात को तब तक के लिये टाल दिया जब तक कि पार्वती खुद उनसे कुछ न कहें। उन्होंने पार्वती के बिस्तर के पास से उनका हंडिया उठाया और उसे साफ करने चले। अनेक आँखें उनके घर की तरफ लगी हुई थीं पर उन्होंने किसी को नहीं देखा। चापाकल की खटरपटर के बीच पानी भरा। आज उन्हें बहुत ताकत लगानी पड़ी।

पार्वती को उठाने गये तो पार्वती का शरीर आज बहुत भारी लगा। वे पूरी ताकत लगाने के बाद भी उन्हें नहीं उठा पा रहे थे। उन्होंने पार्वती पर ये सच जाहिर नहीं होने दिया। उन्होंने दोबारा कोशिश की और पार्वती को एक झटके में उठा लिया पर आँगन तक पहुँचते पहुँचते अपने शरीर का सन्तुलन साध नहीं पाये और पार्वती को लेकर जमीन पर आ गिरे। पार्वती ने एक कराह के साथ गाली बकी पर रामदत्त के ऊपर कोई असर नहीं पड़ा। पार्वती की गालियों ने बहुत पहले ही अपना असर खो दिया था। रामदत्त मुस्कराए और पार्वती को नहलाने लगे।

यह एक नयी बात थी। नहाने का काम तो पार्वती खुद से ही करती थीं। उन्होंने रामदत्त को झिड़का पर वे नहीं माने। पूरे इत्मीनान और प्यार के साथ उन्होंने पार्वती के शरीर को मल मल कर साफ किया। इस क्रम में उनके हाथ जहाँ-तहाँ देर-देर तक रूकते रहे। पार्वती ने शुरू में तो भरपूर गालियाँ बकी पर जल्दी ही उनको लग गया कि आज का दिन और दिनों से बहुत अलग है। उन्होंने बहुत दिनों के बाद रामदत्त से सीधे मुँह बात की, पूछा, क्या हुआ पंडित। जवाब में रामदत्त ने कहा कि कुछ नहीं। हफ्ते में एक बार तो कायदे से नहाना ही चाहिए। पार्वती को यह सब इतना अबूझ लगा कि थोड़ी देर के लिये वे अपनी गालियाँ भी भूल गयीं। उन्होंने रामदत्त को वह सब कुछ करने दिया जो उन्होंने करना चाहा।

नहला कर रामदत्त ने पार्वती के शरीर को पोंछा, पाउडर लगाया और पहनाने के लिये एक नयी साड़ी निकाल लाए। अपने हाथों से साड़ी पहनायी, आईना दिखाया और बोले, देखो कितनी सुन्दर लग रही हो। तुम थोड़ा-सा चावल बीन लो, मैं सब्जी काट लेता हूँ। आज मैं तुम्हारी पसन्द की कटहल की सब्जी बनाता हूँ। अचानक उन्हें लगा कि ये जीवन शायद और बेहतर हो सकता था। ये वाक्य एक पीड़ा भरी हूक के साथ उनके भीतर से आया पर उन्होंने इसे झटका और कटहल तोड़ने चल दिए। पता नहीं क्यों पर कटहल तोड़ते समय उन्हें मत्स्यगन्धा की याद आयी। पर इस याद के साथ उनके भीतर जो चेहरा बना वह पार्वती के जवान दिनों का था। लौट कर उन्होंने पार्वती की ओर देखा और उस जवान चेहरे से इस बूढ़े चेहरे का मिलान करना चाहा। उनके मुँह से एक अजीब-सी आवाज निकली। इस चेहरे का नाश भी मैंने ही किया है। इसी के साथ रामदत्त का सिर कुछ कुछ अपने पिता की तरह हिलने लगा। इस क्षण रामदत्त सभी चीजों के लिये खुद को ही जिम्मेदार मान रहे थे। वशिष्ठ और विश्वामित्र के इस निर्मम अन्त के लिये भी। अपने जीवन के इस हाल के लिये भी। अपने भीतर की उस घातक गन्ध के लिये भी जिसने पार्वती को हमेशा के लिये उनसे दूर ढकेल दिया था और इस बात को लगभग नामुमकिन बना दिया था कि पार्वती उन्हें प्यार कर सकें। उन्होंने अपने भीतर एक कँपकँपी महसूस की जो उनके रोएँ-रोएँ में उतर गयी। पर मैं तुम्हें प्यार करता हूँ पार्वती, रामदत्त ने एक गहरी जिद के साथ खुद से कहा और कटहल काटने लगे। आज खाना बनाने में रामदत्त ने अपना पूरा कौशल लगा दिया। पार्वती की पसन्द की कटहल की तीखी मसालेदार सब्जी और चावल, फिर उन्होंने सब्जी में सल्फास मिला दिया। ऐसा करते हुए उन्हें पानी में अपना डूबना याद आया जब मैना ने उन्हें बचाया था। इस समय मैना नहीं थी। सामने पार्वती थीं, बूढ़ी लाचार और अपंग पार्वती, जिन्होंने आज घर में कुछ अलग सी गन्ध सूँघ ली थी और चुप हो गयी थीं।

जब रामदत्त थाली ले कर पार्वती के सामने पहुँचे तो उन्होंने जैसे माहौल को सामान्य बनाने की कोशिश में गाली बकी जिसमें रामदत्त के पिछवाड़े का सम्बन्ध गदहे के साथ कायम किया गया था। रामदत्त ने जैसे सुना ही नहीं। अपने काँपते हुए चेहरे के साथ मुस्कराये और बोले आओ आज तुम्हें अपने हाथों से खिला दूँ और कहो तो मैं भी तुम्हारे साथ ही खा लूँ। पार्वती को अपने कानों पर भरोसा नहीं हुआ। वह अगली कोई गाली खोज रही थीं कि उनकी आँखें रामदत्त से जा मिलीं। रामदत्त मुस्करा रहे थे पर उनकी आँखें लाल थीं। और आँखों की कोरों पर आँसू टिके हुए थे जो आँखों की ललाई की आभा में खून की बूँदों की तरह दिखाई दे रहे थे। पार्वती जब तक कुछ और समझ पातीं सब्जी और चावल का बहुत प्यार से बनाया हुआ कौर उनके मुँह में था। रामदत्त की आँखों की कोरों में फँसी बूँदें थोड़ा और नीचे सरक आयी थीं और उनकी खसखसी दाढ़ी में फँस गयी थीं। रामदत्त ने पूछा, मैं भी इसी में खा लूँ पार्वती, तुम्हारे साथ ?

पार्वती को लगा कि उनके सामने कोई और रामदत्त है। यह वो तो नहीं हो सकता जिसके शरीर से मछलियों की बास आती थी। जिसके साथ वह सोती जागती रही थीं, न चाहने के बावजूद। तब ये कौन है जो उन आँखों के भीतर से झाँक रहा है और उसी चेहरे के भीतर बैठा हुआ है। तभी पार्वती के भीतर अचानक कुछ कट सा गया। उन्हें बहुत तीखा दर्द हुआ। लगा जैसे भीतर का एक एक हिस्सा कोई चाकू से काट रहा है। पार्वती ने रामदत्त के चेहरे की तरफ देखा तो उन्हें रामदत्त का चेहरा भी बिखरता हुआ लगा। जिस हरजाई गन्ध की वजह से वह रामदत्त को कभी प्यार नहीं कर पायीं वो गन्ध रामदत्त का साथ छोड़ गयी थी। उन्हें इस दर्द भरे क्षण में भी रामदत्त पर बहुत प्यार आया पर अभी प्यार करने को कोई चेहरा नहीं बचा था।

रामदत्त का सिर काँप रहा था। आँखें जैसे बाहर निकल आने के लिये लगातार बिछल रही थीं। पर होठों पर एक मासूम मुस्कराहट बनी हुई थी। इस मुस्कराहट से प्यार किया जा सकता था। पार्वती ने उन्हें जीवन भर बर्दाश्त किया था पर यही वे क्षण थे जब उन्होंने जाना कि गलत सिर्फ उनके साथ ही नहीं हुआ था। शायद रामदत्त के साथ भी कुछ बहुत गलत हुआ था। शायद मछली की गन्ध एक धोखा थी पर अब उस हत्यारी गन्ध को याद करने का कोई मतलब नहीं था। पार्वती जान गयीं कि कम से कम इस क्षण तो दोनों के बीच कोई गन्ध नहीं बची हुई है। पार्वती के भीतर एक भयानक तोड़-फोड़ मची हुई थी। उन्होंने रामदत्त को अपनी तरफ खींचा और खींच कर अपनी बाँहों में भर लिया। उन्होंने रामदत्त को चूमा पर अब इसका कोई मतलब नहीं था या कि इसका मतलब तो हमेशा ही बना रहता है। दर्द भीषण था और इतना दर्द कोई भी अकेले नहीं सह सकता था।

जीवन जिसे जीने के अनेक विकल्प हो सकते थे, तेजी से नष्ट हो रहा था।

रवीन्द्रनाथ की कला-सृष्टि

रमेश दवे

पुस्तक - रवीन्द्रनाथ की कला-दृष्टि
लेखक - रणजीत साहा
प्रकाशक - प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार
मूल्य रू. 250/-

भारत की सबसे बड़ी विशेषता इसका बहुभाषी देश होना है। बंगाल अपनी प्रगल्भ बौद्धिकता और कला-प्रतिभा के लिए देश का गौरव है और उसने हमें रवीन्द्रनाथ, शरदचन्द्र, बंकिमचन्द्र से लेकर महाश्वेतादेवी तक अनेक उत्कृष्ट साहित्य और कला-प्रतिभाओं से संपन्न किया है। जो बांग्ला-मातृभाषी हिन्दी-प्रदेशों में बस गए हैं, उनकी पीढ़ियाँ अब दो-दो मातृभाषाओं की पीढ़ियाँ हैं, जिनमें हम 'समावर्तन' पत्रिका के संस्थापक डॉ.प्रभातकुमार भट्टाचार्य, डॉ.रणजीत साहा, आलोक चटर्जी आदि कला-साहित्य प्रतिभाओं का नाम गर्व से ले सकते हैं।

डॉ.रणजीत साहा वर्षों से दिल्ली-वासी हैं और बांग्लाभाषी हैं लेकिन उनकी हिन्दी अनेक हिन्दी-भाषियों से भी बेहतर है। प्रभात भट्टाचार्य तो स्वयं को हिन्दी मातृभाषी कहने में गर्व महसूस करते हैं, रणजीत साहा ने हाल ही एक अत्यंत प्रशंसनीय कार्य किया है- 'रवीन्द्रनाथ की कला-सृष्टि' जैसी महत्त्वपूर्ण पुस्तक के लेखन से, जिसे प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार ने सचित्र प्रकाशित कर उत्कृष्टता का एक प्रादर्श (मॉडल) रचा है रणजीत साहा ने अपने निवेदन में पुस्तक को भूमिका के प्रचलित रिवाज से मुक्त कर पुस्तक की संपूर्ण संकल्पना, प्रस्तुति, आकल्पन और प्रेरक तत्वों को जिस प्रकार प्रस्तुत किया है उससे रवीन्द्रनाथ की कला-सृष्टि को पढ़ने, देखने, समझने और उससे प्रेरित होने की दृष्टि का विकास उन युवा कलाकारों में हो सकता है जो कला-साधना से अपनी प्रतिभा को विकसित करने में संलग्न है। 'प्रस्थान' का खण्ड-एक पढ़कर लगता है कि रवीन्द्रनाथ ने अपना भौतिक जीवन केवल 1861 से 1941 तक लगभग अस्सी वर्ष तक न जीकर उसे कला-जीवन की तरह जिया। उनकी उत्कृष्ट कला-दृष्टि ने जो कला-सृष्टि अपनी अड़सठ वर्ष की आयु से प्रारंभ की वह उनकी साहित्य और कला की अमर यात्रा बन गई। रवीन्द्र संगीत, रवीन्द्र पेंटिंग, रवीन्द्र साहित्य, रवींद्र शिक्षा-दर्शन आदि से ऐसा लगा जैसे रवीन्द्रनाथ को प्रकृति-देवता ने प्रतिभा-पुंज से प्रकाशित किया है। रणजीत जी ने रवीन्द्रनाथ के इस अवदान को जिस प्रकार प्रस्तुत किया है उसकी दो विशेषताएँ हैं- एक तो उनकी कलात्मक गद्य शैली और दूसरे रवीन्द्रनाथ के चित्रों के साथ उनकी संदर्भात्मक प्रस्तुति। साहा ने 'प्रस्थान' के अंतिम वाक्य में ठीक ही कहा है कि रवीन्द्रनाथ ने देखते-देखते न केवल अपनी काव्य-प्रतिभा से बल्कि कला-प्रतिभा से भी सारा संसार जीत लिया।'' 'खण्ड दो' आधार.....आकाश...आकार' में स्वयं रवीन्द्रनाथ के अपने पोरट्रेट के साथ अनेक चित्रों का सौन्दर्यमय अवकाश या आकाश आकारों का उनके आधार के साथ प्रस्तुत करता है। रवीन्द्रनाथ ने कागज, इंक, कागज़ पेस्टल, कागज़ जल-रंग, कागज़-पेंसिल आदि से जो चित्र एवं स्केच बनाए उनकी विशेषताएं साहा ने रवीन्द्रनाथ की प्रयोगशीलता और नवाचारी दृष्टि के साथ प्रस्तुत की है।

खण्ड-3 'विषय-गत प्रवर्तन' का हे जिसमें रवीन्द्रनाथ की कला-दृष्टि के अनेक आयाम उद्घाटित हुए हैं। रवीन्द्रनाथ की सारे प्रयोगात्मक चित्र-दृष्टि इस खण्ड का मुख्य आकर्षण है जिसे साहा ने अत्यन्त करीने से संयोजित और प्रस्तुत किया है। ऐसा लगता है रवीन्द्रनाथ की इस कला-दृष्टि में कला-साहित्य-जीवन दर्शन, अध्यात्म और प्रकृति का अद्भुत संगम हुआ है जो न केवल मनुष्य-गत है बल्कि सदाचर-जगत गत है। सृष्टि का इतना संसृति-मूलक उद्घाटन रवीन्द्रनाथ जैसी प्रतिभा से ही संभव था।

खण्ड-चार में चित्र-विविधा की प्रस्तुति है। इस खण्ड में रवीद्रनाथ ने जो रेशेदार मानवीय रूपाकार प्रस्तुत किए हैं उससे लगता है कि रवीन्द्रनाथ अपने ज्येष्ठ भ्राता और नंदलाल बसु आदि के प्रभाव से मुक्त होकर अपनी ही कला-दृष्टि से कला-सृष्टि कर रहे थे। खण्ड-5 जहाँ अन्तर्सम्बन्ध - साहित्य और कला-कर्म पर केन्द्रित है, वहाँ यह पुनः रवीन्द्रनाथ के उस भव्य कला-लोक की असीम संभावनाओं का प्रतीक है जो रवीन्द्र को कला का सृष्टि-पुरुष सिद्ध करता है। साहित्य और कला कितने अन्तर संबंधी या आत्मसंबंधी है यह आज के कला-साधकों के लिए अत्यन्त प्रेरणादायी हैं।

खण्ड-छह में 'चित्रगत प्रयोग-प्रवणता' को स्त्री और प्रवृत्ति आकृतियों से प्रस्तुत कर साहा ने रवीन्द्रनाथ के स्त्री-प्रकृति-संवेदी दृष्टि का उद्घाटन किया है। खण्ड-सात 'रवीन्द्र कला-दृष्टि-व्याप्ति एवं स्वीकृति' का विषयगत उपसंहार कहा जा सकता है। रवीन्द्रनाथ की मूल प्रतिभा तो साहित्य ही में प्रकट हुई थी लेकिन उनकी कला सृष्टि को जिस प्रकार विश्व व्याप्ति और स्वीकृति मिली उसका भी सचित्र वर्णन है। यहाँ रवीन्द्रनाथ की कला-सृष्टि के रंग अधिक गाढ़े हैं। वैसे सामान्य रूप से रवीन्द्रनाथ प्रगाढ़रंग-संयोजन से ही अपनी चित्र-सृष्टि करते हैं लेकिन जो आधुनिक पेंटर्स कम्पोज़िशन एवं काल्पनिक या अमूर्त शैली अपनाते हैं, उनके लिए रवीन्द्रनाथ की कला सृष्टि एक प्रकार से नया मार्ग मुक्त करती है। संभवतया रवीन्द्रनाथ यह भी सिद्ध करना चाह रहे हों कि मनुष्य की हर आकृति में संपूर्ण चराचर जगत के प्रति संवेदना का आम-दर्शन निहित है। रणजीत साहा ने रवीन्द्रनाथ के इसी काया दर्शन को पुस्तक में अनेक संदर्भों और आत्मकथा एवं जीवनी आदि के लेखकों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। अंतिम कवर पृष्ठ पर 'मेरे चित्र' शीर्षक से रवीन्द्रनाथ का 28 मई 1930 को किया गया आत्मकथन यह समझने के लिए पर्याप्त है कि रवीन्द्रनाथ की कला-सृष्टि के उद्भव-तत्व क्या और कैसे थे। पुस्तक के समस्त चित्रों को देखकर रवीन्द्रनाथ का यह कथन सच सिद्ध होता है मेरे चित्र इन रेखाओं में मेरी पद-रचना का रूप है।''

रणजीत साहा ने यह पुस्तक संयोजित कर साहित्य और कला दोनों के साधकों के लिए ऐसा मार्ग प्रशस्त किया है जिससे आधुनिक कला-बोध से संपन्न कलाकार कलात्मक-उत्कृष्टता को उपलब्ध करने की अपनी प्रणाली और प्रक्रिया को उत्कृष्ट बना सकते हैं। रणजीत साहा ने यह श्रम-साध्य काम करके हिन्दी-पाठकों के लिए कला को साहित्य का विषय बना दिया है। यदि रणजीत साहा रवीन्द्रनाथ की इस कला-दृष्टि के साथ अवनीन्द्रनाथ, ज्योतिन्द्रनाथ आदि के अतिरिक्त अन्य देशी-विदेशी समकालीनों की कला-दृष्टि और समांतर कला-बोध का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करते तो पुस्तक केवल रवीन्द्रनाथ तक सीमित न होकर स्वयं साहा की भी कला-दृष्टि का परिचय दे सकती थी।

दूध की शीशी में सिमटता मातृत्व

सूर्यकांत नागर

वरिष्ठ कथा लेखिका सूर्यबाला का नया उपन्यास 'कौन देस को वासी-वेणु की डायरी' इन दिनों चर्चा में है क्योंकि भारतीय जीवन-मूल्यों के प्रति उनकी अटूट आस्था का यह जीवंत दस्तावेज है। भारतीय संस्कारों और परम्पराओं के प्रति उनका जज्बा और जुनून ऐसा है कि उनकी दो पूर्व कृतियाँ- 'मानुष गंध' और 'अलविदा अन्ना' में भी भारतीय संस्कृति को बचाए रखने की उनकी चिंता शामिल है। पाश्चात्य संस्कृति, भूमण्डलीकरण तथा समय के दबाव के कारण समाज में आ रहे बदलावों और बढ़ती मूल्यहीनता को उन्होंने इन कृतियों में शिद्दत से रेखांकित किया है। इस संदर्भ में उनकी प्रतिबद्धता असंदिग्ध है। अमेरिका प्रवास पर गए और अक्सर वहीं बस गए लोगों की मनोदशा, जद्दोजहद का प्रभावी चित्रण इन रचनाओं में है। भारत की तुलना में अमेरिका की संस्कृति, रीति-रिवाज, जीवन-शैली से अनुप्रेरित अंतरविरोध उनके अंदर इतना गहरा समाया हुआ है कि वे दोनों देशों के रहन-सहन, आचार-विचार के बुनियादी फर्क को व्यक्त करने का कोई अवसर नहीं छोड़तीं। सवाल यह है कि अमेरिका में जा बसे हिन्दुस्तानी कितने भारतीय रह पाते हैं और कितने अमेरिकी हो पाते हैं। जिस लोभ-लालच में युवा पीढ़ी अमेरिका जाती है, क्या उससे उसकी धरती पूरी तरह छूट पाती है। उसे समझ नहीं पड़ता कि उसे कितना नए में रहना है और कितना पुराने में। लेखिका ने स्वयं कहा है कि लालसाओं में फँसकर जब हम अपनी धरती छोड़ते हैं तो कब तक और कितनी छूट पाती है वह हमसे ? लेखिका की यह सोच कि व्यक्ति कहीं भी रहे, बस मनुष्य बना रहे, सोचने को बाध्य करती है। मनुष्यता ही चली गई तो फिर जीवन में रहा क्या ?

चूँकि सूर्यबालाजी को अमेरिका प्रवास और वहाँ लम्बी अवधि तक रहने के अवसर मिले हैं, अतः अनुभव आधारित उपन्यास प्रामाणिक और विश्वसनीय बन पड़ा है। यह इस बात का सूचक है कि सृजनात्मक लेखन के पीछे कोई न कोई अनुभव होता है - चाहे सूक्ष्म हो या स्थूल, प्रत्यक्ष हो अथवा अप्रत्यक्ष। सूर्यबालाजी ने अनुभव से अपने विचार को बड़ा फलक देते हुए उसे सार्वलौकिक, सार्वभौमिक बनाया है। चार सौ पृष्ठों और नौ खंडों में विभाजित उपन्यास के चार प्रमुख पात्र है वेणु, माँ, मेधा और वसु। पात्र और भी हैं जैसे हिसाबी-किताबी मितव्ययी पिता प्रभाकर, कात्या, शशांक, दक्षा, मंगलाबेन, प्रशांत, लोकेन्द्र साशा आदि। सामान्य मध्यवर्गीय परिवार के वेणु को बेहतर भविष्य के लिए अमेरिका भेजते हुए परिवार के लोग गौरवान्वित तो महसूस करते ही हैं, यह सपना भी सँजोते हैं कि देर-सवेरे वे डॉलरों से भरपूर धनाढ्य हो जाएँगें, उनका दरिद्दर दूर हो जाएगा। भूलकर कि सेटल होने से पहले वहाँ जाने वाले युवक को कितने श्रम, संघर्ष और समस्याओं का सामना करना पड़ता है। कई बार सपने आधे-अधूरे, टूटे-फूटे रह जाते हैं। बेटा चाहे अनचाहे वहीं के रंग में रंगता चला जाता है और चाहकर भी लौट नहीं पाता। मूलतः भारतीय पेरेन्ट्स के जो बच्चें अमेरिका में पैदा हुए, वहीं पढ़े-लिखे, खेले-कूदे और बड़े हुए, उनसे भारत के बच्चों-सी आत्मीयता, शिष्टाचार, विनम्रता और रिश्तों को निभाने की अपेक्षा मरूस्थल में पानी की तलाश जैसी है। दादा-दादी की अभिलाषा उन बच्चों को अपनी परम्पराओं से जोड़ने की होती है, पर यह

कौन देस को वासी : वेणु की डायरी (उपन्यास)
लेखक : सूर्यबाला प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन
प्राईवेट लिमिटेड नई दिल्ली-2
मूल्य रू. 399/-

अक्सर मुमकिन नहीं हो पता। क्यों कि न उन्हें हिन्दी आती है, न उन्होंने भारत को कभी देखा और न वहाँ की संस्कृति को जाना है। वे तो केवल 'हाय, हलो' करने वाले और अठारह की उम्र के बाद अपनी गर्लफ्रैण्ड के साथ अलग घर बसाने वाले होते हैं। चरण छूना किस बीमारी का नाम है, उन्हें पता नहीं होता।

उपन्यास में मातृत्व की बदलती तस्वीर भी पेश की गई है। वहां माँ को अपने बच्चे को स्तन-पान कराने की फुरसत नहीं है। बच्चे मम्मी का बोतल-बंद दूध पीने को विवश हैं। दफ्तरों में ऐसे 'रेस्ट रूम' हैं जहाँ जाकर माँ अपने स्तनों से, मशीन से दूध निचोड़ कर बोतल में संग्रहित करती है ताकि वक्त-जरूरत बच्चे को पिलाया जा सके। स्तन-पान कराने का जो आत्म-सुख और आनंद है, उससे माँ और बच्चा दोनों वंचित रहते हैं। कैसी विडम्बना कि मातृत्व दूध की शीशी में सिमट कर रह गया है।

वेणु की माँ का किरदार जबरदस्त है। समझदार, संवेदनशील, ममतामयी माँ सब कुछ जानते -समझते हुए भी वेणु और बहू मेधा का समर्थन करती है। बेटे की खुशी के लिए ही हर बार अपने दर्द को छिपाकर, वह बेटे के दोष को ढ़ँक लेती है। सचमुच माँ का प्यार निस्वार्थ-निर्व्याज होता है। यह उसकी लाचारगी है और संस्कार भी। माँ-बेटे के रिश्ते के चित्रण में सूर्यबालाजी ने विलक्षण प्रतिभा का परिचय दिया हे।

कभी वेणु पर जान छिड़कने वाली, उसे अत्यधिक प्यार करने वाली छोटी बहन वसु के साहसी, स्वाभिमानी और दृढ़निश्चयी स्वरूप वाला उपन्यास अंश विचारोत्तेजक है। अमेरिका में बस जाने के बाद वेणु और आधुनिक विचारों वाली भाभी मेधा में आए बदलावों से रूष्ठ हो वह बगावती तेवर अपना लेती है और भाई-भाभी को किसी कीमत पर माफ करने के लिए तैयार नहीं होती। खरी-खोटी सुनाते हुए उनसे दूरी बनाती चलती है। उसके तेवर देखते ही बनते हैं। यहीं नहीं करूणा और मानवीय उदा ाता के वशीभूत हो, रोहित सर से एकतरफा प्यार की असफलता के बाद, नन्हीं प्रिया के कारण वह सुहास से जुड़ने का साहसिक कदम उठाती है। वसु की तल्खी को लेखिका ने बड़े तल्ख अंदाज में प्रस्तुत किया है।

मेधा वेणु को प्यार करती है और वेणु भी मेधा को। पर उनके वैचारिक मतभेद बने रहते हैं और उनके बीच अक्सर बहस होती रहती है। वेणु अपने को भारतीयता से जुड़ा महसूसता है, पर सम्पन्न घराने से आई मेधा अमेरिकी जीवन में अपने को ढ़ालती चली जाती है। खर्च, साधन-सम्पन्नता आदि के बारे में दोनों के बीच नोंक-झोंक होती रहती है। पति-पत्नी के बीच विरोधाभास और नोंक-झोंक के संदर्भ में उपन्यासकार ने अत्यंत महत्वपूर्ण टिप्पणी की है कि पूरी तरह एक-दूसरे के अनुकूल स्त्री-पुरूष ईश्वर ने अब तक जन्माए हैं क्या ? जो ऐसा सोचते हैं, वे सबसे बड़े ढोंगी हैं, झूठ बोलते हैं। ढ़ोंगी और झूठ बोलने की बात पर सहसा ध्यान हो आया गोविंद मिश्र के उपन्यास 'कोहरे में कैद रंग' में पति-पत्नी के बीच प्रेम का वह प्रसंग जहाँ लेखक कहता है - ''वैवाहिक जीवन में प्रेम असंभव है क्योंकि विवाह के हवन कुण्ड में प्रेम की समिधा अर्पित करना पड़ती है। यदि कोई यह दावा करता है कि पति-पत्नी के बीच प्रेम है तो या तो वह ढ़ोंगी है या प्रेम का मतलब नहीं जानता।''

संयुक्त परिवार की भारतीय कल्पना अमेरिकी समाज में सिरे से खारिज है। अमेरिकी माता-पिता अपने बच्चों के साथ नहीं रहते। उन्हें उनका जीवन जीने के लिए स्वतंत्र कर देते हैं। अठारह वर्ष की उम्र के बाद बेटा अक्सर अलग हो जाता है, अपनी गर्लफ्रैंड के साथ। बच्चे माता-पिता पर भार नहीं बनते। दरअसल अभिभावकों और संतानों दोनों को अपने लिए प्राइवेसी और स्पेस चाहिए। लेखिका ने आए दिन होने वाले तलाक, स्टेप फादर, स्टेप मदर, स्टेप ब्रदर और स्टेप सिस्टर, वृद्धों के एकाकीपन, नसली भेदभाव, प्राइवेसी और कठोर अमेरिकी कानून पर भी खुलकर विचार व्यक्त किए हैं। कुछ ऐसे प्रावधानों पर भी जिन पर हम भारतीय हँस भी सकते हैं और हैरत में भी पड़ सकते है, यथा एक रिवाज जिसके तहत यदि पति-पत्नी आठ वर्ष साथ रह लेते हैं तो उनके लिए यह एक बड़ी उपलब्धि है। ऐसे में पति, पत्नी को 'इंटरनिटी रिंग' भेंट कर इस अवसर को सेलिब्रेट करता है। भारत में आजीवन ही नहीं, जन्म-जन्मांतर एक साथ निभाने के संकल्प से कितनी विरोधाभासी ओर हास्यास्पद स्थिति है अमेरिकनों की यह आठ साला सभ्यता ! वहाँ व्यक्ति को अपनी कब्र की जगह, उसकी डिजाइन और कफन की क्वालिटी चुनने की सहूलियत है। कफन भी डिस्काउंट वाला मिल सके तो बेहतर। अमेरिका में बच्चा सहज रूप से रो भी नहीं सकता। कार में उसे कार सीट से इस तरह बाँधकर ले जाया जाता है कि रास्ते में ज्यादा शोरगुल न हो। वह शांति भंग न करे। अभिभावक बच्चों को न डाट सकते हैं, न पीट सकते हैं। ऐसा होने पर बेटे-बेटी अभिभावकों की ज्यादती के खिलाफ पुलिस को बुला सकते है। वहाँ मानसिक अयोग्यता का प्रमाण-पत्र प्राप्त कर सरकार से ढेर सारी सुविधाएँ प्राप्त कर मजे की जिदगी गुजारी जा सकती है।

बहरहाल भारत-अमेरिका के बहाने उपन्यास एक बड़े केनवास को अपने अंदर समेटे हुए है। यह कि क्या भौतिक सफलता ही सब कुछ है। मानवीय-मूल्यों का कोई महत्व नहीं ? इसे वेणु की डायरी कहा गया है, पर लगता है यह संस्मरणों ओर स्मृतियों का कोष भी है। क्रम आगे-पीछे होने के बावजूद उपन्यासकार ने इन तीनों तत्वों को इतनी कुशलता से गूँथा है कि वे एकमेक हो गए हैं। कहीं भी जोड़ दिखाई नहीं देते। ऐसी कहन और बनत अन्यत्र कम ही दिखाई देती है। सम्मोहक शैली, सर्वग्राही, पाठक में साक्षी भाव जगाने वाली नफीस भाषा ने यह काम आसान कर दिया है ! सूर्यबाला ने एक सर्जक की आँख पायी है। इसीलिए वे निज के एकांत को बाहरी दुनिया से जोड़ सकी है। वे अपने अंदर एक बड़ी दुनिया समेटे हैं। उपन्यास इसका प्रमाण है। कुछ स्थलों पर दोहराव के कारण कृति विस्तार पा गई है। बावजूद इसके पठनीयता बाधित नहीं होती। कृति से गुजरना अपने समय के बड़े सच से गुजरना हैं। स

81, बैराठी कॉलोनी-2, इन्दौर

पत्रकारिता के कुहासे के बीच रोशनी की एक किरण

डॉ. देवेन्द्र जोशी

भारत में प्रिंट, इलेक्ट्रॉनिक और न्यू मीडिया
संदीप कुलश्रेष्ठ
प्रकाशक : प्रतिभा प्रतिष्ठान,नई दिल्ली
मूल्य रू. 400/-

जिस मीडिया में समाज और कानून को बदलने की सामर्थ्य हमेशा से रही है आज वह खुद ही अपने अस्तित्व को लेकर संघर्ष के दौर से गुजर रही है। बाजारवाद ने उसे चेतना शून्य बना दिया है। मीडिया का प्रभाव कम होने लगा है। समाज में जो मूल्यहीनता आ है उससे मीडिया भी अछूता नहीं रही है। टीवी के विज्ञापन समाज को पतन की ओर ले जा रहे हैं सोचने-समझने की क्षमता नियोजित तरीके से खत्म की जा रही है। रामनीति और राजधानी की खबरों के बीच आम आदमी के मुद्दे लुप्त हो गए है। गांव,गरीब, किसान,आदीवासी,मजदूर,बेरोजगार आदि की खबरें मीडिया से नदारद है। भ्रष्टाचार रूप बदल कर नये -नये रूपों में सामने आ रहा है। राजधानी और महानगरों के पत्रकार और मीडिया के पास इस सबके बारे में सोचने के लिए समय नही है। अंचल के पत्रकार अपनी समस्याओं में इतने उलझे हुए है कि उन्हें खुद से ही फुरसत नहीं है। ऐसे में पत्रकारिता अपने पारंपरिक दायित्व का निर्वाह करे तो कैसे ? इस प्रश्न का जवाब तलाशने की कोशिश की है पत्रकार संदीप कुलश्रेष्ठ की पुस्तक -''भारत में प्रिन्ट, इलेक्ट्रॉनिक और न्यू मीडिया ने'' 8 खण्डो में प्रकाशित पुस्तक में प्रिन्ट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया को बेबाकी के साथ प्रस्तुत किया गया है। प्रथम खण्ड पत्रकारिता को समर्पित है। जिसमें पत्रकारिता के इतिहास,विश्व में पत्रकारिता का आरंभ और समाचार पत्र-पत्रिकाओं की भूमिकाओं पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। संचार माध्यमों पर केन्द्रित दूसरे खण्ड में पौराणिक काल से लेकर आज तक संवाद सम्प्रेषण की सिलसिलावार जानकारी प्रस्तुत की गई है। तीसरा खण्ड संचार माध्यम और तकनीक विकास पर आधारित है जिसमें पुरानी और वर्तमान प्रकाशन तकनीक की जानकारी परिश्रम पूर्वक जुटाई गई है। पत्रकारिता के वर्तमान स्वरूप की चर्चा सबसे महत्वपूर्ण तीसरे खण्ड में की गई है। इसके तहत पीत पत्रकारिता, व्यवसायिकता, पूंजीवादी व्यवस्था,समाचार पत्रों की वर्तमान स्थिति, पत्रकारिता में बढ़ता राजनैतिक हस्तक्षेप, छोटे समाचार पत्रों के साथ भेदभाव इलेक्ट्रॉनिक और न्यू मीडिया पर बढ़ती निर्भरता पर बेबाकी से कलम चलाई गई है। पत्रकारिता का मार्ग हमेशा से कंटकाकीर्ण रहा है। आज के दौर में विशुद्ध पत्रकार रहते हुए मूल्य और परंपराओं के साथ अपने पत्रकारिता दायित्व का निर्वाह करना कितना मुश्किल होता है। इसके दर्द को महसूस करते हुए संदीप कुलश्रेष्ठ ने अपनी पुस्तक के पांचवे खण्ड में की है। पत्रकारिता के मार्ग की बाधाओं पर विस्तार पूर्वक प्रकाश डालते हुए

उन्हांने शासकीय नीतियों का दुष्प्रभाव, प्रशासनिक असहयोग,प्रिन्ट मीडिया पर इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का दबाव, खर्चीली प्रकाशन तकनीक,नित नये समाचार पत्रों का प्रकाशन,योग्य एवं अनुभवी व्यक्तियों का अभाव आदि समस्याओं की ओर संजीदगी से ध्यान आकृष्ट किया गया है। मनुष्य के जीवन में मीडिया की भूमिका रेखांकित करते हुए 'लेखक की कलम से' में लेखक ने लिखा है - संवादो का परस्पर सम्प्रेषण मानव की एक मूलभूत आवश्यकता है, जो पौराणिक काल से वर्तमान काल तक किसी न किसी रूप में विद्यमान है। आवश्यकता आविष्कार की जननी है। अतः संवादो के परस्पर सम्प्रेषण कर इसकी आवश्यकता इसकी मानव को संचार के विभिन्न माध्यमों की खोज करने एवं उनका विकास करने के लिए प्रेरित किया है। मानवीय प्रयासों की इस परिणति के रूप में वर्तमान में संचार का क्षेत्र अत्यन्त आधुनिकतम से परिपूर्ण तथा उन्नत तकनीको पर बढ़ती निर्भरता के कारण इसका स्वरूप निखरता जा रहा है। एक समय था जब पत्रकारिता मिशन हुआ करती थी। आजादी के दौर में भारतीय पत्रकारिता का ध्येय स्वराज्य प्राप्ति रहा है। उसके बाद बाजारवाद पत्रकारिता पर हावी हो गया। आज पत्रकारिता धनाढ्य वर्ग ओर औद्योगिक घरानों का कवच बनकर रह गई है। पत्रकारिता में शिखर से सीढ़ी तक के इस पराभव की गहन पड़ताल करता है पुस्तक का छोटा खंड। जो पत्रकारिता के विभिन्न रूपों पर आधारित है। इसमें पीत पत्रकारिता, सामान्य पत्रकारिता ओर आदर्श पत्रकारिता पर सविस्तार प्रकाश डाला गया है। एक ओर जहां पत्रकारिता के आदर्श तत्वों की तलाश करते हुए निष्पक्षता,तटस्थता,समभाव, सत्यता, प्रमाणिकता, निःस्वार्थता, अनुशासन और शालीनता की चर्चा की गई है, तो दूसरी ओर पत्रकारिता के मार्ग में आई गिरावट के लिए जिम्मेदार कारको की चर्चा करते हुए आदर्श पत्रकारिता के मार्ग की बाधायें भी बताई गई है। अर्थसंकट, सहयोग का अभाव, असुरक्षा की भावना, प्रमाणिक और सत्यता की समस्या, व्यवसायिक मजबूरी, भेदभाव की भावना आदि को आदर्श पत्रकारिता के मार्ग की बाधा बताया है। अंतिम दो खंडों में पत्रकारिता के आदर्श स्वरूप और सामाजिक सरोकारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। पत्रकारिता के क्षेत्र में आने वाली नई पीढ़ी के लिए यह पुस्तक कितनी उपयोगी है। इसका अंदाजा राज्यसभा टीवी के कार्यकारी निर्देशक राजेश बादल के ब्लर्ब को पढकर सहज ही लगाया जा सकता है। वे लिखते है-'कल तक भारत में जिस मीडिया को पूर्णकालिक आमदनी का जरिया नहीं माना जाता था। आज वहीं दुनिया की सबसे बड़ी मीडिया इन्डस्ट्री बन गई है। अपने आप में यह एक चमत्कार से कम नहीं है। आज मीडिया की करीब-करीब सभी विधाओं का विस्तार मायावी ढंग से हुआ है। प्रिन्ट हो, ब्रॉडकास्ट, टेलीविजन या सोशल मीडिया- सभी में पेशेवरों की जबरदस्त मांग है। इसकी तुलना में आपूर्ति अत्यन्त कम।, बेरोजगारी के कारण बडी संख्या में नौजवान इस क्षेत्र में आते है। इन बेरोजगारों को तराशकर एक अच्छे मीडियाकर्मी में बदलने वाली टकसाल का अभाव है। ऐसे में लोकतंत्र के इस चौथे स्तंभ के लिए चुनौतियों का एक विराट जाल सामने है। कुहासे भरे माहौल में रोशनी की एक किरण की तरह संदीप कुलश्रेष्ठ इस पुस्तक को हमारे बीच लेकर आए है। जिसका स्वागत किया जाना चाहिए।? कुल मिलाकर प्रतिभा प्रतिष्ठान नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित इस पुस्तक में प्रिन्ट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के हर संभव पहलू की सघन पड़ताल करने की ईमानदार कोशिश की गई है। पत्रकारिता के नकारात्मक व्यवहारिक पक्ष की तुलना में उसके सकारात्मक सैद्धांतिक पक्ष को करीने से उभरा गया है। जिसके लिए संदीप कुलश्रेष्ठ बधाई के पात्र है।

85 महेश नगर, अंकपात मार्ग, उज्जैन
मो.9977796267

समावर्तन की वार्षिक सदस्यता हेतु

- समावर्तन की वार्षिक सदस्यता ग्रहण करने हेतु रूपये 600/- (व्यक्तिगत सदस्यता) तथा रूपये 1500/- (संस्थागत सदस्यता) हेतु नियत है जो मनिआर्डर से अथवा चेक से भेजे जा सकते हैं। चेक पर केवल 'समावर्तन' लिखना होगा। चेक और मनिआर्डर डॉ.प्रभातकुमार भट्टाचार्य, माधवी, 129, दशहरा मैदान, उज्जैन 456010 के पते पर भेजना होगा।
- समावर्तन की वार्षिक व्यक्तिगत अथवा संस्थागत सदस्यता का शुल्क डिजिटल माध्यम से भी भुगतान किया जा सकता है। जिसके लिए बैंक डिटेल्स निम्नानुसार है।
  बैंक का नाम - आयडीबीआय, ब्रांच का नाम - फ्रीगंज ब्रांच, उज्जैन, खाता क्रमांक - 0088102000031620, खातेदार का नाम- समावर्तन
  आयएफएससी नं.- आयबीकेएल 0000088
- डिजिटल एवं चेक/मनिआर्डर से भुगतान करने पर तदनुसार पत्र द्वारा सूचित करने का कष्ट करें।

संपादक, समावर्तन, उज्जैन - संपर्क - 94259-15010

नई किताबें

श्रीराम दवे

सिन्ध की संस्कृति और सर्जना का जीवन्त दस्तावेज

सिन्ध : इतिहास, संस्कृति और साहित्य
रश्मि रमानी
राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत
मूल्य : रू.500/-

आलिफ़ के अलावा/शेष सब भूल जाओ
साफ़ मन से बढ़कर/कोई पढ़ाई नहीं है।

कविता का यह अंश सिन्ध के महाकवियों की त्रिमूर्ति में से एक शाह लतीफ का है। जो इस बात का सूचक है कि एकत्व और निर्मलत्व का चिन्तन तब अपने शीर्ष पर था। दरअसल यह साहित्य और संस्कृति ही है जो किसी भी भू-खण्ड और कालखण्ड को उसकी वास्तविकता में परिभाषित करती है। भारत का गौरव रहा सिन्ध प्रदेश एक ऐसा ही भूखण्ड रहा है जो अपनी समृद्ध संस्कृति, प्राकृतिक सुषमा और संघर्षशीलता से एक ऐसा इतिहास रचने में सक्षम हो सका जिस पर गर्व किया जाना चाहिए।

विदुषी लेखिका कवयित्री और अनुवादक रश्मि रमानी जी ने अत्यन्त श्रम और समर्पण के साथ 'सिन्ध-इतिहास संस्कृति और साहित्य' जैसी शोधपरक कृति का प्रणयन कर निश्चित ही एक महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। लगभग 8 शताब्दी पुराने ज्ञात-अज्ञात इतिहास में अवगाहन कर रश्मि जी ने न केवल सिन्ध से हिन्द बने प्रदेश और देश और हिन्द से हिन्दी बनी भाषा के उत्स पर विस्तार से प्रकाश डाला है बल्कि सिन्ध में रहने वालों के रहन सहन, भाषा बोली, खान-पान, राग-रंग, धर्म-आस्था, लोकगीत, पूजा-पद्धति, पठन-पाठन आदि पर विस्तार से चर्चा की है। साथ ही इस दौर के महत्त्वपूर्ण भक्तों, कवियों और सर्जकों के सृजन चिन्तन से भी परिचित कराने का साधु कार्य किया है। जिस त्रयी का उल्लेख उपर किया गया है उसमें शाह लतीफ के अलावा सचल सरमस्त और चैनराम सामी के दार्शनिक सृजन विशेषकर काव्य को हिन्दी के पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने का काम भी इस कृति में हुआ है। कृति में शाह लतीफ की अमर कृति 'शाह जो रिसालो' में संग्रहीत और प्रेम की पराकाष्ठा में आकंठ डूबे सात किस्सों का विशेष रूप से उल्लेख किया है ये किस्से हैं- बीजल-रायडिवाच, लीला-चनेसर, उमर-मारुई, मूमल-राणो, नूरी-जामतमाची, सुहिणी-मेहार, ससुई-पुन्हूँ। इन सातों प्रेमकथाओं में निश्छल प्रेम तो वर्णित हुआ ही है तत्कालीन सिन्ध की सामाजिक राजनीतिक और सांस्कृतिक दृष्टि भी प्रकाश में आयी हैं। यह सही है कि लेखिका ने समकालीन सिन्धी साहित्य के सृजन को उल्लेखित करना अपना लक्ष्य नहीं बनाया किन्तु बात जब सिन्धः इतिहास संस्कृति और साहित्य की हो रही हो तो कमोबेश सभी पक्षों का संक्षेप में ही सही, उल्लेख होना चाहिए। यह इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है कि माना कि हमारा अतीत अत्यन्त गौरव गरिमा से युक्त था किन्तु वर्तमान में सृजन की बेलों में कितने फूल आये या सृजन और सर्जक की परम्परा आगे बढ़ी अथवा नहीं इसका उल्लेख भी होना चाहिए था।

कृति के अंत में 'यात्रा संस्मरण' एक उल्लेखनीय सोपान है जिसमें पाकिस्तान में फैले सिन्ध प्रदेश के वर्तमान में लेखिका का करांची कान्फ्रेन्स में अदीबों के साथ शिरकत करना प्रमुख है। लेखिका द्वारा किया गया काव्यपाठ का यह अंश भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है- *नक्शा नवीस ने उठाई कलम/जमीन के नक्शे के बीच खींची रेखा/और कहा ये हिन्दुस्तान/ये पाकिस्तान/मजदूर ले आए काँटेदार तार/सरहद पर खड़ी की बागड़/ ये तेरा घर ये मेरा आंगन/घड़ी भर में ही साथ-साथ रहने वाले/हो गए सीमा पार!* लेखिका की यह पीड़ा सार्वभौम है क्योंकि बंटवारा बहुत कुछ बांटकर रख देता है। इस बंटवारे ने ही एक महान संस्कृति को समाप्त प्रायः करने की कोशिश की है जबकि इसका बचा रहना पल्लवित और पुष्पित होते रहना निकट अतीत के लिए आवश्यक था और निकट भविष्य की जरूरत भी रहेगी ही -वर्तमान के लिए तो आवश्यक है ही! अनेक संदर्भों से युक्त और एक स्पन्दित होती संस्कृति को अपने में समेटे यह कृति संग्रहणीय और पठनीय है!

प्रेम का नया मुहावरा

युवा कवि अरुण ठाकरे का कविता संग्रह 'इतिहास का चाकू' किसी खून खच्चर या मारपीट का औजार नहीं है बल्कि इससे परिवेश में मौजूद विसंगतियों को खुरचने का उपक्रम किया गया है। बावजूद इसके दृश्य और अदृश्य प्रेम से अभिभूत कवि का मन कभी संशय के हिंडोले में जा बैठता है तो कभी हकीकत के सिंहासन पर। यह अलग बात है कि 'आत्ममुग्ध' सा वह कभी 'बारिश बनकर बरसना चाहता है' तो कभी 'पूर्णता' की तलाश में 'अपराधी' बन 'मन युधिष्ठिर' को आकाश में उड़ा देता है। फिर भी 'वक्त' 'प्रेम की आहट' के आभास से ही गा उठता है - 'नहीं होना चाहता मुक्त।' कवि की अपेक्षाएं स्वागत योग्य तो हैं ही प्रेरक भी है। धूप, बरसात, चांदनी और आग बनकर जरुरतमंदों तक पहुँचने की उनकी काव्य पंक्तियाँ उनकी गलदश्रु भावुकता में पगी हुई नहीं होकर - एक विशेष प्रकार की सामाजिक जिम्मेदारी से आपूरित है। *मैं आग बन/ धधकना चाहूंगा/ उन लोगों में/ जो ठंडे पड़े हैं/ सह रहे हैं/ जुल्म सदियों से* संग्रह की भूमिका में रश्मिरमानी जी की इस कथन की ताईद की जाना चाहिए कि - ''समय और समाज की व्याख्या करते समय इन कविताओं में दुख भले ही हो किन्तु कटुता नहीं है।''

अपनी कई कविताओं में प्रेम के नए पुराने मुहावरों को गढ़ने वाले इस कवि की कविताओं को पढ़ा जाना चाहिए।

इतिहास का चाकू (कविता संग्रह)
अरुण ठाकरे
बोधि प्रकाशन, जयपुर
मूल्य : रू.100/-

26, निर्माण नगर (रवीन्द्र नगर के पास)
उज्जैन (म.प्र.) मो.9425915010

कथाकार श्री सूर्यकांत नागर का सम्मान

मुम्बई। खार घर चौपाल (नवी मुम्बई) द्वारा आयोजित लघुकथा संगोष्ठी में गत दिनों वरिष्ठ साहित्यकार सूर्यकांत नागर (इन्दौर) का पुष्पहार, शाल, श्रीफल आदि भेंट कर सम्मान किया गया। अपने भाषण में श्री नागर ने कहा कि जीवन के विराट सत्य की बारीक बुनावट है लघुकथा। संक्षिप्त होते हुए भी वह अपनी ताकत दूर तक फैलाती है वहां अनावश्यक विस्तार की न आवश्यकता है, ना गुंजाइश। लघुकथा में जो अनकहा रखा जाता है, वही कहे गए की ताकत है। इस अवसर पर वन्दना श्रीवास्तव, चंद्रा व्यास प्रकाश पांडेय, अशोक प्रीतमानी, मनोहर अभय, राघवेंद्र तिवारी, डॉ.सतीश शुक्ल, हेमंत दास 'हिम', सिराज गौरी आदि ने अपनी रचनाओं का पाठ किया। अध्यक्षता कवि-कथाकार विजय भटनागर ने तथा संचालन सेवा सदन प्रसाद ने किया। आभार डॉ.सतीश शुक्ल ने माना।

प्रस्तुति - हेमन्तदास हिम

अमेयकान्त को प्रथम दिनकर सम्मान

उज्जैन। गत दिनों सुप्रसिद्ध कवि-गायक स्व.दिनकर सोनवलकर की

स्मृति में उज्जैन संभाग के आयुक्त अजीत कुमार के प्रमुख आतिथ्य, प्रेमचंद सृजनपीठ के निदेशक श्री जीवनसिंह ठाकुर के विशेष आतिथ्य एवं पुलिस महानिरीक्षक श्री राकेश गुप्ता की अध्यक्षता में देवास के युवा कवि श्री अमेय कान्त को प्रथम दिनकर सृजन सम्मान प्रदान किया गया। इस अवसर पर 'इक्कीसवी सदी में हिन्दी और हम' विषय पर आयोजित निबंध प्रतियोगिता के विजेताओं को पुरस्कार भी वितरीत किये गये। अतिथि वक्ता डॉ.देवेन्द्र जोशी थे। संस्था परिचय डॉ.पंकजा सोनवलकर ने दिया। कार्यक्रम में प्रमुख रूप से प्रो.प्रमोद त्रिवेदी, डॉ.शिव चौरसिया, डॉ.शशि जोशी, श्री प्रकाशकान्त, मनीष वैद्य, बहादुर पटेल, संदीप नाईक, विक्रमसिंह गोहिल (देवास) सहित नगर के अनेक सुधीजन उपस्थित थे। कार्यक्रम का संचालन पद्मजा रघुवंशी द्वारा किया गया।

प्रस्तुति -आलोक गुप्ता

क्षितिज का लघुकथा समग्र सम्मान कांताराय को

इन्दौर। गत दिनों लघुकथा लेखन और उसके संवर्द्धन में महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही श्रीमती कांताराय (भोपाल) को इन्दौर की संस्था 'क्षितिज' द्वारा ''लघुकथा समग्र सम्मान 2019'' प्रदान किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्रीमती पवित्रा अग्रवाल ने की। अतिथि वक्ता के रूप में श्रीमती लता अग्रवाल ने कहा कि लघुकथा के संवर्द्धन में कई संस्थाएं और पत्र-पत्रिकाएँ अहर्निश काम कर रही है जो निश्चित ही स्वागत योग्य है। संस्था अध्यक्ष श्री सतीश राठी ने अतिथियों का स्वागत किया तथा संस्था का परिचय दिया। इस अवसर पर

कई लघुकथाकार एवं नगर के गणमान्य लोग उपस्थित थे। कार्यक्रम का संचालन दीपा मनीष व्यास ने किया तथा आभार माना जितेन्द्र गुप्ता ने।

प्रस्तुति - सतीश राठी, इन्दौर

भरतचन्द्र शर्मा को पुरस्कार

इन्दौर। गत दिनों राजस्थान पत्रिका सृजनात्मक साहित्यकार पुरस्कार राजस्थान पत्रिका के प्रथम कार्यालय के प्रांगण में आयोजित पं.झाबरमल स्मृति व्याख्यान समारोह के अन्तर्गत पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त श्री ओ.पी.रावत के मुख्य आतिथ्य में बांसवाड़ा (राजस्थान) के कथाकार श्री भरतचन्द्र शर्मा को द्वितीय पुरस्कार प्रदान किया गया। इस अवसर पर पत्रिका के वरिष्ठ उप संपादक श्री भुवनेश जैन सहित कई गणमान्य लोग उपस्थित थे। ज्ञातव्य है कि श्री भरतचन्द्र शर्मा को पुरस्कार स्वरूप शाल श्रीफल, प्रशस्ति पत्र एवं ग्यारह हजार रूपये नगद दिया गया। कहानी, कविमय यह पुरस्कार उन्हें उनकी कहानी 'गोद भराई' पर दिया गया है। कहानी का विषय राजस्थान के 'वागड़' क्षेत्र की एक कुरीति और स्वांग के खिलाफ कथा नायिका के साहस को प्रदर्शित कर कहानी को लोक रंजक और प्रेरक बनाता है।

प्रस्तुति - डॉ.दीपक आचार्य राजसमन्द (राज.)

कथाकार लता अग्रवाल पुरस्कृत

इन्दौर। देवपुत्र बाल मासिक पत्रिका की ओर से आयोजित ग्राम्य जीवन पर आधारित अखिल भारतीय बाल कहानी प्रतियोगिता में भोपाल की वरिष्ठ साहित्यकार डॉ.लता अग्रवाल की कहानी 'कबीट वाली नानी' को 'परशुराम शुक्ल पुरस्कार' से पुरस्कृत किया गया। डॉ.लता अग्रवाल को यह पुरस्कार, इन्दौर देवपुत्र द्वारा आयोजित दो दिवसीय राष्ट्रीय महिला बाल साहित्यकार सम्मेलन में प्रदान किया गया। इस अवसर पर अतिथि साहित्यकारों के साथ स्वयं डॉ.परशुराम शुक्ल भी उपस्थित थे।

स्पंदन संस्था भोपाल में सम्मानों की घोषणा

भोपाल। ललित कलाओं के लिए समर्पित स्पंदन संस्था भोपाल की ओर से स्थापित सम्मानों की घोषणा कर दी गई है। वर्ष 2018 का 'स्पंदन कथा शिखर सम्मान' हिन्दी के वरिष्ठ साहित्यकार श्री असगर वजाहत को प्रदान किया जायेगा। 'स्पंदन कृति सम्मान' कविता संग्रह 'केवल कुछ वाक्य' के लिए कवि श्री उदयन वाजपेई को, 'स्पंदन कृति सम्मान' उपन्यास 'अकाल में उत्सव' के लिए श्री पंकज सुबीर को, 'स्पंदन आलोचना सम्मान' श्री महेश दर्पण को, स्पंदन ललित कला सम्मान' रंग कर्म के लिए श्री आलोक चटर्जी को, 'स्पंदन साहित्यिक पत्रिका सम्मान' व्यंग्य यात्रा के लिए श्री प्रेम जनमेजय को तथा 'स्पदन युवा पुरस्कार' थिवई थियाम को देने का निर्णय सर्वानुमति से किया गया है। ये सभी सम्मान इसी माह के अंतिम सप्ताह में भोपाल में आयोजित एक समारोह में प्रदान किये जायेंगे।

प्रस्तुति - उर्मिला शिरीष, संयोजक

श्री रमेश दीक्षित दिल्ली में सम्मानित

उज्जैन। वरिष्ठ पत्रकार, लेखक, सम्पादक श्री रमेश दीक्षित को गत माह नईदिल्ली की हॉटेल ला मेरीडिअन में एक गरिमामय समारोह में भरतपुर (राज.) की विदुषी समाजसेवी श्रीमती सन्तोष कुलश्रेष्ठ कुमार की जीवनी पर अंग्रेजी में 'मदर टेरेसा ऑव शिकागो : सन्तोष कुमार एक सौ पृष्ठीय आकर्षक बहुरंगी पुस्तक के लेखन व सम्पादन के लिए सम्मानित किया गया। उल्लेख्य है कि संतोष कुमार जी शिकागो (अमेरिका) में दक्षिण-पूर्व ऐशियाई देशों के दस हजार वृद्ध व वरिष्ठजनों की 18 केन्द्रों के माध्यम से 20 वर्षों से सेवा कर रही है। शिकागो में भारत की काउंसल जनरल सुश्री नीता भूषण ने इन्हें 'मदर टेरेसा ऑव शिकागो' उपाधि से विभूषित किया है।

सर्वोच्च न्यायालय के अति.चीफ जस्टिस श्री अनिल दवे के मुख्य आतिथ्य में आयोजित समारोह में पूर्व राजदूत श्री अरुणकुमार, पूर्व काउंसल जनरल शिकागो श्री अशोककुमार अत्री, श्री रियाज पंजाबी, कुलपति कश्मीर विश्वविद्यालय, जस्टिस पी.एन.पाराशर, जस्टिस भँवर जी आदि गणमान्य अतिथियों ने सम्बोधित किया। श्री दीक्षित ने सम्पादकीय वक्तव्य दिया।

प्रस्तुति : डॉ.केदारनारायण जोशी

अन्तर्राष्ट्रीय समारोह में खुशबू की नृत्य प्रस्तुति

उज्जैन। गत दिनों हैदराबाद में इंटरनेशनल परफार्मिंग आर्ट एंड फेस्टिवल आयोजित किया गया। जिसमें देश-विदेश के चुनिंदा कलाकारों को प्रस्तुति के लिए आमंत्रित किया गया था। इस फेस्टिवल में शहर की नृत्यांगना खुशबू पांचाल ने आंखों पर पट्टी बांधकर गांधारी के किरदार में नृत्य की प्रस्तुति दी। नृत्य निर्देशन डॉ.पूनम व्यास ने किया। 30 मिनट की इस प्रस्तुति में महाभारत की किरदार गांधारी के जीवन वृत्तांत को मंच पर नृत्य के माध्यम से प्रस्तुत किया। पहली बार हुई इस तरह की प्रस्तुति के लिए उन्हें सम्मानित भी किया गया। ज्ञातव्य है कि सुश्री खुशबू पांचाल ने पहले भी कई ख्यात समारोहों में अपनी बेमिसाल नृत्य प्रस्तुतियों से प्रेक्षकों की सराहना अर्जित की है।

अनंतिम

पिछली बार हमने हिन्दी कहानी के उद्‌भव और धीरे धीरे केन्द्र में आ जाने पर चर्चा की थी। अब हम आज की कहानी यानि समकाल की कहानी पर बात करेंगे जो निस्संदेह अपनी विरासत और परम्परा से नाभि-नाल संबंध से जुड़ी है और यह समय शुरू होता है सन् 1990 के उस महत्वपूर्ण मोड़ से जिसने हिन्दोस्तान के जन-जन को अनेक स्तरों पर बहुत व्यापक रूप से और गहराई से प्रभावित किया। इस दौरान आए आर्थिक-राजनैतिक बदलावों के नतीजों में सामाजिक, सांस्कृतिक क्षेत्रों में ज्यादा महत्वपूर्ण तथा गंभीर परिवर्तन होने लगे जिनकी कल्पना पहिले नहीं की जा सकती थी और देखते ही देखते समाज की दशा-दिशा ही बदल गई। ये परिवर्तन इतनी तेज गति से हुए, तीव्र आघात देते हुए कि ना केवल सांस्कृतिक मूल्य बदले, सामाजिक रिश्तों की परिभाषा बदली बल्कि आम जन की जीवन-शैली में आद्योपांत बदलाव और विचलन सहज और स्वाभाविक दिखने लगे। यह समय अभी भी जारी है इसलिए कहानी की आज की स्थिति और उसके नए आयामों की संभावनाएँ टटोलने के लिए आज समय और समाज की विशिष्ट विशेषताओं का उल्लेख जरूरी है।

1) तकनीक (टैक्नालॉजी) के तेज और विस्मयकारी अनुसंधानों से और उनके सुरसा जैसे फैलाव में आम जन को गिरफ्त में लेने के बाजारी उद्‌देश्यों ने हलचल मचा दी, परिणामतः उपभोक्तावाद को आराम से पसरने की जगह मिली और सम्मानपूर्ण मिली क्योकि जो मध्यम वर्ग अभी तक सीमित था, तथा-कथित सम्पनता के चलते तेजी से फैलने लगा कि उसकी हैसियत बाजार में एक बड़े शिकार के रूप में पहिचानी जाने लगी।

2) इस हलचल को बढ़ाया भूमंडलीकरण, आर्थिक उदारवाद, खुले बाजार की नीति आदि ने जिनके तहत मनुष्य को एक प्रोडक्ट के रूप में परिणित करने या उसको सिर्फ ग्राहक तक सीमित बनाकर इस तरह का वातावरण रचा जाने लगा कि मनुष्य और प्रकृति के संबंध, उसके परम्परा से संबंध, उसके अभी तक अर्जित जीवन मूल्यों से संबंध, समाज और संस्कृति से संबंध, यहाँ तक कि मनुष्य के मनुष्य से, उसके परिवार से अब तक के आत्मिक संबंध बुरी तरह प्रभावित हुए। समाज में संबंधो की विक्षिप्तता की स्थिति निर्मित होने से जो आईन्डिटी क्राईसिस धीरे धीरे घर कर रहा था, तेजी से केन्द्र में आ गया जिससे समाज में बिखराव को उत्साहपूर्वक स्वीकार्यता मिली।

3) सन् 1992-93 में सोवियत रूस की शासन-व्यवस्था के पतन के बाद वामपंथी विचारधारा को गहरा धक्का लगा। ऐसा सोचा ना गया था जैसा कि हो गया। भारत के मोहभंगों के इतिहास में सन् 1963-64 के बाद यह एक दूसरा मोहभंग था। अधिकांश कथाकार- साहित्यकार एक दिवास्वप्न में जी रहे थे और उनके पास समस्याओं के समाधान, कठिनाईयों के निदान और वैचारिक प्रगतिशीलता की पहिचान के लिए एक बड़ा और आक्रामक हथियार वामपंथी विचारधारा के रूप में था और आज वही ना रहा। एक ऐसा प्रबल-प्रमुख आधार टूट गया जिसके बल पर वे व्यवस्था का विरोध कर पाते थे जबकि पूंजीवादी और प्रतिक्रियावादी ताकतों का खेल जोर शोर से बखूबी अपने पंख फैला रहा है।

4) विरोध और प्रतिरोध की उलझनें इस कदर बढती चली गईं कि इस नये संकट का मुकाबिला किस तरह किया जाए, समझ के बाहर हो रहा है। उलझन यह कि चीन का दामन पकड़ना भारत की जनता को रास नहीं आयेगा क्योंकि देश आज भी उसे दोस्त नहीं मानता है और इस कड़वे सच को विचारधारा के किसी खरल में घोंटना भी कठिन है क्योंकि फिर साम्यवाद के भेस में चीन का विशुद्ध पूंजीपति चरित्र अजब झंझट में फंसाता है और विचारधारा को लेने के देने पड़ सकते हैं।

5) भूमंडलीकरण और आर्थिक उदारवाद की पूंजीवादी प्रक्रिया के तहत विकास की आधुनिकता की आंधी में जो नई व्यवस्था बन रही है, समाज जिस तरह विखंडित हो रहा है, परम्परायें नष्ट हो रही हैं, मूल्य तहस-नहस हो रहे हैं, लोगों के आत्म-केन्द्रित लालच बढ़रहे हैं, उन चुनौतियों का प्रतिकार दो ही प्रकार से किया जाना समझ में आता है, एक वामपंथी विचारधारा और शुद्ध साम्यवादी व्यवस्था या फिर गांधीवादी। बीसवीं सदी ने ये दो तरीके पेश किए। समय की कसौटी पर पहिला अस्त्र असफल हो गया। दूसरा गांधीवाद का रास्ता कठिन हैं, हालांकि आदमी के लालच को काबू में रखने, प्रकृति से तादात्म्य स्थापित करने और समाज को शांति के मार्ग पर प्रशस्त रहने के लिए गांधीवाद ही एक मात्र प्राकृतिक मार्ग दिखाई देता है लेकिन मुश्किल यह कि गांधीवाद के सिद्धांत कठोर और आचरण कठिन है। बरसों के मतिभ्रम के अभ्यास के बाद गांधीवाद को अपनाने की ग्रहणशीलता ही समाज में नहीं है, बल्कि उपभोक्तावाद से अभिभूत ऐसे विरोधाभास सामने आए हैं जो किसी विचार को विमर्श ही नहीं बनने देते। उदाहरण के लिए एक तरफ बिजली के अनियंत्रित उपयोग की जबर्दस्त इच्छा और दूसरी ओर परमाणु बिजलीघरों का विरोध। दोनों एक साथ कैसे चल सकते हैं ? जो इन बिजली घरों का विरोध व्यापक मानव-हित में करते हैं, वे जनता को उनकी उपभोक्तावादी प्रवृत्तियों पर रोक लगाने का शिक्षण देने से बचते हैं क्योंकि राजनैतिक निहितार्थ ऐसे हैं कि जनता को किसी भी कीमत पर नाखुश और नाराज नहीं किया जा सकता। बेहतर है कि मतिभ्रम फैलता रहे, यह सुविधा का रास्ता है। राजनैतिक लोगों की इन चालाकियों को लेखकों ने भी दास-भाव से स्वीकार किया क्योंकि बिना राजनैतिक आश्रय के उन्हें अपना गुजारा नहीं दिखता। यह विडम्बना इतनी गहरी है कि प्रगतिशील मूल्यों के प्रति प्रतिबद्ध लेखक भी आधुनिक तकनीक के नये से नये उपकरणों का व्यक्तिगत तौर पर इस्तेमाल अधिक से अधिक करता है और जब लिखने बैठता है तो विरोध के स्वर फूटने लगते हैं। यह पाखंड जीवन से छनकर साहित्य में गिरता है तो साहित्य ना तो प्रभावित करता है और ना ही प्रेरित कर सकता है। अब तक जिस विचारधारा के आँचल में सुरक्षित जीवन काटा, उसी के फटे-चिथे में मुँह ढकना मुश्किल हो रहा है ! *किसी शायर का शे'र है कि "जो शमां जलाने आए थे, वे शमां बुझाकर चले गए।"*

6) यह वैचारिक बिखराव और उससे उपजता संकट इस समय की सबसे बड़ी पहिचान है। इसी कारण विकास के मॉडल को लेकर दुविधा है। हम अपने समय में देश और समाज को कैसा बनाना चाहते हैं, यह ना तो बुद्धिजीवियों के वैचारिक स्तर पर तय हो पा रहा है और ना ही सामाजिक-सांस्कृतिक स्तर पर। बीसवीं सदी में राजनीति को परिवर्तन का औजार मान लिया गया था लेकिन वह अब खुद अपने विग्रहों में इस तरह फँस चुकी है कि उससे बदलाव की कोई उम्मीद नजर नहीं आती। आजादी के दौरान हासिल किए गए आदर्शों और मूल्यों की बातें खुले आम हास्य-कविता के विषय हो गए हैं और जिन्हें निंदनीय प्रवृत्तियाँ कहा जाता था, उन्हें उतने ही गर्व-भाव और ईर्ष्या से निहारा जाता है। अजब समय है जब समाजवादी जातिवादी, हो गए, वामपंथी पूंजीवादी हो गए, राष्ट्रवादी - साम्प्रदायिक, एकता के समर्थक - क्षेत्रीयतावग्रस्त, संत लोग - राजनैतिक, सेवक - शासक हो गए। जातिगत विभेद और धार्मिक हिंसा का उन्माद तेजी से बढ़रहा है। इनके परिणाम सुनिश्चित हैं सो देश टूट रहा है, समाज बिखर रहा है और आम जन निराश हो रहे हैं और इन सब के बीच लेकिन अलग-थलग पड़ा लेखक अवाक् और किंकर्तव्यविमूढ़ है !

अभी आगे और भी ऐसे महत्वपूर्ण बिन्दु हैं जिन पर हम चर्चा करेंगे लेकिन अगले अंक में। फिलहाल तो इतना ही। तब तक के लिए आपसे विदा।

मुकेश वर्मा

मोबाइलः 94250-14166

www.electroniki.com

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

इलेक्ट्रॉनिकी अपके लिये' इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नये तकनीकी विषयों में हो रहे नित–नूतन परिवर्तनों से हिन्दी में लोगों विशेषकर बच्चों को अवगत कराने वाली देश की पहली हिन्दी पत्रिका है। इसका प्रकाशन वर्ष 1988 से लगातार किया जा रहा है पिछले 30 वर्षों से पत्रिका सतत् रूप से प्रकाशित हो रही है। पत्रिका की लगभग 40,000 प्रतियां प्रतिमाह निकलती हैं।

मूल्य : प्रति अंक ₹ 40   वार्षिक ₹ 480

अंतिम पृष्ठ 24X18 CM	Colour	₹ 10,0000
पिछला पृष्ठ 24X18 CM (कवर–3)	Colour	₹ 80,000
भीतरी पृष्ठ 24X18 CM (कवर–2)	Colour	₹ 80,000
संपूर्ण पृष्ठ 24X18CM	Black/White	₹ 40,000
अर्ध पृष्ठ 12X18 CM 24X9 CM	Black/White	₹ 30,000
एक चौथाई 6X9 CM	Black/White	₹ 20,000

संपूर्ण पृष्ठ 24X18 CM
अर्धपृष्ठ 12X18 CM
अर्धपृष्ठ 24X9 CM
एक चौथाई 6X9 CM
अंतिम कवर 24X18 CM
भीतरी कवर 24X18 CM

महत्वपूर्ण बिंदु

- विज्ञापन प्रत्येक माह की 30 तारीख तक भेजा जाना अनिवार्य है।
- विज्ञापन PDF या JPEG फार्मेट में भेजा जा सकता है

पुरस्कार

छत्तीसगढ़ के राज्यपाल महामहिम श्री ई. एस. एल. नरसिम्हन पत्रिका को अक्टूबर 2009 में 'राष्ट्रीय राजभाषा शील्ड सम्मान' प्रदान करते हुये

प्रमुख उप–संपादक विनीता चौबे दुष्यंत कुमार स्मारक पाण्डुलिपि संग्रहालय द्वारा ''भारतेन्दु पुरस्कार'' प्राप्त करते हुये

पत्रिका को अक्टूबर 2009 में 'राष्ट्रीय राजभाषा शील्ड सम्मान' से पांडिचेरी के ले. गवर्नर श्री इकबाल सिंह द्वारा सम्मानित किया गया

संपादक संतोष चौबे 'रामेश्वर गुरु पुरस्कार' प्राप्त करते हुये

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें

आईसेक्ट पब्लिकेशन

स्कोप कैम्पस, एन. एच. 12, होशंगाबाद रोड, मिसरोद से आगे, भोपाल–462047, फोन : +91-755-2432948

25/ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, भोपाल – 462011, फोन : +91–755–6766139
ई–मेल : aisectpublications@aisect.org
वेबसाईट : www.aisectpublications.org

दिल्ली ऑफिस
813–814, इंटरनेशनल ट्रेड टॉवर, नेहरु प्लेस, नई दिल्ली–110019,
फोन : +91-11-40526727, 41066728, ई मेल : aisectdelhi@aisect.org